ISSN - 2277 - 3428

ELIXIR

Peer Reviewed National Journal of Multidisciplinary Research

Journal

March 2026

Vol. IX-C

Published By : Shri Sachhidanand Shikshan Sanstha, Nagpur.

TAYWADE COLLEGE

(ARTS, COMMERCE & SCIENCE)

Mahadula-Koradi, Tah. Kamptee, Dist, Nagpur. (MS) India

E-mail : contact@taywadecollege.edu.in | Website : taywadecollege.edu.in

TAYWADE COLLEGE

Managing Editor
Dr. Mrs. S. B. Taywade, Principal
Taywade College, Koradi.

Editor

Dr. C. S. Bhaskar
Professor, Dept. of Chemistry
Taywade College, Koradi.

Associate Editors

Dr. Mrs. Varsha Vaidya
Dr. V. T. Sheikh
Dr. Suvarna Patil
Dr. Girish Katkar
Dr. R. R. Watane
Dr. S. R. Daware

Editorial Consultants

Dr. P. D. Nimsarkar, Head Dept. of linguistic
Dr. D. B. Thakre, Dept. of Microbiology, K.V. Patil College, Vashi, Navi Mumbai.
Dr. Madhukar Wakode, Dept. of Marathi, Amravati.
Dr. Mangala Hirwade, University Dept. of Lib. Science, Nagpur.
Dr. K. C. Deshmukh, Dept. of Mathematics R.T.M. University, Nagpur.
Dr. Kiran Nerkar, Dept. of Comm. Womens College, Nagpur.
Dr. V. P. Rasam, Dept. of Political Science, Shivaji Uni. Kolhapur.
Dr. G. S. Mane, Dept. of History, Sant Gadge Baba Amravati Uni.
Dr. B. C. Vaidya, Dept. of Geography, Pune University.

Disclaimer: The publisher is not responsible for the findings or opinions expressed in the paper.

Liability: Authors bear full responsibility for the content, accuracy, and original research; the publisher serves solely as the hosting and distribution platform.

TAYWADE COLLEGE

AADVAY MULTIPURPOSE FOUNDATION
F-7374(GDC)

One - Day International Interdisciplinary Conference – 2026

On

Emerging India: Transitions in Politics, Society, Economy and Administration

Jointly Organized by

Shree Sachhidanand Shikshan Sanstha, Nagpur

Taywade College, Mahadula – Koradi and

Aadvay Multipurpose Foundation

Saturday 28th March 2026

Patrons

Dr. Baban B. Taywade
President,
Shri Sachhidanand Shikshan Sanstha , Nagpur

Dr. Sharyou Taywade
Principal,
Taywade College, Mahadula – Koradi

Conference Director

Prof. (Dr.) Varsha Vaidya
In-Charge, Faculty of Humanities,
Taywade College, Mahadula-Koradi

Convenor

Dr. Chandrashekhar Gitte
Head, Dept. of Public Administration,
Mahila Mahavidyalay, Nandanwan, Nagpur

Convenor

Prof. (Dr.) Vakil Shaikh
Head, Dept. of Political Science,
Taywade College, Mahadula – Koradi

Coordinator

Dr. Bhupendra Gharat
Vice - President,
Aadvay Multipurpose Foundation

Mr. Raman Shiwankar
Asst. Professor, Dept. of Public Administration
and LSG, RTM Nagpur University

Organizing Secretary

Prof. (Dr.) Sharad Daware
Head, Dept. of History,
Taywade College, Mahadula – Koradi

Dr. Pramod Kanekar
Asst. Professor, Dept. of Political
Science, RTM Nagpur University

Mr. Upendra Bagul
Asst.Professor, Department of Economics,
Mahila Mahavidyalay, Umred

Dr. Nitin Kayarkar
President
Access Foundation

Venue - Taywade College, Mahadula – Koradi , Dist - Nagpur

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

अ.क्र.	लेख का नाम	लेखक	पृष्ठ क्र
१	स्थानीय स्वशासन और राजनीतिक व्यवस्था में मतिलाओं के लिए आरक्षण	डॉ जे. जी. चौहान	१
२	२१ वी सदी में भारत–अमेरिका संबंधःनागरिक परमाणु सहयोग की बदलती गतिशीतला	प्रमोद डी. काणेकर	८
३	अठारहवीं शताब्दी में प्रारंभ नागपुर का उदयः मध्य भारत की शक्ती–संरचना में ऐतिहासिक स्थापना राजनीतीक परिवर्तन एवं सामाजिक रूपांतरण का अध्ययन	ऋषी कुमार बिसेन प्रा. डॉ.शामराव कोरेटी	१९
४	भारत के लोकतंत्र के सामने सुनौतियां और भविष्य की संभावनाए	Dr Samina Perween	२९
५	जनजातिय विकास में लोक सेवा केंद्रो की भुमिका (मध्य प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों के विशेष संदर्भ में)	डॉ. नियाज अहमद अंसारी लक्ष्मण डाबर	४४
६	वैष्विक पहचान और प्रवासी भारतिय संस्कृती के संदर्भ में	सुरेश ननोमा	५४
७	हाशिये की पुकारः वंचित वर्गो की सामाजिक और साहित्यिक आवाजें	प्रकाश चंद्र बामनियाँ	६३
८	हिंदी साहित्य में आदिवासी अस्मिता और जीवन–संघर्ष : हाशिये से केंद्र की ओर	आकांश बांगर डॉ. गजानन पालेनवार	६८
९	इक्कीसविं सदी के उपन्यासों में वृध्द विमर्श	डॉ. कमलाकर नवघरे	७३
१०	समकालीन हिंदी साहित्य और उदयरमान भारत	डॉ. संजय एस धोटे	७९
११	सांस्कृतिक अस्मिती, संघर्ष और समायोजन–एक अध्ययन	अनमोल भलेराव प्रा.डॉ. किशोर बि. वासनिक	१०१
१२	चुनाव सुधार के संदर्भ में एक राष्ट्र एक चुनाव	डॉ अर्चना ज्ञानदेव पाटिल	११२
१३	हाशिये का स्वर और किसान	स्नेहा वानखेडे	११८
१४	हाशिये का स्वर और आदिवासी काव्य : निर्मला पुतुल के संदर्भ में	मोनिका भामकर डॉ.गजानन पोलेनवार	१२६
१५	भारत के स्वतंत्रता संग्राम और राष्ट्र निर्माण में गांधी का योगदान	डॉ. गणेश ढोबळे	१३३

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

१६	मालती जोशी के कथा साहित्य में स्त्री विमर्श	सुश्री नम्रता जोसफ	१४०
१७	आधुनिक प्रौद्योगिकी के माध्यम से भारतीय कृषि क्षेत्र का सशक्तिकरण	डॉ. शमापरवीन खान	१४८
१८	ग्रामीण विकास और स्थालान्तरण के प्रश्न: एक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण	डॉ. क्रिष्णा प्रदीप मेश्राम	१५७
१९	गिरिराज किशोर के उपन्यासों में चित्रित शहरी जीवन परिवेश का अध्ययन।	डॉ. विकास विट्ठलराव कामडी	१६४
२०	मीरा कांत कृत नाटक मनेपथ्य राग' में स्त्री–विमर्श	डॉ. सुधा जांगिड़ ,	१६९
२१	हिंदी उपन्यासों में भूमंडलीकरण	डॉ. किसन जिरया गावित	१७४
२२	दलित संवेदना के प्रमुख हस्ताक्षर मुल्कराज आनंद	डॉ. राहुल पुंडलिकराव वाघमारे	१८१
२३	'सुनील देवधर के रेडियो साहित्य में स्त्री विमर्श'	कु. लता वर्मा, डॉ. सोनू जेसवानी	१८७
२४	"संवैधानिक आरक्षणाची सद्यस्थिती आणि आव्हाने: खाजगी क्षेत्रातील आरक्षणाची मागणी आणि स्थानिक स्वराज्य संस्थांमधील महिला आरक्षणाचा सामाजिक-राजकीय अन्वयार्थ."	प्रकाश सूर्यभान गजभिये डॉ. राष्ट्रपाल गणवीर	१९५
२५	पारिस्थितिकी परिवर्तन और जैव विविधता पर उसका प्रभाव	डॉ नीलम हेमंत वीरानी	२०४

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

स्थानीय स्वशासन और राजनीतिक व्यवस्था में महिलाओं के लिए आरक्षण

डॉ जे. जी. चौहान

प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, पांढुर्ना, मध्य प्रदेश

सारांश -

नारी की प्रतिभाओं को कुंठित करके कैदी की तरह कोठरी में बंद कर देने का जो सिलसिला चला वह, स्वतंत्रता पश्चात भारतीय संविधान निर्माताओं ने महिला अपकर्ष को अभिनव उत्कर्ष में बदलने के लिए सामुदायिक विकास के कार्यक्रम निर्धारित किया। 1992 में 73वां और 74वां संविधान संशोधन कर स्थानीय स्वशासन में आरक्षण प्रदान किया। सामाजिक एवं राजनीतिक नेतृत्व हेतु अग्रसर करने वाला कदम बढ़ाते स्थानीय स्वशासन में 33% आरक्षण का प्रावधान महिलाओं के लिए किया यद्यपि यह विधान मंडलों पर निश्चित किया गया तथापि कुछ राज्यों ने 33% की जगह 50% तक के महिलाओं को स्थानीय स्वशासन में आरक्षण प्रदान किया जिसमें मध्य प्रदेश बिहार राजस्थान हिमाचल प्रदेश उत्तराखंड आदि राज्य शामिल हैं। महिला सशक्तिकरण से समृद्ध लोकतंत्र एवं विकसित भारत का नींव रखने में महिला आरक्षण स्थानीय स्वशासन में कारगर सिद्ध होगा। 73 वाँ 74 वाँ संविधान संशोधन द्वारा स्थानीय स्वशासन में महिलाओं को दिया गया आरक्षण लोकतंत्र की जड़ को मजबूती प्रदान कर राष्ट्र को संबल प्रदान करने वाला है।यह नए युग की शुरुआत के रूप में स्थानीय स्वशासन में महिला प्रतिनिधित्व को देखा जाना चाहिए। जमीनी स्तर पर महिला प्रतिनिधित्व भारतीय लोकतंत्र के लिए अधिक समावेशी और संवेदनशील दृष्टिगोचर होता है। यह आने वाले समय में न केवल राष्ट्र में बल्कि समाज में सकारात्मक बदलाव लाने में सहायक होगा। महिलाओं के लिए आरक्षण लोकतंत्र को मजबूत बनाने हेतु नेतृत्व के अवसर दिलाते हैं। और समाज के विकास में उनकी सक्रिय भूमिका सुनिश्चित होती है,ऐसा विश्वास किया जाना चाहिए है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

वर्तमान में चहुँ ओर महिला सशक्तिकरण का जोर और सुनाई देता है, अथवा राजनीतिक सक्रियता का माहौल परिदृश्य उभरा है। यह अनायास ही नहीं हुआ। इसके पीछे संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1975 से 1985 के दशक को महिला सहभागिता के पहचान पर प्रस्तावित करने का, और वैश्विक पहचान के परिपेक्ष में कन्वेंशन था। जो 18 दिसंबर 1979 को संयुक्त राष्ट्र के महासभा में अंगीकार किया गया था।

यद्यपि संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा पश्चात लिंग आधारित भेदभाव पूर्णतया समाप्त कर दिया गया है। इसके पश्चात भी पुरुषों के समान अधिकार महिलाओं को प्रदान करने में अत्यंत ही जटिलताओं का सामना करना पड़ा है ।रॉयडन कहते हैं कि "स्त्रियों ने पहले संस्कृति की नींव डाली तथा मानव को इधर-उधर भटकने से बचाया" परंतु विश्व की अधिकांश देशों में महिलाएं उपेक्षित रही विकासशील राष्ट्र में महिलाएं जहां सामाजिक एवं राजनीतिक पटल से गायब रही ,वहीं शोषण की दयनीय स्थिति ने नारी जाति को अबला बना दिया था।

वैदिक काल में जहां "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमंते तत्र देवता " का भाव था ।वहीं विश्व की आधी जनसंख्या की इस सदी में भी अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत है । विशेष रूप से विकासशील एवं मुस्लिम राष्ट्र के उदाहरण दिए जा सकते हैं।

आज की स्थिति में एक अनुमान के अनुसार व्यवस्थापिका में आधी दुनिया का महिलाओं का प्रतिनिधित्व औसत लगभग 11.7 प्रतिशत है। 1997 में दिल्ली में अंतरराष्ट्रीय संसदीय सम्मेलन पश्चात भारत में इस पर कारगर कदम उठाए गए। जिससे भारत महिलाओं के प्रतिनिधित्व में 65वें स्थान से उभर कर अभी एशिया में 11वीं स्थान पर स्थापित हुआ है।

तुलनात्मक रूप से देखें तो फिनलैंड, नार्वे, स्वीडन में 41.4 प्रतिशत यूरोप में 19.00% अमेरिका में 21.6 प्रतिशत, अफगानिस्तान में 2.7% बांग्लादेश में 14.8 प्रतिशत की हिस्सेदारी है । यही अब भारत में 73 मवाँ एवं 74 वाँ संविधान संशोधन पश्चात 33% स्थानीय स्तर पर आरक्षण दिया गया है । यद्यपि अभी भी संसद में महिलाओं की भूमिका 9.1% है । श्रीलंका, भारत, इंग्लैंड, पाकिस्तान

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

,लाइबेरिया ,जर्मनी जैसे अनेक देशों में महिलाओं ने शीर्ष पर अपना स्थान बनाया है ।बाद भी महिलाओं की दशा और दिशा राजनीतिक कुशलता एवं दक्षता के बाद भी उपेक्षित रहा है।

स्वातंत्र्योत्तर पश्चात उपेक्षित महिला समाज पर विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र में विशेष ध्यान दिया गया। जिसका उदाहरण 73वां एवं 74वां संविधान संशोधन स्थानीय स्तर पर भारतीय जनतंत्र को मजबूत बनाने हेतु आवश्यक पहल के रूप में देखा जा सकता है। गत वर्ष संसद में पारित "नारी शक्ति बंधन अधिनियम" जो लोकसभा एवं राज्यसभा के विधान परिषद में 33% महिलाओं को आरक्षण देने के प्रावधान पारित हुआ।

स्थानीय स्वशासन में यद्यपि भारत नवीन व्यवस्था नहीं है, किंतु भारत में राजतंत्र प्रणाली पश्चात, अंग्रेजी शासन में 1687 में मुंबई, कोलकाता , चेन्नई में नगर पालिका, निगम 1726 में कोलकाता मुंबई में मेंयरपोर्ट 1850 में संपूर्ण भारत में प्रारंभ हुआ । 1870 में तत्कालीन वायसराय लार्ड रिपन ने इसे स्थानीय स्वशासन का नाम दिया। 18 मई 1882 को लॉर्ड रिपन ने प्रस्ताव पारित किया जिसे , "लॉर्ड रिपन प्रस्ताव" के नाम से भी जाना जाता है ।जो स्थानीय स्वशासन की दिशा में एक कदम अंग्रेजी शासन के दौरान था।

पंचायती राज का इतिहास मनुस्मृति, महाभारत के शांति पर्व में ग्राम संघों के रूप में देखा जा सकता है। भगवत शरण उपाध्याय के अनुसार " दीवानी वाले झगड़े तो प्रायः परस्पर मध्यस्थ और पंचायत के बीच ही हल कर लिए जाते थे। बौद्ध ग्रंथों भी गांव की एक सभा होती थी। ऐसा उल्लेख मिलता है।

स्वतंत्रता पश्चात संविधान के भाग 4 के नीति निर्देशक तत्वों के अंतर्गत अनुच्छेद 40 में लिखा है। राज्य ग्राम पंचायत का गठन करने के लिए कदम उठाएगी, यही स्वप्न महात्मा गांधी जी ने देखा था। अत:एव 1952 में "सामुदायिक विकास कार्यक्रम " पंचायती राज प्रारंभ हुआ इसके बाद बलवंत राय मेहता एवं अशोक मेहता की संस्तुतियां प्रस्तुत हुई। और अंततः 73 वें संविधान संशोधन 24 अप्रैल 1993 से लागू किया गया। जो संघीय ढांचे में एक नए लोकतंत्र का सूत्रपात कह सकते हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

73 वें संविधान संशोधन लागू होने के पश्चात देश में 2,32,855 पंचायत , नगर पंचायत 6094, जिला पंचायत 633 में चुनाव संपन्न हुए। जिसमें ग्राम पंचायत स्तर पर 26,35,880 निर्वाचित प्रतिनिधि, नगर पंचायत में 1,56,557 प्रतिनिधि एवं जिला स्तर पर 15,581 प्रतिनिधि हुए। आश्चर्य यह है कि इस निर्वाचन में महिलाओं की भागीदारी केवल 29.51% रही। जिसमें अनुसूचित जाति ,अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़े वर्ग से भी महिलाएं थी।

नगरी शासन हेतु 74 वें संविधान संशोधन लागू करने का उद्देश्य तेजी से बढ़ते जा रहे शहरीकरण है। अनुमान के अनुसार 2020 तक 35% जनसंख्या शहरों मे स्थापित हो चुकी है 2008 में 34 करोड़ जनसंख्या शहरों मे थी। वह 2030 में 50 करोड़ होने का अनुमान है। अतः नगरी शासन की महत्ता भी बढ़ते जा रही है। परिणामतः संविधान के भाग 9 का अनुच्छेद 243 त से 243 ह तक 74 वां संविधान संशोधन की व्याख्या की गई।

नगर निगम, नगर पालिका ,नोटिफाइड एरिया, समिति टाउन एरिया, समिति छावनी बोर्ड, टाउनशिप पोर्ट ट्रस्ट ,विशिष्ट उद्देश्य अभिकरण, शामिल है। इसे हम नगर पंचायत, नगर परिषद एवं नगर निगम के रूप में देख सकते हैं। महिलाओं के लिए आरक्षण स्थानीय स्वशासन में सत्ता विकेंद्रीकरण की दृष्टि से पंचायत में कुल संख्या का 1/3 प्रतिशत महिलाओं के लिए आरक्षित किया गया है। जिसमें अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति से भी महिला वर्ग को आरक्षण दिया गया है। कुछ राज्यों ने पंचायती राज संस्थाओं हेतु 50% सीट आरक्षित की है।

मध्य प्रदेश के अलावा बिहार, राजस्थान, हिमाचल और उत्तराखंड में प्रमुख हैं जहां 50% आरक्षण महिलाओं के लिए लागू किया गया है। यह मसला संपूर्ण रूप से राज्य विधान मंडल के अधिकार क्षेत्र में आता है। अतः महिला आरक्षण की व्यवस्था राज्यों पर निर्भर करता है। यद्यपि 1996 में महिला आरक्षण बिल प्रस्तुत हुआ लेकिन यह कानून नहीं बन पाया। राजनीति में महिलाओं के प्रतिनिधित्व से समाज की प्रगति के साथ लैंगिक समानता और समावेशी नीतियों के लिए महत्वपूर्ण है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

महिला आरक्षण में यद्यपि अनेक चुनौतियां हैं, किंतु राजनीतिक सहभागिता से राजनीतिक गतिशीलता बढ़ेगी। तथापि मौलिक मानवाधिकार का सम्मान बढ़ेगा। स्थानीय स्वशासन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी से समाज का महत्वपूर्ण विकास दृष्टिगोचर हुआ है। बीते कुछ दशकों में महिलाओं की राजनीतिक सूझबूझ से निर्णय क्षमता में समाज पर अनेका-अनेक सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में स्थानीय स्वशासन से महिलाओं की प्रतिनिधित्व न केवल बढ़ेगा बल्कि विकसित भारत का स्वप्न भी सरकार होगा,

ऐसा विश्वास किया जाना चाहिए। महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता न केवल लोकतंत्र की विश्वास को बढ़ाता है, वरन महिला प्रतिनिधित्व समाज को नई दिशा एवं प्रेरणा से भर देता है। यद्यपि स्थानीय स्वशासन में प्रतिनिधित्व की दृष्टि से कई चुनौतियां हैं ,जैसे कि लैंगिक भेदभाव, सामाजिक दबाव एवं पूर्वाग्रह भय, हिंसा आदि तथापि अनेक स्तरों पर महिलाओं ने राजनीतिक प्रतिनिधित्व से स्थानीय समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर नवीन उदाहरण प्रस्तुत किया है।

स्वास्थ्य ,शिक्षा, स्वच्छता के साथ आत्मनिर्भरता की दिशा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व समाज में न्याय एवं समानता को बढ़ावा देता है। विगत कुछ वर्षों में महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता स्थानीय स्तर में बड़ी है। किंतु चुनौतियां भी कम नहीं हुई है ,तथापि सकारात्मक पक्ष को देखें पारंपरिकता, रूढ़िवादिता सोच अब कमजोर पड़ती नजर आ रही है। स्वयं के अधिकारों के बारे में ज्ञान होने पर सामाजिक न्याय एवं समानता को बढ़ावा मिला है। तथा स्थानीय स्तर पर एक समृद्ध प्रगतिशील एवं संवेदनशील समाज को उभरकर आया है। जो निश्चित रूप से राष्ट्र को विकसित एवं आदर्श स्तंभ देगा ऐसा विश्वास किया जाना चाहिए।

अंत में कहना उचित होगा कि स्थानीय स्वशासन में महिलाओं की उपस्थिति नीति निर्माण से प्रशासनिक सुधार ,समाज का समावेशी विकास, लैंगिक समानता, आत्मनिर्भरता और नेतृत्व क्षमता में वृद्धि करेगा। भारत जैसे प्रतिनिधिक लोकतंत्रीय ढांचे को वैश्विक स्तर पर गतिशील बनाने हेतु स्थानीय

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

स्वशासन में महिलाओं की भागीदारी न केवल सशक्तिकरण हेतु आवश्यक है ,बल्कि महिला प्रतिनिधित्व के अदम्य क्षमता का लाभ राष्ट्र को मिला है।

सार - स्थानीय निकाय में महिला आरक्षण प्रावधान त्रि स्तरीय पंचायत में 25 जनवरी 1994 पश्चात न्यूनतम 33% आरक्षण महिलाओं को दिया गया है। यह व्यवस्था किचक्रानुक्रम (रोटेशन) से दिया जाता है। इस समय 10 लाख महिलाएं संविधान संशोधन पश्चात त्रिस्तरीय ढांचे में सदस्य और अध्यक्ष के रूप में प्रतिनिधित्व कर रही हैं।

पूर्व में पंचायतें जोड़-तोड़ का शिकार होती थी। अब स्वस्थ एवं समृद्द पंचायत को सफल बना रही हैं। यद्यपि महिला प्रतिनिधियों को अभी भी पुरुष संबंधियों के छाया के रूप में कार्य करना पड़ता है, जैसे व्यंगात्मक रूप से सरपंच पति । पार्षद पति का संबोधन । जो औचित्य पूर्ण नहीं है। तथापि महिलाओं की कार्यशैली से स्थानीय स्वशासन चुनौतियों के बाद भी उच्च दर्जे हासिल किया है । महिला सशक्तिकरण से समृद्ध लोकतंत्र एवं विकसित भारत का नींव रखने में महिला आरक्षण स्थानीय स्वशासन में कारगर सिद्ध होगा। 73 वाँ 74 वाँ संविधान संशोधन द्वारा स्थानीय स्वशासन में महिलाओं को दिया गया आरक्षण लोकतंत्र की जड़ को मजबूती प्रदान कर राष्ट्र को संबल प्रदान करने वाला है। यह नए युग की शुरुआत के रूप में स्थानीय स्वशासन में महिला प्रतिनिधित्व को देखा जाना चाहिए। जमीनी स्तर पर महिला प्रतिनिधित्व भारतीय लोकतंत्र के लिए अधिक समावेशी और संवेदनशील दृष्टिगोचर होता है। यह आने वाले समय में न केवल राष्ट्र में बल्कि समाज में सकारात्मक बदलाव लाने में सहायक होगा। महिलाओं के लिए आरक्षण लोकतंत्र को मजबूत बनाने हेतु नेतृत्व के अवसर दिलाते हैं। और समाज के विकास में उनकी सक्रिय भूमिका सुनिश्चित होती है,ऐसा विश्वास किया जाना चाहिए है।

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

संदर्भ ग्रंथसूची:

1. प्रकाश, वी. *भारतीय संघीय व्यवस्था एवं स्थानीय स्वशासन* कैलाश पुस्तक सदन, 2015–2016।

2. खत्री, हरीश कुमार। *संघीय व्यवस्था एवं स्थानीय स्वशासन*। कैलाश पुस्तक सदन, 2016।

3. सुंदरम, जे. श्याम, और पी. सी. शर्मा। *राजनीति विज्ञान*। राम प्रसाद एंड संस, भोपाल, 1 जनवरी 2017

4. जैन, संजीव कुमार। *नारीवाद: सिद्धांत एवं व्यवहार में*। कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, 23 जून 2023।

5. फड़िया, बी. एल., और कुलदीप फड़िया। *भारतीय संविधान*। साहित्य भवन पब्लिकेशंस, आगरा, 2021।

6. बग्गा, एस. एस. *राजनीतिक सिद्धांत*। कैलाश पुस्तक सदन, 2023।

7. कुमार, हरीश। *मध्य प्रदेश का शासन एवं राजनीति*। कैलाश पुस्तक सदन, 2024।

8. शर्मा आचार्य, पं. श्रीराम। *इक्कीसवीं सदी नारी सदी*। अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा, 1998।

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

21वीं सदी में भारत-अमेरिका संबंध: नागरिक परमाणु सहयोग की बदलती गतिशीलता

प्रमोद डी. काणेकर

सहाय्यक प्राध्यापक, राजनीती विज्ञान विभाग,

राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज नागपूर विश्वविद्यालय

सारांश

21वीं सदी में भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच संबंध महत्वपूर्ण रूप से विकसित हुए हैं, जो रणनीतिक दूरी से व्यापक वैश्विक साझेदारी में बदल गए हैं। इस परिवर्तन में एक प्रमुख मोड़ भारत-अमेरिका नागरिक परमाणु समझौता था, जिसने भारत के लिए दशकों के परमाणु अलगाव को समाप्त कर दिया और परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग में सहयोग की सुविधा प्रदान की। यह पेपर नागरिक परमाणु सहयोग पर विशेष जोर देने के साथ भारत-अमेरिका संबंधों की बदलती गतिशीलता की जांच करता है। यह द्विपक्षीय संबंधों को मजबूत करने में भू-राजनीतिक विकास, ऊर्जा सुरक्षा और तकनीकी सहयोग की भूमिका का भी विश्लेषण करता है। भारत के राष्ट्रीय हितों के लिए नरेंद्र मोदी और डोनाल्ड ट्रम्प के राजनीतिक नेतृत्व के निहितार्थ का मूल्यांकन करता है, अवसरों और चुनौतियों दोनों पर प्रकाश डालता है। जबकि परमाणु सहयोग ने रणनीतिक संबंधों को मजबूत किया है और भारत की ऊर्जा जरूरतों का समर्थन किया है, दायित्व कानून, व्यापार विवाद और रणनीतिक दबाव जैसे मुद्दे द्विपक्षीय संबंधों के प्रक्षेपवक्र को प्रभावित करना जारी रखते हैं। अध्ययन का निष्कर्ष है कि नागरिक परमाणु सहयोग भारत-अमेरिका रणनीतिक साझेदारी का एक प्रमुख स्तंभ बना हुआ है और यह अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा सुरक्षा और वैश्विक भू-राजनीतिक गतिशीलता के भविष्य को आकार देना जारी रखेगा।

1. परिचय

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद भारत-संयुक्त राज्य संबंधों में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। दशकों से, द्विपक्षीय संबंधों की विशेषता आपसी संदेह, नीतिगत मतभेद और अलग-अलग रणनीतिक प्राथमिकताएँ थीं। भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति और शीत युद्ध के दौरान पाकिस्तान के साथ संयुक्त राज्य अमेरिका के गठबंधन ने दोनों देशों के बीच कई राजनयिक तनाव पैदा किए। हालाँकि, शीत युद्ध के बाद वैश्विक रणनीतिक वातावरण नाटकीय रूप से बदल गया। चीन के उदय, बढ़ते वैश्वीकरण, हिंद-

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

प्रशांत क्षेत्र के बढ़ते महत्व और साझा लोकतांत्रिक मूल्यों ने दोनों देशों को अपनी साझेदारी को मजबूत करने के लिए प्रोत्साहित किया।

इस विकसित होते रिश्ते में सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक 2005-2008 का भारत-अमेरिका नागरिक परमाणु समझौता था, जिसने द्विपक्षीय सहयोग की प्रकृति को मौलिक रूप से बदल दिया। समझौते ने भारत के परमाणु अलगाव को समाप्त कर दिया और परमाणु अप्रसार संधि (एनपीटी) पर अंतरराष्ट्रीय परमाणु वाणिज्य में भाग लेने की अनुमति दी।

समकालीन अवधि में, भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका ने रक्षा, प्रौद्योगिकी, व्यापार और ऊर्जा सुरक्षा जैसे कई क्षेत्रों में सहयोग का विस्तार किया है। असैनिक परमाणु सहयोग इस रणनीतिक साझेदारी का एक महत्वपूर्ण घटक बन गया है क्योंकि यह भारत की दीर्घकालिक ऊर्जा आवश्यकताओं का समर्थन करता है और वैश्विक जलवायु लक्ष्यों में योगदान देता है।

2. 21वीं सदी में भारत-अमेरिका संबंधों का विकास

शीत युद्ध के बाद की अवधि में भारत-अमेरिका संबंधों में एक नए चरण की शुरुआत हुई। 1990 के दशक में भारत में आर्थिक उदारीकरण ने दोनों देशों के बीच आर्थिक और तकनीकी सहयोग के अवसर पैदा किये। हालाँकि, 1998 में भारत के परमाणु परीक्षणों के बाद संबंधों में तनाव का अनुभव हुआ, जिसके कारण संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा आर्थिक प्रतिबंध लगाए गए। इन चुनौतियों के बावजूद, दोनों देशों के बीच राजनयिक जुड़ाव जारी रहा।

2000 के दशक की शुरुआत में संबंधों में धीरे-धीरे सुधार देखा गया, जिसकी परिणति 2005 में शुरू हुए ऐतिहासिक भारत-अमेरिका नागरिक परमाणु समझौते में हुई। इस समझौते ने अमेरिकी विदेश नीति में एक रणनीतिक बदलाव का प्रतिनिधित्व किया, जिसने भारत को एक जिम्मेदार परमाणु शक्ति और एशिया में एक प्रमुख रणनीतिक भागीदार के रूप में मान्यता दी।

3. भारत-अमेरिका असैनिक परमाणु समझौता: एक रणनीतिक निर्णायक मोड़

भारत-अमेरिका नागरिक परमाणु समझौते पर 2005 में हस्ताक्षर किए गए थे और 2007 में 123 (एक, दो, तिन) समझौते के माध्यम से इसे लागू किया गया था। इसने भारत को अपने नागरिक परमाणु सुविधाओं को अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईएईए) के सुरक्षा उपायों के तहत रखते हुए शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए परमाणु प्रौद्योगिकी और ईंधन तक पहुंचने की अनुमति दी।

इस समझौते के कई महत्वपूर्ण निहितार्थ थे:

1. भारत के परमाणु अलगाव को समाप्त करना

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

इस समझौते ने परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह से छूट प्राप्त करने के बाद भारत को अंतर्राष्ट्रीय परमाणु व्यापार में भाग लेने में सक्षम बनाया।

2. ऊर्जा सुरक्षा

बढ़ती ऊर्जा मांगों को पूरा करने के लिए परमाणु ऊर्जा भारत की रणनीति का एक महत्वपूर्ण घटक बन गई है।

3. तकनीकी सहयोग

इस समझौते ने भारतीय और अमेरिकी परमाणु उद्योगों के बीच सहयोग के अवसर खोले।

हाल के घटनाक्रमों ने असैनिक परमाणु सहयोग को और मजबूत किया है। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका ने भारत को लघु मॉड्यूलर रिएक्टर (**Small Modular Reactor (SMR) technology**) प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण को मंजूरी दे दी, जिससे अमेरिकी और भारतीय कंपनियों के बीच उन्नत परमाणु रिएक्टर विकसित करने के लिए सहयोग की अनुमति मिल गई।

4. असैन्य परमाणु सहयोग की बदलती गतिशीलता

21वीं सदी में भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच नागरिक परमाणु सहयोग महत्वपूर्ण रूप से विकसित हुआ है। भारत-अमेरिका असैन्य परमाणु समझौते के बाद जो शुरुआत एक रणनीतिक पहल के रूप में शुरू हुई थी, वह धीरे-धीरे ऊर्जा सुरक्षा, तकनीकी विकास और पर्यावरणीय स्थिरता से जुड़ी एक व्यापक साझेदारी में विस्तारित हो गई है। समय के साथ, साझेदारी नई वैश्विक वास्तविकताओं, विशेष रूप से स्वच्छ ऊर्जा की बढ़ती मांग और भारत-प्रशांत क्षेत्र में रणनीतिक सहयोग के बढ़ते महत्व के अनुरूप हो गई है।

भारत की तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था और जनसंख्या के कारण ऊर्जा की मांग में लगातार वृद्धि हो रही है। साथ ही, देश को कार्बन उत्सर्जन को कम करने और ऊर्जा के स्थायी स्रोतों की ओर बढ़ने की चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। इस संदर्भ में, परमाणु ऊर्जा एक विश्वसनीय और कम कार्बन ऊर्जा स्रोत के रूप में उभरी है जो बड़े पैमाने पर बिजली उत्पादन का समर्थन करने में सक्षम है।

4.1 ऊर्जा सुरक्षा और आर्थिक विकास

भारत-अमेरिका असैन्य परमाणु सहयोग के पीछे ऊर्जा सुरक्षा प्राथमिक प्रेरणाओं में से एक बनी हुई है। कई वर्षों से, भारत अपनी बढ़ती ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे जीवाश्म ईंधन पर बहुत अधिक निर्भर रहा है। जबकि इन संसाधनों ने औद्योगिक विकास और आर्थिक विकास का समर्थन किया है, उन्होंने पर्यावरण प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में भी

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

योगदान दिया है। परिणामस्वरूप, भारत ने ऊर्जा के स्वच्छ और अधिक टिकाऊ स्रोतों को शामिल करके अपने ऊर्जा मिश्रण में विविधता लाने पर ध्यान केंद्रित किया है।

इस रणनीति में परमाणु ऊर्जा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि यह न्यूनतम कार्बन उत्सर्जन के साथ बिजली की स्थिर और निरंतर आपूर्ति प्रदान करती है। सौर और पवन जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों के विपरीत, परमाणु ऊर्जा बेस-लोड बिजली उत्पन्न कर सकती है जो राष्ट्रीय बिजली ग्रिड की स्थिरता का समर्थन करती है। इन फायदों को पहचानते हुए, भारत ने आने वाले दशकों में अपनी परमाणु ऊर्जा क्षमता का विस्तार करने के लिए दीर्घकालिक लक्ष्य निर्धारित किए हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ सहयोग आधुनिक रिएक्टर प्रौद्योगिकियों, परमाणु ईंधन आपूर्ति और निवेश के अवसरों तक पहुंच को सुविधाजनक बनाकर इस उद्देश्य में योगदान देता है। तकनीकी सहयोग और नीति संवाद के माध्यम से, दोनों देशों का लक्ष्य भारत के ऊर्जा बुनियादी ढांचे को मजबूत करने के साथ-साथ सतत आर्थिक विकास को बढ़ावा देना है।

4.2 तकनीकी सहयोग

तकनीकी सहयोग विकसित हो रही भारत-अमेरिका परमाणु साझेदारी का एक और महत्वपूर्ण आयाम है। असैनिक परमाणु समझौते के कार्यान्वयन के बाद से, दोनों देशों ने वैज्ञानिक संस्थानों, अनुसंधान संगठनों और परमाणु ऊर्जा विकास में शामिल निजी कंपनियों के बीच सहयोग बढ़ाया है।

सहयोग के सबसे आशाजनक क्षेत्रों में से एक उन्नत परमाणु रिएक्टर प्रौद्योगिकियों, विशेष रूप से छोटे मॉड्यूलर रिएक्टरों (एसएमआर) का विकास है। ये अगली पीढ़ी के रिएक्टर पारंपरिक बड़े पैमाने के परमाणु संयंत्रों की तुलना में अधिक लचीले, लागत प्रभावी और सुरक्षित होने के लिए डिज़ाइन किए गए हैं। उनका छोटा आकार उन्हें अधिक तेजी से निर्माण करने और उन क्षेत्रों में तैनात करने की अनुमति देता है जहां पारंपरिक परमाणु ऊर्जा संयंत्र संभव नहीं हो सकते हैं।

रिएक्टर प्रौद्योगिकी के अलावा, भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका परमाणु ईंधन प्रबंधन, परमाणु इंजीनियरिंग में अनुसंधान और आधुनिक सुरक्षा प्रणालियों के विकास जैसे क्षेत्रों में भी सहयोग करते हैं। ये सहयोगी प्रयास तकनीकी नवाचार को बढ़ाते हैं और परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में दोनों देशों की समग्र क्षमताओं को मजबूत करते हैं।

4.3 परमाणु सुरक्षा और नियामक सहयोग

परमाणु सुरक्षा और नियामक समन्वय भारत-अमेरिका असैनिक परमाणु सहयोग का एक अनिवार्य घटक है। परमाणु सुविधाओं के सुरक्षित संचालन के लिए मजबूत नियामक संस्थानों, सख्त सुरक्षा

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

मानकों और निरंतर तकनीकी निगरानी की आवश्यकता होती है। इसलिए दोनों देशों ने अपने संबंधित नियामक अधिकारियों के बीच सहयोग के लिए तंत्र विकसित किया है।

इस सहयोग में परमाणु सुरक्षा प्रथाओं में सुधार लाने के उद्देश्य से तकनीकी आदान-प्रदान, प्रशिक्षण कार्यक्रम और नीतिगत चर्चाएँ शामिल हैं। दोनों देशों के विशेषज्ञ नियमित रूप से रिएक्टर सुरक्षा, विकिरण सुरक्षा और आपातकालीन तैयारियों पर ज्ञान साझा करते हैं। इस तरह के सहयोग से यह सुनिश्चित करने में मदद मिलती है कि परमाणु ऊर्जा विकास जिम्मेदार और सुरक्षित तरीके से हो।

अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठन भी वैश्विक सुरक्षा मानकों को स्थापित करने और जिम्मेदार परमाणु शासन को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अंतरराष्ट्रीय संस्थानों और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे रणनीतिक साझेदारों के साथ सहयोग के माध्यम से, भारत अपने परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का विस्तार करते हुए अपने परमाणु सुरक्षा ढांचे को मजबूत करना जारी रखता है।

5. मोदी-ट्रम्प युग के दौरान भारत-अमेरिका संबंध

भारत में नरेंद्र मोदी और संयुक्त राज्य अमेरिका में डोनाल्ड ट्रम्प के नेतृत्व की अवधि ने भारत-अमेरिका संबंधों के विकास में एक महत्वपूर्ण चरण को चिह्नित किया। इस अवधि (2017-2021) के दौरान, द्विपक्षीय संबंधों में रणनीतिक, रक्षा और आर्थिक सहयोग में निरंतरता और विस्तार दोनों देखा गया। दोनों नेताओं के बीच व्यक्तिगत कूटनीति, ह्यूस्टन में "हाउडी मोदी" रैली और अहमदाबाद में "नमस्ते ट्रम्प" कार्यक्रम जैसे हाई-प्रोफाइल कार्यक्रमों में परिलक्षित हुई, जो दोनों देशो के लोकतंत्रों के बीच राजनीतिक और रणनीतिक संबंधों को मजबूत करने का प्रतीक है।

मोदी-ट्रम्प युग के दौरान सबसे उल्लेखनीय विकासों में से एक दोनों देशों के बीच रणनीतिक साझेदारी को मजबूत करना था। भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका दोनों भारत-प्रशांत क्षेत्र में स्थिरता बनाए रखने के लिए एक-दूसरे को महत्वपूर्ण साझेदार के रूप में देख रहे हैं। एक प्रमुख भू-राजनीतिक शक्ति के रूप में चीन के उदय और दक्षिण चीन सागर में नेविगेशन की स्वतंत्रता के संबंध में चिंताओं ने दोनों देशों के बीच घनिष्ठ सहयोग को प्रोत्साहित किया। संयुक्त राज्य अमेरिका ने इंडो-पैसिफिक में एक प्रमुख सुरक्षा प्रदाता के रूप में भारत की भूमिका का खुले तौर पर समर्थन किया और नियम-आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था बनाए रखने के उद्देश्य से समर्थित पहल का समर्थन किया। रणनीतिक हितों के इस अभिसरण ने भारत-अमेरिका संबंधों के भू-राजनीतिक महत्व को काफी बढ़ा दिया।

इस अवधि के दौरान साझेदारी का एक अन्य महत्वपूर्ण आयाम रक्षा सहयोग का तेजी से विस्तार था। द्विपक्षीय रक्षा व्यापार में उल्लेखनीय वृद्धि के साथ, संयुक्त राज्य अमेरिका भारत के सबसे बड़े रक्षा

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भागीदारों में से एक के रूप में उभरा। इस दौरान कई प्रमुख रक्षा समझौते संपन्न हुए, जिनमें संचार अनुकूलता और सुरक्षा समझौता (COMCASA) और औद्योगिक सुरक्षा अनुबंध शामिल हैं, जिसने संवेदनशील रक्षा प्रौद्योगिकियों और सैन्य सूचनाओं को अधिक साझा करने में सक्षम बनाया। मालाबार नौसैनिक अभ्यास जैसे संयुक्त सैन्य अभ्यास ने भी दोनों देशों के सशस्त्र बलों के बीच अंतरसंचालनीयता को मजबूत किया। इन विकासों ने भारत की रक्षा क्षमताओं में सुधार और सैन्य सहयोग को गहरा करने में योगदान दिया।

मोदी-ट्रम्प युग में दोनों देशों के बीच आतंकवाद विरोधी सहयोग में भी वृद्धि देखी गई। संयुक्त राज्य अमेरिका ने सीमा पार आतंकवाद के संबंध में भारत की चिंताओं को तेजी से स्वीकार किया और पाकिस्तान से उत्पन्न होने वाले आतंकवाद पर भारत की स्थिति के लिए मजबूत समर्थन व्यक्त किया। खुफिया जानकारी साझा करने, आतंकवाद-निरोध पर संयुक्त कार्य समूहों और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर सहयोग ने वैश्विक आतंकवाद से निपटने के प्रयासों को मजबूत करने में मदद की।

इसके अलावा, ऊर्जा सहयोग द्विपक्षीय संबंधों का एक महत्वपूर्ण स्तंभ बन गया। संयुक्त राज्य अमेरिका भारत के लिए तरलीकृत प्राकृतिक गैस (एलएनजी) और कच्चे तेल के एक महत्वपूर्ण आपूर्तिकर्ता के रूप में उभरा, जिससे भारत की ऊर्जा विविधीकरण रणनीति में योगदान मिला। इस अवधि के दौरान नागरिक परमाणु ऊर्जा, नवीकरणीय ऊर्जा प्रौद्योगिकियों और स्वच्छ ऊर्जा पहल में सहयोग का भी विस्तार हुआ, जिससे दोनों देशों के बीच दीर्घकालिक रणनीतिक और आर्थिक साझेदारी मजबूत हुई।

5.1 भारत के लिए चुनौतियाँ और चिंताएँ

नरेंद्र मोदी और डोनाल्ड ट्रंप के नेतृत्व में रणनीतिक और रक्षा सहयोग में उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद, कई नीतिगत मतभेदों और आर्थिक मुद्दों ने द्विपक्षीय संबंधों में तनाव पैदा किया। जबकि दोनों देशों के साझा भू-राजनीतिक हित हैं, विशेष रूप से भारत-प्रशांत क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभाव को संतुलित करने में, ट्रम्प प्रशासन द्वारा अपनाई गई कुछ नीतियों ने भारत के लिए चिंताएँ बढ़ा दी हैं। ये चुनौतियाँ मुख्य रूप से व्यापार नीति, आव्रजन नियमों और भारत की विदेश नीति विकल्पों से संबंधित रणनीतिक दबावों के क्षेत्रों में उभरीं।

सबसे महत्वपूर्ण मुद्दों में से एक दोनों देशों के बीच व्यापार विवाद से संबंधित था। ट्रम्प प्रशासन ने "अमेरिका फर्स्ट" आर्थिक नीति अपनाई, जिसमें व्यापार घाटे को कम करने और घरेलू उद्योगों की रक्षा पर जोर दिया गया। इस संदर्भ में, संयुक्त राज्य अमेरिका ने भारत की व्यापार नीतियों की आलोचना की, जिसमें कुछ अमेरिकी वस्तुओं पर उच्च टैरिफ और बाजार पहुंच पर प्रतिबंध शामिल हैं।

परिणामस्वरूप, 2019 में संयुक्त राज्य अमेरिका ने भारत को सामान्यीकृत प्राथमिकता प्रणाली (जीएसपी) कार्यक्रम से हटाने का निर्णय लिया। जीएसपी कार्यक्रम ने पहले भारतीय उत्पादों की एक विस्तृत श्रृंखला को अमेरिकी बाजार में शुल्क-मुक्त प्रवेश की अनुमति दी थी। इसकी वापसी ने इंजीनियरिंग सामान, रसायन और कृषि उत्पादों सहित कई भारतीय निर्यात क्षेत्रों को प्रभावित किया। इस निर्णय को भारत में द्विपक्षीय व्यापार संबंधों के लिए एक झटके के रूप में देखा गया और व्यापार असंतुलन को हल करने के लिए दोनों देशों के बीच बातचीत हुई।

भारत के लिए चिंता का एक अन्य क्षेत्र ट्रम्प प्रशासन द्वारा आव्रजन और वीजा नीतियों को कड़ा करना था। संयुक्त राज्य अमेरिका ने एच-1बी वीजा कार्यक्रम के संबंध में सख्त नियम पेश किए, जिसका अमेरिकी प्रौद्योगिकी क्षेत्र में काम करने वाले भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी पेशेवरों द्वारा व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। भारतीय कंपनियां और पेशेवर एच-1बी वीजा धारकों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, और इसलिए इस कार्यक्रम पर कोई भी प्रतिबंध सीधे भारत के आईटी उद्योग और कुशल कार्यबल को प्रभावित करता है। बढ़ती जांच, उच्च इनकार दर और वीज़ा नियमों में बदलाव ने संयुक्त राज्य अमेरिका में कार्यरत हजारों भारतीय पेशेवरों के लिए अनिश्चितता पैदा कर दी है। इस मुद्दे ने दोनों देशों के बीच पेशेवर गतिशीलता की दीर्घकालिक स्थिरता के संबंध में भारत में भी चिंता पैदा की।

तीसरी चुनौती भारत की विदेश नीति के कुछ पहलुओं पर संयुक्त राज्य अमेरिका के रणनीतिक दबाव से संबंधित थी। ट्रम्प प्रशासन ने भारत को रूस से अपनी रक्षा खरीद कम करने और ईरान के साथ आर्थिक जुड़ाव सीमित करने के लिए प्रोत्साहित किया, खासकर संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा इन देशों पर प्रतिबंध लगाने के बाद। हालाँकि, भारत ने पारंपरिक रूप से कई वैश्विक शक्तियों के साथ विविध राजनयिक और आर्थिक संबंध बनाए रखते हुए रणनीतिक स्वायत्तता की नीति का पालन किया है। रूस के साथ भारत के रक्षा संबंध और ईरान के साथ उसके ऊर्जा सहयोग को उसके राष्ट्रीय हितों के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है। परिणामस्वरूप, इन मुद्दों पर अमेरिकी दबाव ने कूटनीतिक जटिलताएँ पैदा कर दीं और अपनी स्वतंत्र विदेश नीति को बनाए रखते हुए संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ मजबूत संबंध बनाए रखने के लिए भारत को सावधानीपूर्वक संतुलन बनाने की आवश्यकता पड़ी।

6. समसामयिक विकास (2024-2026)

हाल के वर्षों में, विशेष रूप से 2024 से 2026 की अवधि के दौरान, भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका ने कई रणनीतिक क्षेत्रों में द्विपक्षीय सहयोग को मजबूत करने के लिए अपनी प्रतिबद्धता को नवीनीकृत किया है। उभरते भू-राजनीतिक माहौल, विशेष रूप से भारत-प्रशांत क्षेत्र के बढ़ते महत्व और नई

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

तकनीकी और आर्थिक चुनौतियों के उदय ने दोनों देशों को सहयोग के पारंपरिक क्षेत्रों से परे अपनी साझेदारी का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया है। रक्षा, उन्नत प्रौद्योगिकियों और आर्थिक साझेदारी में बढ़ते सहयोग के साथ-साथ, नागरिक परमाणु सहयोग इस रिश्ते का एक महत्वपूर्ण स्तंभ बना हुआ है।

समकालीन भारत-अमेरिका संबंधों में प्रमुख प्राथमिकताओं में से एक द्विपक्षीय व्यापार और आर्थिक जुड़ाव का विस्तार है। दोनों देशों ने 2030 तक द्विपक्षीय व्यापार को लगभग 500 बिलियन डॉलर तक बढ़ाने का इरादा व्यक्त किया है, जो दोनों देशों के बीच बढ़ती आर्थिक परस्पर निर्भरता को दर्शाता है। उच्च-प्रौद्योगिकी क्षेत्रों, ऊर्जा संसाधनों और रणनीतिक खनिजों में व्यापार बढ़ने से आर्थिक संबंधों को मजबूत करने और दोनों देशों में सतत विकास में योगदान की उम्मीद है।

परमाणु ऊर्जा सहयोग के क्षेत्र में, भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका ने अगली पीढ़ी के रिएक्टरों और छोटे मॉड्यूलर रिएक्टरों (एसएमआर) सहित उन्नत परमाणु प्रौद्योगिकियों पर चर्चा तेज कर दी है। ऐसी प्रौद्योगिकियों से भारत की बढ़ती ऊर्जा मांग को पूरा करने के साथ-साथ निम्न-कार्बन ऊर्जा स्रोतों के विस्तार के माध्यम से वैश्विक जलवायु परिवर्तन संबंधी चिंताओं को संबोधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की उम्मीद है।

एक अन्य महत्वपूर्ण घटनाक्रम भारत द्वारा अपने परमाणु दायित्व कानूनों में सुधारों पर विचार करना है। मौजूदा देनदारी ढाँचे ने कभी-कभी वित्तीय जोखिमों के बारे में चिंताओं के कारण विदेशी कंपनियों को भारत के परमाणु ऊर्जा क्षेत्र में निवेश करने से हतोत्साहित किया है। सुधारों को शुरू करने और दायित्व प्रावधानों को स्पष्ट करके, भारत सरकार का लक्ष्य अधिक से अधिक विदेशी निवेश आकर्षित करना और अमेरिकी कंपनियों सहित अंतरराष्ट्रीय परमाणु प्रौद्योगिकी प्रदाताओं की भागीदारी को प्रोत्साहित करना है।

इन समसामयिक घटनाक्रमों से संकेत मिलता है कि भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच व्यापक रणनीतिक साझेदारी को मजबूत करने में नागरिक परमाणु सहयोग केंद्रीय भूमिका निभा रहा है।

7. भारत-अमेरिका परमाणु सहयोग की भविष्य की संभावनाएँ

भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच असैन्य परमाणु सहयोग का भविष्य कई रणनीतिक, तकनीकी और नीति-संबंधी कारकों से आकार लेने की संभावना है। सबसे महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक भारत के परमाणु दायित्व कानूनों में सुधार है, जो लंबे समय से विदेशी परमाणु कंपनियों के लिए चिंता का विषय रहा है। इन विनियमों के स्पष्टीकरण और संशोधन से भारत के परमाणु ऊर्जा क्षेत्र में अमेरिकी कंपनियों

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

की अधिक भागीदारी को बढ़ावा मिल सकता है और परमाणु ऊर्जा परियोजनाओं में निवेश की सुविधा मिल सकती है।

एक अन्य महत्वपूर्ण कारक भारत के परमाणु ऊर्जा बुनियादी ढांचे का विस्तार है। जैसे-जैसे भारत सतत आर्थिक विकास को आगे बढ़ा रहा है और जीवाश्म ईंधन पर अपनी निर्भरता कम कर रहा है, देश की दीर्घकालिक ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने में परमाणु ऊर्जा द्वारा तेजी से महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की उम्मीद है। संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ सहयोग उन्नत प्रौद्योगिकियों, तकनीकी विशेषज्ञता और विश्वसनीय ईंधन आपूर्ति तक पहुंच प्रदान कर सकता है।

इसके अलावा, उन्नत रिएक्टर प्रौद्योगिकियों, विशेष रूप से छोटे मॉड्यूलर रिएक्टरों (एसएमआर) पर सहयोग, भविष्य की साझेदारी के लिए एक आशाजनक क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। ये रिएक्टर बेहतर सुरक्षा, कम निर्माण लागत और अधिक दक्षता प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, भारत-प्रशांत क्षेत्र में व्यापक भू-राजनीतिक विकास भारत-अमेरिका रणनीतिक सहयोग को और मजबूत कर सकता है, जिससे नागरिक परमाणु सहयोग ऊर्जा सुरक्षा और क्षेत्रीय स्थिरता को बढ़ावा देने में उनकी दीर्घकालिक साझेदारी का एक महत्वपूर्ण घटक बन जाएगा।

8. निष्कर्ष

21वीं सदी में भारत-अमेरिका संबंधों में गहरा परिवर्तन आया है। जो संबंध कभी अविश्वास से चिह्नित था, वह साझा लोकतांत्रिक मूल्यों और पारस्परिक भू-राजनीतिक हितों पर आधारित रणनीतिक साझेदारी में विकसित हो गया है।

भारत-अमेरिका असैन्य परमाणु समझौता इस परिवर्तन में सबसे महत्वपूर्ण मील के पत्थर में से एक का प्रतिनिधित्व करता है। इसने न केवल भारत के परमाणु अलगाव को समाप्त किया बल्कि ऊर्जा, प्रौद्योगिकी और वैश्विक शासन में सहयोग के नए अवसर भी पैदा किए।

मोदी-ट्रम्प युग के दौरान, रणनीतिक और रक्षा क्षेत्रों में द्विपक्षीय संबंध मजबूत हुए, हालांकि कुछ आर्थिक और आव्रजन नीतियों ने भारत के लिए चुनौतियां पैदा कीं।

कुल मिलाकर, नागरिक परमाणु सहयोग भारत-अमेरिका संबंधों की आधारशिला बना हुआ है और आने वाले दशकों में वैश्विक ऊर्जा सुरक्षा, जलवायु नीति और भू-राजनीतिक स्थिरता को प्रभावित करना जारी रखेगा।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

संदर्भ ग्रंथसूची:

1. Bajpai, K. (2000). India's nuclear posture after Pokhran II. *International Studies*, 37(4), 267–302.
2. Chellaney, B. (1994). Non-proliferation: An Indian critique of US export controls. *Orbis*, 38(3), 439–456.
3. Dutt, V. P. (2004). *India's foreign policy in a changing world*. New Delhi: Vikas Publishing.
4. Ganguly, S. (2012). *India and the United States: The uneasy partnership*. Oxford University Press.
5. Jain, R. B. (1998). US policy towards South Asia. New Delhi: Development Publications.
6. Kux, D. (1994). *Estranged democracies: India and the United States 1941–1991*. Sage Publications.
7. Malone, D. (2011). *Does the elephant dance? Contemporary Indian foreign policy*. Oxford University Press.
8. Mohan, C. R. (2003). *Crossing the Rubicon: The shaping of India's new foreign policy*. Palgrave Macmillan.
9. Pant, H. (2016). *Indian foreign policy: An overview*. Manchester University Press.
10. Rajagopalan, R. (2019). India's nuclear strategy in the 21st century. Routledge.
11. Sasi, A. (2025). Renewed India-US nuclear cooperation. *The Indian Express*.
12. Sansanwal, G. (2025). US-India nuclear partnership. *CSIS Analysis*.
13. Singh, K. R. (1976). Nuclear weapon free zone in South Asia. *India Quarterly*.
14. Tellis, A. (2006). India as a new global power. Carnegie Endowment.
15. Thakur, R. (1996). India and the United States. *Asian Survey*.

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

16. Vinod, M. J. (1992). Nuclear issue in US-India relations. *Indian Journal of Political Science*.
17. World Nuclear Association. (2023). Nuclear power in India.
18. U.S. Department of Energy. (2025). Civil nuclear cooperation with India.
19. International Atomic Energy Agency. (2022). Nuclear safeguards and India.
20. Ministry of External Affairs. (2024). India–US strategic partnership report.
21. Government of India. (2023). India's nuclear energy policy.
22. Reuters. (2025). India-US nuclear regulatory cooperation.
23. Reuters. (2026). India-US trade and energy dialogue.
24. Times of India. (2025). US firm allowed to build reactors in India.
25. World Nuclear Industry Status Report. (2023). Global nuclear energy trends.

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में नागपुर का उदय: मध्य भारत की शक्ति-संरचना में ऐतिहासिक स्थापना, राजनीतिक परिवर्तन एवं सामाजिक रूपांतरण का अध्ययन

शोधकर्ता: ऋषि कुमार बिसेन

मार्गदर्शक: प्रा. (डॉ.) शामराव कोरेटी

विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग

राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज नागपुर विश्वविद्यालय, नागपुर

सार

नागपुर शहर की स्थापना गोंड राजा महिपत शाह, जिन्हें बुलंद बख्त के नाम से भी जाना जाता है, ने 1702 ईस्वी में की थी। वे मूलतः देवगढ़ रियासत के शासक थे, किंतु मुगलों के साथ संबंध खराब होने के कारण उन्हें सत्ता से हटा दिया गया। इसके बाद उन्होंने अपने राज्य की शक्ति को पुनः स्थापित करने के लिए मुगल सत्ता के विरुद्ध संघर्ष किया। मराठों तथा उत्तर-पश्चिम भारत के कई राजाओं और योद्धाओं के सहयोग से संयुक्त सैन्य शक्ति का संगठन कर उन्होंने मुगलों को पराजित किया और अपनी खोई हुई सत्ता पुनः प्राप्त की। विजय के उपरांत महिपत शाह ने राज्य को अधिक सुदृढ़ और संगठित करने के उद्देश्य से अपनी राजधानी पहाड़ी और जंगलों से घिरे देवगढ़ क्षेत्र से हटाकर मैदान में एक नई राजधानी स्थापित करने का निर्णय लिया। इसी क्रम में लगभग बारह गाँवों को मिलाकर नागपुर नगर की स्थापना की गई तथा राजधानी को देवगढ़ से यहाँ स्थानांतरित किया गया। उनके उत्तराधिकारी एवं पुत्र चाँद सुल्तान ने नागपुर को एक संगठित और विकसित राजधानी के रूप में स्थापित किया। इस प्रक्रिया में विभिन्न क्षेत्रों से सैनिकों, कारीगरों, व्यापारियों और कृषकों को यहाँ बसाया गया, जिससे नागपुर एक बहु-सांस्कृतिक समाज का केंद्र बन गया। विभिन्न भाषाई और सांस्कृतिक समूहों के पारस्परिक संपर्क से नई सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं का विकास हुआ, जिसे आगे चलकर नागपुरी भाषा और संस्कृति के रूप में पहचाना जाने लगा। प्रस्तुत शोध-पत्र में नागपुर की स्थापना, देवगढ़ से राजधानी के स्थानांतरण तथा विभिन्न समुदायों के आगमन से उत्पन्न सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का ऐतिहासिक अध्ययन किया गया है।

मुख्य शब्द (Keywords): नागपुर, महिपत शाह (बुलंद बख्त), देवगढ़ रियासत, विदर्भ क्षेत्र, मध्य भारत की राजनीति, मुगल सत्ता का पतन, गोंड शासन, राजपूत सैन्य सहयोग, मराठा शक्ति का उदय, पोवार राजपूत, नागपुर की बसाहट, सामाजिक-सांस्कृतिक समन्वय

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

अनुसंधान पद्धति

प्रस्तुत शोध-पत्र में अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में नागपुर की स्थापना, उससे संबंधित राजनीतिक परिवर्तनों तथा सामाजिक-सांस्कृतिक विकास का अध्ययन करने के लिए मुख्यतः ऐतिहासिक अनुसंधान पद्धति का उपयोग किया गया है। इस अध्ययन में उपलब्ध ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर घटनाओं, परिस्थितियों और प्रक्रियाओं का विश्लेषणात्मक तथा वर्णनात्मक अध्ययन किया गया है। शोध के लिए प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोतों में तत्कालीन अभिलेख, प्रशासनिक प्रतिवेदन तथा ऐतिहासिक दस्तावेज सम्मिलित हैं, जबकि द्वितीयक स्रोतों में इतिहासकारों द्वारा लिखित ग्रंथ, शोध-पुस्तकें तथा गजेटियरों का उपयोग किया गया है, जिनके माध्यम से विदर्भ क्षेत्र तथा नागपुर के ऐतिहासिक विकास को समझने का प्रयास किया गया है। इस शोध में स्रोत-विश्लेषण पद्धति का उपयोग करते हुए उपलब्ध ऐतिहासिक तथ्यों का परीक्षण और विश्लेषण किया गया है। साथ ही वर्णनात्मक पद्धति के माध्यम से नागपुर की स्थापना, गोंड शासन, मराठा सत्ता के आगमन तथा नगर के सामाजिक और सांस्कृतिक विकास की प्रक्रिया को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसके अतिरिक्त सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण पद्धति के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों से आए समुदायों की बसाहट, उनकी भाषाओं, परंपराओं और सांस्कृतिक तत्वों के परस्पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है। इस प्रकार ऐतिहासिक, वर्णनात्मक तथा विश्लेषणात्मक दृष्टिकोणों के समन्वित उपयोग के माध्यम से नागपुर के प्रारंभिक विकास, राजनीतिक परिवर्तन तथा सांस्कृतिक समन्वय की ऐतिहासिक प्रक्रिया को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना

अठारहवीं शताब्दी का प्रारंभ भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण परिवर्तकाल के रूप में देखा जाता है। विशेष रूप से मुग़ल शासक औरंगज़ेब के दक्षिण पर अधिक केंद्रित होने से मुग़ल सत्ता कमजोर होने लगी थी और क्षेत्रीय शक्तियाँ उधर रही थी। इस राजनीतिक परिवर्तन का प्रभाव मध्य भारत के विदर्भ क्षेत्र पर भी पड़ा। इसी काल में गोंड शासक महिपत शाह (बुलंद बख्त) ने अपने राजनीतिक कौशल और दूरदर्शिता के आधार पर एक नए शक्ति-केंद्र की स्थापना की। देवगढ़ की पहाड़ी और जंगलों से घिरी राजधानी को प्रशासनिक तथा सामरिक दृष्टि से सीमित मानते हुए उन्होंने मैदान क्षेत्र में एक नई राजधानी स्थापित करने का निर्णय लिया। इसी योजना के अंतर्गत लगभग बारह गाँवों को मिलाकर सन् 1702 ईस्वी के आसपास नागपुर नगर की स्थापना की गई तथा राजधानी को देवगढ़ से

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

यहाँ स्थानांतरित किया गया। इस प्रकार नागपुर का उदय केवल एक नए नगर की स्थापना नहीं था, बल्कि यह उस समय की बदलती राजनीतिक परिस्थितियों और क्षेत्रीय सत्ता-संतुलन का परिणाम था।

नागपुर की स्थापना का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष उस समय के राजनीतिक परिवर्तनों से जुड़ा हुआ था। मुगल सत्ता के साथ संघर्ष के बाद महिपत शाह को अपनी शक्ति पुनः संगठित करनी पड़ी। इसके लिए उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों के योद्धाओं विशेष रूप से मराठा और उत्तर तथा उत्तर-पश्चिमी भारत से राजपूतों और सैन्य समूहों के सहयोग से अपनी शक्ति को सुदृढ़ किया और अंततः अपनी खोई हुई सत्ता को पुनः प्राप्त किया। नई राजधानी की स्थापना के पीछे केवल प्रशासनिक कारण ही नहीं थे, बल्कि यह एक व्यापक राजनीतिक और सामरिक रणनीति का भी हिस्सा था। मैदान क्षेत्र में स्थापित नई राजधानी व्यापार, संचार और प्रशासन की दृष्टि से अधिक अनुकूल थी। महिपत शाह के उत्तराधिकारी चाँद सुल्तान ने भी नागपुर के विकास को आगे बढ़ाते हुए इसे एक संगठित और सुदृढ़ राजधानी के रूप में विकसित किया। इस प्रकार नागपुर धीरे-धीरे मध्य भारत की राजनीतिक गतिविधियों का एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गया।

नागपुर के विकास का तीसरा महत्वपूर्ण पहलू इसकी सामाजिक बसाहट और जनसंख्या संरचना से संबंधित था। एक नए नगर को विकसित करने के लिए विभिन्न क्षेत्रों से लोगों को यहाँ बसाना आवश्यक था। इसी उद्देश्य से राज्य की ओर से देश के विभिन्न भागों से सैनिकों, कारीगरों, व्यापारियों, कृषकों तथा अन्य पेशागत समूहों को नागपुर में बसने के लिए आमंत्रित किया गया। इन लोगों को उनकी योग्यता और कार्य के अनुसार भूमि, पद तथा अन्य सुविधाएँ प्रदान की गईं, ताकि वे अपने परिवारों के साथ यहाँ स्थायी रूप से बस सकें। परिणामस्वरूप नागपुर में विभिन्न जातीय, धार्मिक और पेशागत समूहों का आगमन हुआ। इन समूहों ने नगर के आर्थिक, सामाजिक और प्रशासनिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया तथा नागपुर एक संगठित और सक्रिय शहरी केंद्र के रूप में विकसित होने लगा।

इन विभिन्न समुदायों के आगमन के कारण नागपुर में भाषाई, सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता का एक अनूठा स्वरूप विकसित हुआ। विभिन्न क्षेत्रों से आए लोगों ने अपनी भाषाएँ, खान-पान की परंपराएँ, रीति-रिवाज और त्योहार साथ लाए। भाषा और संस्कृति का आदान-प्रदान हुआ। स्थानीय और राष्ट्रीय दोनों प्रकार के त्योहारों का सामूहिक रूप से आयोजन होने लगा, जिससे सामाजिक समन्वय और सांस्कृतिक आदान-प्रदान की प्रक्रिया को बल मिला। इस प्रकार नागपुर धीरे-धीरे एक ऐसे नगर के रूप में विकसित हुआ जो भारत की सांस्कृतिक विविधता का एक लघु रूप प्रतीत

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

होता है। आज भी इस शहर की सामाजिक संरचना, भाषाई विविधता और सांस्कृतिक जीवन में उस ऐतिहासिक प्रक्रिया की स्पष्ट झलक दिखाई देती है।

इस प्रकार प्रस्तुत शोध-पत्र में अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में नागपुर की स्थापना, महिपत शाह की सत्ता की पुनर्स्थापना के साथ नई राजधानी के निर्माण, विभिन्न क्षेत्रों से आए समुदायों की बसाहट तथा उनसे उत्पन्न सामाजिक और सांस्कृतिक समन्वय की ऐतिहासिक प्रक्रिया का अध्ययन किया गया है। यह अध्ययन इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि नागपुर का उदय केवल एक नगर के निर्माण की घटना नहीं था, बल्कि यह राजनीतिक परिवर्तन, सामाजिक पुनर्गठन और सांस्कृतिक समन्वय से उत्पन्न एक नए ऐतिहासिक युग की शुरुआत का प्रतीक था।

नागपुर की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

विदर्भ क्षेत्र का इतिहास अत्यंत प्राचीन और समृद्ध रहा है, जिसका उल्लेख महाभारत काल से लेकर महाजनपद युग और बाद के अनेक कालक्रमों तक विभिन्न ऐतिहासिक और पौराणिक स्रोतों में मिलता है। प्राचीन काल में यह क्षेत्र राजनीतिक, सांस्कृतिक और व्यापारिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में विकसित हुआ था। विभिन्न समयों में यहाँ अनेक शक्तिशाली राजवंशों का शासन रहा, जिनमें सातवाहन वंश, वाकाटक वंश, राष्ट्रकूट वंश, परमार वंश तथा यादव वंश प्रमुख थे। इन राजवंशों के शासनकाल में विदर्भ क्षेत्र ने राजनीतिक स्थिरता, सांस्कृतिक विकास और आर्थिक समृद्धि का अनुभव किया। प्राचीन काल में विदर्भ की एक प्रमुख राजधानी नंदिवर्धन थी, जिसे नगरधन के नाम से भी जाना जाता है। यह स्थान वर्तमान नागपुर से लगभग 28 किलोमीटर दूर स्थित है और प्राचीन काल में राजनीतिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों का एक महत्वपूर्ण केंद्र रहा। बाद में यह क्षेत्र गोंड राजाओं के अधीन आ गया और उनके विभिन्न वंशों ने देवगढ़, चांदा और मंडला से इस क्षेत्र पर शासन किया।

इसी गोंड शासन के अंतर्गत देवगढ़ के शासक बख्त बुलंद शाह, जिन्हें महिपत शाह के नाम से भी जाना जाता है, को नागपुर नगर की स्थापना का श्रेय दिया जाता है। बदलती राजनीतिक परिस्थितियों में उन्होंने मुगल सत्ता के साथ पहले सामंजस्य और बाद में संघर्ष, दोनों की नीति अपनाते हुए अपने राज्य की स्वतंत्र शक्ति को सुदृढ़ किया। देवगढ़ का पहाड़ी और घने जंगलों से घिरा क्षेत्र प्रशासनिक तथा सामरिक दृष्टि से सीमित हो गया था, इसलिए उन्होंने अपनी राजधानी को अधिक उपयुक्त स्थान पर स्थापित करने का निर्णय लिया। मुगल सैन्य प्रभुत्व से मुक्त होकर उन्होंने मैदान क्षेत्र में एक नए नगर के विकास की योजना बनाई। इसी योजना के अंतर्गत वर्तमान नागपुर के महल क्षेत्र के आसपास स्थित लगभग बारह गाँवों को मिलाकर एक नए नगर की स्थापना की गई और लगभग 1702 ईस्वी के

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

आसपास यहाँ उनका राज्यारोहण हुआ। इस प्रकार नागपुर एक नई राजधानी के रूप में उभरा, जिसने आगे चलकर मध्य भारत की राजनीतिक संरचना में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया।

नागपुर नाम की उत्पत्ति के संबंध में भी विभिन्न ऐतिहासिक मत प्रस्तुत किए जाते हैं। एक मत के अनुसार यह नगर नाग नदी के किनारे स्थित होने के कारण नागपुर कहलाया। दूसरा मत यह है कि इसका संबंध प्राचीन राजधानी नगरधन या नंदिवर्धन से है, जो रामटेक क्षेत्र के निकट विदर्भ की एक प्राचीन राजधानी थी और जहाँ से इस क्षेत्र की राजनीतिक गतिविधियों का संचालन होता था। कुछ इतिहासकार यह भी मानते हैं कि नागपुर नाम का संबंध प्राचीन नाग वंश या नाग जाति से हो सकता है, जिनका प्रभाव मध्य भारत के कई क्षेत्रों में देखा जाता है। इन विभिन्न ऐतिहासिक और भौगोलिक कारणों के आधार पर नागपुर का नाम और उसका उदय विदर्भ के प्राचीन इतिहास से गहराई से जुड़ा हुआ प्रतीत होता है।

राजनीतिक परिवर्तन और सैन्य संगठन

नागपुर की स्थापना केवल प्रशासनिक कारणों से नहीं हुई थी, बल्कि यह एक व्यापक राजनीतिक और सैन्य रणनीति का भी हिस्सा थी। मुगल शासन के विरुद्ध अपनी शक्ति को सुदृढ़ करने के लिए देवगढ़ के गोंड शासक बुलंद शाह ने विभिन्न क्षेत्रों के योद्धाओं और सैन्य समूहों को अपने साथ जोड़ा। उत्तर और उत्तर-पश्चिम भारत से आए अनेक योद्धा यहाँ बसाए गए, जिनमें विशेष रूप से राजपूत तथा अन्य युद्धक समुदाय प्रमुख थे। इन योद्धाओं की सहायता से उन्होंने अपनी सैन्य शक्ति को संगठित और सुदृढ़ किया। इसी क्रम में उन्होंने बुंदेलखंड के प्रसिद्ध योद्धा छत्रसाल बुंदेला के साथ भी राजनीतिक और सामरिक संबंध स्थापित किए। इस प्रकार विभिन्न शक्तियों के सहयोग से एक संयुक्त सैन्य संगठन का निर्माण हुआ, जिसने मुगल प्रभाव को चुनौती देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उस समय औरंगज़ेब दक्षिण भारत के दीर्घकालीन युद्धों में व्यस्त था, जिसके कारण मुगल सत्ता की पकड़ कई क्षेत्रों में कमजोर पड़ने लगी थी। इसी परिस्थिति का लाभ उठाकर मध्य भारत में कई क्षेत्रीय शक्तियाँ उभरने लगीं और अपनी स्वतंत्रता तथा शक्ति-संतुलन को स्थापित करने का प्रयास करने लगीं।

इन सैन्य संगठनों को प्राचीन राजधानी नागरधन के आसपास ठहराया गया। इस क्षेत्र से उनका ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संबंध भी एक महत्वपूर्ण कारण था, जिसके चलते वे यहाँ स्थायी रूप से बसने के लिए तैयार हुए। इससे राज्य की सुरक्षा और स्थायित्व को भी बल मिला तथा बाहरी आक्रमणों की संभावना को कम किया जा सका। इन्हीं परिस्थितियों में महिपत शाह ने पास के खुले मैदान वाले क्षेत्र में एक नई राजधानी स्थापित करने का निर्णय लिया, ताकि एक संगठित, सुरक्षित और सुदृढ़ राज्य

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

की स्थापना की जा सके। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप महिपत शाह की सेना, मराठा शक्ति और राजपूत योद्धाओं के बीच एक नया राजनीतिक और सैन्य समीकरण विकसित हुआ। इन संयुक्त सैन्य संगठनों के सहयोग से नागपुर क्षेत्र में एक नई राजनीतिक व्यवस्था और शक्ति-संतुलन का उदय हुआ, जिसने मध्य भारत के इतिहास में एक नए युग की शुरुआत का संकेत दिया।

नागपुर का सामाजिक विकास

नागपुर की स्थापना के बाद सबसे बड़ी आवश्यकता थी कि इसे एक विकसित और संगठित नगर के रूप में स्थापित किया जाए। इस उद्देश्य से विभिन्न व्यवसायों से जुड़े लोगों को यहाँ बसाया गया। शासकों ने सैनिकों, कारीगरों, व्यापारियों और किसानों को नागपुर में बसने के लिए भूमि, जागीर तथा प्रशासनिक और सैन्य पद प्रदान किए। विशेष रूप से युद्ध में सहयोग देने वाले राजपूत और लोधी योद्धाओं को जागीरें तथा सैन्य पद दिए गए, जिससे राज्य की सैन्य शक्ति भी सुदृढ़ हो सकी। इसके अतिरिक्त विभिन्न क्षेत्रों से आए कारीगरों और व्यापारियों ने भी इस नगर के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन सभी प्रयासों के परिणामस्वरूप नागपुर धीरे-धीरे एक विकसित नगर तथा बहु-सांस्कृतिक समाज के केंद्र के रूप में उभरने लगा।

गोंड शासक बख्त बुलंद शाह के पश्चात उनके पुत्र चाँद सुल्तान ने नागपुर के विकास को आगे बढ़ाया। उन्होंने नागपुर को पूर्ण रूप से अपनी राजधानी बनाया और प्रशासनिक गतिविधियों का संचालन यहीं से प्रारंभ किया। नगर की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए उन्होंने इसकी किलेबंदी करवाई तथा इसे एक संगठित और सुरक्षित नगर के रूप में विकसित करने का प्रयास किया। अठारहवीं शताब्दी के मध्य में नागपुर की राजनीति में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। सन् 1739 के आसपास मराठा शक्ति का इस क्षेत्र में प्रवेश हुआ और मराठा नेता रघुजी भोंसले के नेतृत्व में मराठों ने नागपुर क्षेत्र पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया। इसके पश्चात नागपुर भोंसले वंश के अधीन मराठा शासन की एक प्रमुख रियासत के रूप में विकसित हुआ और भोंसले शासकों की राजधानी बन गया।

मराठा शासन के समय नागपुर का राजनीतिक और प्रशासनिक प्रभाव अत्यंत व्यापक हो गया। भोंसले शासकों के अधीन इसका प्रभाव पूर्व में कटक (बंगाल क्षेत्र) से लेकर मध्य भारत और छत्तीसगढ़ तक फैल गया। इस प्रकार नागपुर अठारहवीं शताब्दी में मध्यभारत की राजनीति, प्रशासन और व्यापार का एक महत्वपूर्ण केंद्र बनकर उभरा।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

सांस्कृतिक समन्वय और नागपुरी संस्कृति का विकास

नागपुर के विकास की प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिए अलग-अलग समुदायों और पेशागत समूहों को यहाँ आमंत्रित किया गया। उस समय समाज की संरचना मुख्यतः पेशों और जातीय समूहों के आधार पर विभाजित थी, इसलिए विभिन्न क्षेत्रों से आए लोग अपनी-अपनी सामुदायिक विशेषताओं, परंपराओं और सांस्कृतिक पहचान के साथ यहाँ आकर बस गए। इन समुदायों के आपसी सामाजिक और सांस्कृतिक संपर्क तथा आदान-प्रदान के परिणामस्वरूप नागपुर में एक समन्वित सांस्कृतिक वातावरण का विकास हुआ। इस सांस्कृतिक समन्वय का प्रभाव आज भी नागपुर के सामाजिक जीवन, भाषा और परंपराओं में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

भाषाई दृष्टि से भी नागपुर क्षेत्र की एक विशिष्ट पहचान विकसित हुई। विभिन्न क्षेत्रों से आए लोगों के कारण यहाँ अनेक भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलित हुईं। स्थानीय भाषा और बाहरी क्षेत्रों से आई भाषाओं के परस्पर संपर्क से एक मिश्रित भाषाई स्वरूप विकसित हुआ, जो इस क्षेत्र की विशिष्टता बन गया। इस क्षेत्र में मराठी, नागपुरी, वरहाड़ी, नागपुरी मराठी, झाड़ी बोली, लोधांती, पोवारी, कोष्ठी और हलबी जैसी बोलियाँ प्रचलित रहीं। इन भाषाओं और बोलियों के परस्पर प्रभाव से नागपुर क्षेत्र की भाषाई संरचना अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक विविध और विशिष्ट दिखाई देती है।

इसी प्रकार खान-पान, रीति-रिवाजों, परंपराओं और त्योहारों में भी सांस्कृतिक समन्वय की झलक दिखाई देती है। स्थानीय परंपराओं के साथ-साथ विभिन्न क्षेत्रों से आए लोगों के त्योहार और सांस्कृतिक रीति-रिवाज भी यहाँ प्रचलित हो गए। परिणामस्वरूप पोला, जीवती, नाग पूजा, मरबत जैसे स्थानीय त्योहारों के साथ-साथ विभिन्न धर्मों के राष्ट्रीय और धार्मिक त्योहार भी नागपुर क्षेत्र में समान रूप से मनाए जाने लगे। इससे यहाँ की सामाजिक संरचना में सामूहिकता और सांस्कृतिक सहभागिता की भावना विकसित हुई। लोक-संस्कृति के क्षेत्र में भी इस सांस्कृतिक समन्वय का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। स्थानीय लोककलाओं के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों से आई लोककलाएँ भी यहाँ विकसित हुईं। उदाहरण के लिए बुंदेलखंड क्षेत्र से आए पवाड़े (वीरगाथात्मक लोकगीत) जैसी परंपराएँ नागपुर क्षेत्र में भी प्रचलित हुईं। इस प्रकार विभिन्न सांस्कृतिक तत्वों के समन्वय से नागपुर की लोक-सांस्कृतिक परंपरा समृद्ध और बहुआयामी बन गई।

इस प्रकार नागपुर की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता इसका सांस्कृतिक समन्वय है। अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में जिन सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं की शुरुआत हुई थी, उनके अनेक तत्व आज भी नागपुर के वर्तमान सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। यही

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

कारण है कि नागपुर को भारतीय सांस्कृतिक विविधता के एक जीवंत उदाहरण के रूप में भी देखा जा सकता है।

निष्कर्ष

अठारहवीं शताब्दी की शुरुआत में नागपुर का उदय मध्य भारत के इतिहास में एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना के रूप में देखा जा सकता है। यह केवल एक नए नगर की स्थापना भर नहीं थी, बल्कि उस समय की बदलती राजनीतिक परिस्थितियों, क्षेत्रीय सत्ता-संतुलन तथा सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप विकसित हुई एक व्यापक ऐतिहासिक प्रक्रिया थी। देवगढ़ के गोंड शासक बख्त बुलंद शाह (महिपत शाह) द्वारा स्थापित यह नगर प्रारंभ में एक नई राजधानी के रूप में उभरा, जिसने आगे चलकर मध्य भारत की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बाद के काल में रघुजी भोंसले के नेतृत्व में मराठा शक्ति के आगमन के पश्चात नागपुर मराठा शासन का एक प्रमुख राजनीतिक केंद्र बन गया और क्षेत्रीय सत्ता संरचना में इसका महत्व और अधिक बढ़ गया।

नागपुर की स्थापना के साथ ही इस नगर की बसाहट की प्रक्रिया प्रारंभ हुई, जिसके अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रों से सैनिकों, कारीगरों, व्यापारियों और कृषकों को यहाँ बसने के लिए आमंत्रित किया गया। इन लोगों को उनके कार्य और योग्यता के अनुसार भूमि, पद तथा अन्य सुविधाएँ प्रदान की गईं, जिससे वे अपने परिवारों सहित यहाँ स्थायी रूप से बस सकें। परिणामस्वरूप देश के विभिन्न भागों से आए लोगों का नागपुर में आगमन हुआ, जिसने यहाँ की सामाजिक संरचना को बहुआयामी बना दिया। इस प्रवास और बसाहट के कारण नागपुर में अनेक भाषाई, जातीय और धार्मिक समुदायों का समावेश हुआ, जिसने इस क्षेत्र में सामाजिक विविधता को जन्म दिया।

इन विभिन्न समुदायों के परस्पर संपर्क और आदान-प्रदान के परिणामस्वरूप नागपुर में एक विशिष्ट सांस्कृतिक समन्वय विकसित हुआ। विभिन्न क्षेत्रों से आए लोगों की भाषाएँ, खान-पान की परंपराएँ, रीति-रिवाज और त्योहार यहाँ की स्थानीय संस्कृति के साथ मिलकर एक नई सांस्कृतिक पहचान का निर्माण करने लगे। इसी कारण नागपुर क्षेत्र में अनेक भाषाओं और बोलियों का समन्वित स्वरूप दिखाई देता है, वहीं स्थानीय त्योहारों और परंपराओं के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों की सांस्कृतिक परंपराएँ भी यहाँ प्रचलित हो गईं। इस प्रकार नागपुर धीरे-धीरे एक ऐसे नगर के रूप में विकसित हुआ, जहाँ भारतीय समाज की विविधता और सांस्कृतिक समन्वय का जीवंत स्वरूप देखा जा सकता है।

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

अतः स्पष्ट है कि अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में नागपुर की स्थापना केवल एक प्रशासनिक या राजनीतिक घटना नहीं थी, बल्कि यह राजनीतिक परिवर्तन, नई राजधानी की स्थापना, विभिन्न क्षेत्रों से आए लोगों की बसाहट तथा उनसे उत्पन्न सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों की एक दीर्घकालिक ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम थी। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप नागपुर एक बहु-सांस्कृतिक समाज के रूप में विकसित हुआ, जिसकी झलक आज भी यहाँ की भाषा, संस्कृति और सामाजिक जीवन में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इसी दृष्टि से नागपुर का इतिहास भारतीय समाज की विविधता, सह-अस्तित्व और सांस्कृतिक समन्वय का एक महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करता है।

संदर्भ सूची

1. Jenkins, Richard. *Report on the Territories of the Raja of Nagpore*. London: Printed for the Government, 1827.
2. Duff, James Grant. *A History of the Mahrattas*. Vol. 1–3. London: Longman, Rees, Orme, Brown and Green, 1826.
3. Sarkar, Jadunath. *History of Aurangzib*. Vol. 1–5. Calcutta: M.C. Sarkar & Sons, 1912–1924.
4. Government of India. *Central Provinces District Gazetteer: Nagpur District*. Nagpur: Government Press, 1908.
5. Government of Maharashtra. *Nagpur District Gazetteer*. Mumbai: Directorate of Government Printing, Stationery and Publications, 1976.
6. *Census Report of the Central Provinces*. Nagpur: Government Press, 1868.
7. *Central Provinces Census Report*. Nagpur: Government Press, 1872.
8. *Census of India*. Vol. XI, *The Central Provinces and Feudatories*. Part I: *The Report*. Calcutta: Office of the Superintendent of Government Printing, 1891.
9. *Reports of the Nagpur Antiquarian Society*. Nagpur: Nagpur Antiquarian Society, Various Issues.
10. Sane, Hemant. “The Deogad–Nagpur Gond Dynasty.” Research Paper.

11. Government of Maharashtra. *Nagpur District Official Website*. Maharashtra Government.
12. Directorate of Gazetteers, Government of Maharashtra. *Maharashtra State Gazetteers: Nagpur District*. Mumbai.

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भारत के लोकतंत्र के सामने चुनौतियां और भविष्य की संभावनाएं

Dr Samina Perween

HOD, Department Political Science

Anjuman Girls Degree College of Arts Sadar, Nagpur (Maharashtra)

प्रस्तावना

स्वतंत्र भारत में लोकतंत्र की गौरांवित यात्रा 26 जनवरी 1950 से आरंभ होती है। लोकतांत्रिक देश में भारत एक महान और विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। लोकतंत्र का सबसे महत्वपूर्ण प्रकार आज एक प्रतिनिधित्व लोकतंत्र जिसमें नागरिक अपनी ओर से शासन करने के लिए सरकारी अधिकारियों का चुनाव करते हैं। नागरिकता मतदान का अधिकार न्यायपूर्ण सरकार अन्य पूर्ण सरकार से मुक्ति जीवन और स्वतंत्रता के अधिकारों और अल्पसंख्यक अधिकारों के सभी लोकतंत्र के स्तंभ हैं । भारतीय लोकतंत्र एक संप्रभु समाजवाद धर्मनिरपेक्ष और गणराज्य लोकतांत्रिक राज्य घोषित है यह मूलभूत राजनीतिक सहिंता संरचना प्रक्रियाओं शक्तियों और सरकारी संस्थाओं की कर्तव्यों को प्रभावित प्रभाव परिभाषित करने वाला ढांचा स्थापित करता है। यह मौलिक अधिकारों नीति निर्देशक सिद्धांतों और नागरिकों के कर्तव्य को भी निर्धारित करता है। भारतीय संविधान 26 जनवरी 1950 को अपनाया गया जो लोकतंत्र का दर्पण के रूप में माना जाता है 1 लोकतंत्र जिसमें लोग प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेते हैं। प्रतिनिधित्व की एक प्रणाली के माध्यम से जिसमें समय-समय पर स्वतंत्र चुनाव होते हैं लोकतंत्र शब्द ग्रीक शब्द से लिया गया है जो दो शब्दों से मिलकर बना है डेमोंस तथा क्रेटोस। डेमोंस का अर्थ है लोग और क्रेटोस का अर्थ है इस तरह लोकतंत्र का अर्थ है जनता की शक्ति प्रजातंत्र की सबसे बेहतरीन परिभाषा इब्राहिम लिंकन द्वारा दी गई है जिन अनुसार---लोकतंत्र शासन जनता का जनता के लिए और जनता द्वारा शासन है I

इसी प्रकार बात ही संविधान निर्माता डॉक्टर बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर के अनुसार लोकतंत्र का अर्थ एक ऐसी जीवन पद्धति जिसमें स्वतंत्रता समानता और बंधुता समाज जीवन के मूल सिद्धांत होते हैं।

डेविड हेड ने कहा है कि मेरा मानना है की सबसे रक्षात्मक और लोकतंत्र का आकर्षक स्वरूप हुआ है जिसमें नागरिक विभिन्न क्षेत्रों में निर्णय लेने में भाग लेते हैं लोकतंत्र की एक और अन्य सबसे महत्वपूर्ण परिभाषा दी गई है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भारतीय संविधान निर्माता में से एक डॉ.बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर के अनुसार- लोकतंत्र का अर्थ है एक ऐसी जीवन पद्धति जिसमें स्वतंत्रता समानता बंधुता समाज जीवन की मूल सिद्धांत होते हैं।26 जनवरी 1950 को उपरोक्त वर्णित सिद्धांतों की प्राप्ति के लिए भारत में लोकतंत्र की विविधिवत स्थापना हुई भारत देश का सबसे पुरानी सभ्यता में से एक है जिसमें विविधता में एकता और समृद्ध संस्कृति विरासत है। भारतीय संस्कृति इस विषय में अन्य संस्कृतियों से भिन्न है कि अभी भी भारत अपनी प्राचीनतम परंपराओं को समझो ने के साथ-साथ उनमें नवीन तभी लाता है। आजादी पाने के बाद भारत में बहु आयामी सामाजिक और आर्थिक प्रगति की है। भारत दुनिया में एकमात्र राष्ट्र है जी जिसे हर वयस्क नागरिक को स्वतंत्रता के बाद पहले दिन से ही मतदान का अधिकार देकर राजनीतिक न्याय स्थापित कर दिया। अमेरिका ब्रिटेन जैसे कई लोकतंत्र देश जिन्होंने राजनीतिक न्याय की स्थापना में वर्षों का समय लगा दिया।तंत्र निष्पक्ष और पारदर्शी चुनाव एक अच्छे लोकतंत्र की स्थापना की कुंजी है क्योंकि चुनाव ही वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से जनता अपनी संप्रभुता का हस्तांतरण करती है भारत अपनी चुनाव प्रणाली पर निश्चित रूप से गर्व कर सकता है।निष्पक्ष निर्वाचन आयोग की कार्य कुशलता से भारत में सट्टा का समयबद्ध और निर्बाध निर्वाचन हस्तांतरण हुआ है जबकि भारत के साथ ही स्वतंत्र कई देशों में तानाशाह तथा सैन्य शासन भी लागू हुआ है।आज तक भारत में मात्र एक बार आपातकाल का प्रयोग हुआ जिसमें भारत ने यह महसूस किया कि सरकार द्वारा लोकतंत्र कमजोर किया जा रहा है तब भारत की इसी जनता ने आपातकाल का जवाब दिया और सट्टा रोड कांग्रेस पार्टी पहली बार विपक्ष में बैठी भारत में न्यायालय ने कई बार मूल्य अधिकारों की रक्षा के लिए सांसदी कानून कानून तथा कार्यपालिका आदेशों को वैध घोषित कर देश में व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा कर लोकतांत्रिक सिद्धांतों को जीवित रखा है।

1947 में देश की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में लोकतांत्रिक सरकार का गठन हुआ था हमारे देश में केंद्र और राज्य सरकार का चुनाव करने के लिए हर पांच साल में संसदीय और राज्य विधानसभा चुनाव आयोजित किए जाते हैं। लोकतंत्र को विश्व का सबसे अच्छे शासन प्रणाली के रूप में जाना जाता है या देश की प्रत्येक नागरिकों को वोट देने की देने का और उनकी जाति रंग भेद धर्म और लिंग के बावजूद अपनी इच्छा से अपने नेताओं का चयन करने की अनुमति प्रदान करता है।हमारे देश में सरकार आम लोगों द्वारा चुनी जाती है या कहना गलत नहीं होगा कि उनकी बुद्धि और जागरूकता है कि जिससे वे सरकार की सफलता या असफलता निर्धारित करते हैं।भारत सहित दुनिया की कई देशों में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था लागू है इसके साथ ही भारत को विश्व का सबसे बड़े लोकतंत्र के रूप में भी जाना जाता

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

है। हमारे देश में लोकतंत् समाजवाद धर्मनिरपेक्षता लोकतांत्रिक गणराज्य सहित पांच लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर कार्य करता है ।1947 में अंग्रेजों के औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद भारत को एक लोकतांत्रिक राष्ट्र घोषित किया गया था आज के समय हमारे देश में न केवल विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र के रूप में जाना जाता है बल्कि इसके साथ ही इसे विश्व के सबसे सफल लोकतंत्र में से भी एक लोकतंत्र के रूप में भी जाना जाता है भारत को विश्व का सबसे अधिक आबादी वाला लोकतंत्र माना जाता है देश में चुनाव की शुरुआत 1951 52 के भारतीय आम चुनाव से हुई थी भारत उन पहले औपनिवेशिक राष्ट्रों में से एक था जिन्होंने सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार को अपनाया जिससे सभी वयस्क नागरिकों को मतदान का समान अधिकार प्राप्त हुआ भारतीय लोकतंत्र का एक संघीय रूप है जिसके अंतर्गत केंद्र में एक और सरकार जो संसद की प्रति उत्तरदाई है तथा राज्य के लिए अलग-अलग सरकार है जो अनेक विधानसभाओं के लिए समान रूप से जवाब दे है भारत के कई राज्यों में नियमित अंतराल पर चुनाव आयोजित किए जाते हैं इन चुनाव में कई पार्टियों केंद्र तथा राज्यों में जीत का सरकार बनाने के लिए प्रतिस्पर्धा करती है अक्सर लोगों को सबसे योग्य उम्मीदवारों का चयन चयन चुनाव करने के लिए अपने अधिकारों का इस्तेमाल करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है लेकिन फिर भी जातीय समीकरण भारतीय राजनीति में भी एक बड़ा कारक है चुनाव प्रक्रियाओं को मुख्य रूप से प्रभावित करते हैं भारत में लोकतंत्र का मतलब केवल वोट देने का अधिकारी नहीं है बल्कि सामाजिक आर्थिक समानता को भी सुनिश्चित करना है हालांकि हमारे देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था को विश्व व्यापी प्रशंसा प्राप्त हुई है पर अभी भी ऐसे कई क्षेत्र हैं जिसमें हमारे लोकतंत्र को सुधार की आवश्यकता है ताकि लोकतंत्र को सही मायने में परिभाषित किया जा सके सरकार को लोकतंत्र को सफल बनाने के लिए निष्पक्षता गरीबी सांप्रदायिकता जातिवाद के साथ-साथ लैंगिक भेदभाव को खत्म करने के लिए भी काम करना चाहिए लोकतंत्र को विश्व का सबसे अच्छे शासन प्रणालियों के रूप में जाना जाता है यही कारण है कि हमारे देश में संविधान निर्माता और नेताओं ने शासन प्रणालियों के रूप में लोकतांत्रिक व्यवस्था का चयन किया हमें अपने देश के लोकतंत्र को और भी मजबूत करने की आवश्यकता है वर्तमान समय में भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र देश है

लोकतंत्र एक प्रकार का शासन व्यवस्था है जिसमें सभी व्यक्ति को समान अधिकार होता है एक अच्छा लोकतंत्र वह है जिसमें राजनीतिक सामाजिक न्याय के साथ-साथ आर्थिक न्याय की व्यवस्था भी है देश में या शासन प्रणाली लोगों को सामाजिक राजनीतिक तथा धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करती है डॉ भीमराव अंबेडकर के नेतृत्व वाली विविध संविधान सभा द्वारा तैयार किया गया भारत का संविधान

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

एक आधुनिक लोकतांत्रिक गणराज्य की स्थापना करता है यह समानता और सार्वभौमिक मताधिकार सुनिश्चित करते हुए विधायिका न्यायपालिका और कार्यपालिका की शक्तियों तथा संबंधों को भी रेखांकित करता है भारत वैश्विक लोकतंत्र का एक स्तंभ है भारत की लोकतांत्रिक सरकार समानता स्वतंत्रता बंधुता और न्याय के सिद्धांतों पर आधारित है भारत में राज्य सरकार और केंद्र सरकार है जिसका अर्थ है यह है कि एक संघीय शासन प्रणाली केंद्र और राज्य सरकार ने क्रमशः लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित सरकारों और सांसदों के संसद के दोनों सदनों राज्यसभा और लोकसभा का पालन करती है भारत की सांसद देश की सर्वोच्च विधाई संस्था है इस और इसकी द्विसदनीय संरचना राज्यसभा और लोकसभा से मिलकर बनी है भारत के राष्ट्रपति जो राज्य के औपचारिक प्रमुख के रूप में कार्य करते हैं जो विधायिका का एक औपचारिक घातक है

भारतीय लोकतंत्र की वास्तविक भूमिका

1) सशक्तिकरण और प्रतिनिधित्व --- भारत में लोकतंत्र का अर्थ सभी नागरिकों को विशेष कर गरीब और महिलाओं के लिए मतदान स्थानीय शासन और निर्णय लेने की प्रक्रिया में सार्थक भागीदारी सुनिश्चित करना है। भारतीय प्रजातंत्र में महिला सशक्तिकरण का उद्देश्य महिलाओं को निर्णय लेने आर्थिक स्वतंत्रता और समानता सुनिश्चित करना है नारी शक्ति वंदना अधिनियम 2023 द्वारा संसद में 1/3 आरक्षण और पंचायत में 45% से अधिक भागीदारी से राजनीतिक प्रतिनिधित्व बड़ा है। महिलाओं 18वीं लोकसभा 2024 में महिला सांसदों की भागीदारी 13.6% तक पहुंची है पंचायती राज संस्थाओं में 45.6% से अधिक महिला प्रतिनिधि एडवर कार्यरत है जो जमीनी स्तर पर नेतृत्व नेतृत्व को दर्शाती है महिलाओं की स्वरोजगार में भागीदारी 51.9% से बढ़कर 2024 में 67.4% हो गई है शिक्षा और कौशल्या विकास के माध्यम से महिलाएं आईटी अनुसंधान और स्टार्टअप जैसे क्षेत्रों में भी आगे बढ़ रही है संविधान के अनुसार 21 समानता सामान और स्वतंत्रता सुनिश्चित करता है जहाज प्रतिषेध अधिनियम 1961 घरेलू हिंसा से महिला सुरक्षा संरक्षण अधिनियम 2005 जैसे कानून के जारी हिंसा और असमानता के खिलाफ सुरक्षा दी गई है।

2) सामाजिक और आर्थिक समानता ---- वास्तविक लोकतंत्र केवल राजनीतिक ही नहीं बल्कि सामाजिक आर्थिक समानता पर आधारित है जहां राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के जरिए आर्थिक न्याय का प्रयास किया जाता है सामाजिक आर्थिक समानता एक ऐसी स्थिति है जहां जाति लिंग धर्म और जन्म स्थान के भेदभाव के बिना सभी को समान अधिकार अवसर और संसाधनों शिक्षा स्वास्थ्य आए तक समान अधिकार दिए जाते हैं यह समझ में निष्पक्षता शोषण की समाप्ति और एक कल्याणकारी

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

राज्य का निर्माण करने पर जोर देती है। भारतीय संविधान के मौलिक अधिकार अनुच्छेद 14 से 18 समानता का अधिकार छुआछूत का अंत और भेदभाव का निषेध सुनिश्चित करता है भारतीय प्रजातां में आर्थिक समानता सभी नागरिकों के लिए आज जीविका के समान अवसर भोजन वस्त्र अवसर आवास और बुनियादी आवश्यकताओं तक पहुंचाते हैं सामाजिक आर्थिक समानता के बिना राजनीतिक लोकतंत्र अधूरा है।

3) नागरिक अधिकार और स्वतंत्रता---- यह नागरिकों की गरिमा और उनके मौलिक अधिकार स्वतंत्रता समानता की रक्षा करता है संविधान के अनुच्छेद में मौलिक अधिकार ऑन के प्रकार की मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गई है । भारतीय प्रजातंत्र में नागरिकों को संविधान के भाग 3 अनुच्छेद 12 से 35 के तहत मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रताएं प्रदान की गई हैं जिसमें स्वतंत्रता भाषण अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता धर्म की स्वतंत्रता और कानून के समक्ष समानता शामिल है यह व्यवस्था राज्य की मनमानी कारवाइस के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करती है और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा संरक्षित है। भारतीय संविधान में कुल 6 प्रकार के मौलिक अधिकार दिए गए हैं इन अधिकारों द्वारा राज की सुरक्षा सार्वजनिक व्यवस्था और नैतिकता के आधार पर उचित प्रबंध भी लगाए जा सकते हैं।

4) विविधताओं का समावेश---- भारत का लोकतंत्र अपनी विविधता पूर्ण विरासत को साथ लेकर चलता है और विभिन्न धर्म जातियों और संस्कृतियों को समान अवसर प्रदान करता है

5) स्वतंत्र न्यायपालिका ---स्वतंत्र न्यायपालिका। लोकतंत्र सरकार की एक और विशेषता है सौतन न्यायपालिका का अर्थ है कि लोकतंत्र सरकार में न्यायपालिका को विधायिका और कार्यपालिका पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं होती है बड़ी प्रजातां में स्वतंत्र न्यायपालिका एक आधारशिला है जो विधायिका और कार्यपालिका के अनुच्छेद हस्तक्षेप से मुक्त रहकर संविधान कानून और नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करती है यह सर्वोच्च न्यायालय के नेतृत्व में एकीकृत प्रणाली है जो निष्पक्ष निर्णय सुनिश्चित करती है संविधान का रक्षक, न्यायिक समीक्षा judicial review नियुक्ति प्रक्रिया कार्यकाल की सुरक्षा, निष्पक्ष और भय मुक्त निर्णय स्वतंत्र न्यायपालिका का प्रकार है स्वतंत्र न्यायपालिका के बिना लोकतंत्र का अस्तित्व नहीं रह सकता क्योंकि यह शक्ति शक्तियों के दुरुपयोग को रोकते हैं और समानता के भाव को बढ़ावा देती है संविधान की रक्षा करती है।

6) नीति निर्देशक सिद्धांत प्रजातंत्र का आधार--- भारतीय संविधान के भाग ४ अनुच्छेद 36 से 51 में निहित राजनीति निदेशक सिद्धांत एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिए आवश्यक सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक न्याय के आधार हैं आयरलैंड से प्रेरित किया सिद्धांत सरकार के लिए नीति

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

निर्माण में मार्गदर्शक है जो देश में सच्चा लोकतंत्र सुनिश्चित करते हैं नीति निर्देशक सिद्धांतों के अंतर्गत लोक कल्याणकारी राज्य आर्थिक न्याय सामाजिक न्याय स्वशासन और राजनीतिक एवं कानूनी न्याय स्थापित करते हैं। समाजवादी सिद्धांत गांधीवादी सिद्धांत उदार और भौतिक सिद्धांत प्रजातंत्र की आधारशिला माना जाता हैं

भारतीय लोकतंत्र के सम्मुख चुनौतियां

भारतीय शासन व्यवस्था में लोक लोकतंत्र को शुद्ध रूप से अपनाया गया है। लेकिन इसके समक्ष विभिन्न प्रकार की समस्या और चुनौतियां भी देखी जा सकती हैं इन समस्याओं में सांप्रदायिक बाद जातिवाद क्षेत्रवाद गरीबी हिंसा अपराधीकरण क्षेत्रीय विभिन्नताएं और शिक्षा सामाजिक एवं आर्थिक क्षमता और जनसंख्या वृद्धि मुख्य है भारत का लोकतंत्र निरक्षरता गरीबी महिलाओं के खिलाफ भेदभाव जातिवाद और संप्रदायिकवाद क्षेत्रवाद भ्रष्टाचार राजनीति के अपराधीकरण और हिंसा की चुनौतियों का सामना कर रहा है लोकतंत्र की सफलता काफी हद तक साक्षरता पर निर्भर करती है लेकिन भारत में निरक्षरता को खत्म करना अभी भी संभव नहीं हो पाया है

सरकार को लोकतंत्र में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जो निम्नलिखित बिंदुओं से व्याख्या की जा सकतीं है।

1) राजनीति का अपराधीकरण--- राजनीति मैं अपराधीकरण मुख्य खतरों में से एक है लोकतंत्र में आमतौर पर इसका मतलब है प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराधियों का राजनीतिक दलों और विधान मंडल के माध्यम से चुनाव में राजनीतिक प्रक्रियाओं को प्रभावित करने के तरीके और रणनीति या लोकतंत्र को और अधिक अव्यवस्था और बाधित बनता है क्योंकि यह कानून तोड़ने वाले कानून निर्माता बन जाते हैं जो वहां है कानून व्यवस्था बिगड़ने की आशंका समाज के साथ-साथ लोकतांत्रिक कामकाज में शामिल हो जाते हैं अनेक राजनीतिक दलों में भारत में शामिल राजनीतिक सत्ता हासिल करने के लिए अपराधी को अपराधियों के ग्रहों के साथ-साथ या अपने स्वार्थ के लिए अपराधीकरण के कारण राजनीति में लोकतंत्र का लगातार हरण हो रहा है समाज के मूल्य बिहार में 1997 के चुनाव में जैसे आपराधिक पृष्ठभूमि वाले 67 राजनेता थे। राजनीति में बाहुबल और धन का प्रभाव साथी प्रशासनिक भ्रष्टाचार संस्थाओं की जवाब दे ही को कमजोर करते हैं वोट बैंक की राजनीति के लिए धर्म और जाति का इस्तेमाल करना सामाजिक 100 सोहार्द और एकता के लिए खतरा है। जो जनता का विश्वास को काम करता है राजनीति की अपराधीकरण जैसी गंभीर चुनौती का सामना सामना करना एक संकट का विषय fहै मजबूत लोकतंत्र और उत्तरदाई शासन के लिए एक ही बड़ी चुनौती है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

वर्तमान परिपेक्ष में राजनीति का प्राधिकरण एक गंभीर चिंता का विषय है जहां डर अदर की रिपोर्ट के अनुसार 2024 18वीं लोकसभा में 43% से अधिक सदस्यों के खिलाफ आपराधिक मामले हैं जिनमें से 29% गंभीर हत्या बलात्कार जैसे मामले मामले हैं यह धनबल बाहुबल और राजनीतिक अपराधी के कारण लोकतांत्रिक मूल्यों कानून के शासन और सुशासन पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है सांख्यिकी वृद्धि 2004 में आपराधिक पृष्ठभूमि वाले सांसद 24% थे जो 2019 से बढ़कर 43% हो गए और यह प्रवृत्ति 2024 में बढ़कर 43% हो चुकी है जो एक गंभीर विषय को दर्शाता है

2) सामाजिक आर्थिक विषमता--- लोकतंत्र की सफलता के लिए उसकी आर्थिक लोकतंत्र और सामाजिक लोकतंत्र से गठबंधन आवश्यक है आर्थिक लोकतंत्र का अर्थ की समाज के प्रत्येक सदस्य को अपने विकास की समान भौतिक सुविधाएं मिले लोगों के बीच आर्थिक विषमता अधिक ना हो और एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का शोषण न कर सके एक और निर्धनता और दूसरी ओर विपुल संपन्नता के वातावरण में लोकतंत्रात्मक राष्ट्र का निर्माण संभव नहीं है वहीं सामाजिक लोकतंत्र का अर्थ है कि सामाजिक स्तर पर विशेष अधिकारों का अभाव हो परंतु भारत में अभी भी यह दोनों ही स्थाई रूप से स्थापित नहीं हो सके हैं हमारे देश में एक प्रतिशत अमीरों के पास देश की 85% से अधिक संपत्ति है देश के 63 अरबपतियों की कुल संपत्ति राष्ट्रीय बजट के बराबर है इस असमानता के साथ ही देश लैंगिक जातीय धार्मिक भेदभाव वास्तविक लोकतंत्र की स्थापना को रोकता है।

बाद में सामाजिक आर्थिक विषमता एक गंभीर मुद्दा है जहां शहीद शीर्ष 10% आबादी के पास कुल राष्ट्रीय आय का 57% हिस्सा है जबकि निकली 50% आबादी केवल 13% आय अर्जित करती है लगभग 21.02% आबादी अभी भी अत्यधिक गरीबी में जी रही है जाति लिंग क्षेत्र और संपत्ति के आधार पर व्याप्त असमानता शिक्षा स्वास्थ्य रोजगार के अवसरों तक पहुंच को सीमित करती है महिला श्रमिकों की आय में हिस्सेदारी मात्र 18%है इस अवधि में बेरोजगारी दर 6.5%से बढ़कर 8.6% हो गई है।

3) प्रजातंत्र और दल बादल की राजनीति---- भारतीय लोकतंत्र में दल बादल की राजनीतिक गंभीर चुनौती है जो राधा धनादेश का अपमान और राजनीतिक और सीता पैदा करती 1985 की 42 में संविधान संशोधन 10वीं अनुसूची के जरिए दल बदल विरोधी कानून लागू किया गया था लेकिन सत्ता के लालच में इसकी दुरुपयोग जैसे 2/3 विलय का अपवाद ने सरकार को गिराने और नैतिक मूल्यों को कम करने का काम किया है

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

जनता एक विचारधारा एक पार्टी को वोट देकर चुनती है लेकिन प्रतिनिधि पद के लालच में दल बदल लेते हैं। इसमें राज्यों में चुनी हुई सरकारी गिर जाती है जैसे ,(महाराष्ट्र मणिपुर गोवा) और और अस्थिरता बनी रहती है। 1985 का 52 व संशोधन कानून जो इसे रोकने के लिए बना था अब अपने 2/3विलय के अपवादों के कारण खुद दुरुपयोग का शिकार हो रहा है। भारतीय लोकतंत्र में जनता अपना राजनीतिक विश्वास किसी विशेष व्यक्ति या राजनीतिक दल के मतदान द्वारा व्यक्त कर संसार दिया विधानसभा के लिए निर्वाचित करती है और आशा करती है कि व्यक्ति उनके विश्वास के अनुसार ही कार्य करेगा लेकिन धन और पद की लालच में यहां प्रतिनिधि जनता के विश्वास को तोड़ते हुए पक्ष परिवर्तन अर्थात पार्टी छोड़कर अन्य राजनीतिक दल में चले जाते हैं 1960-70 के दशक में आया राम गया राम की राजनीति देश में काफी प्रचलित हो गई थी दरअसल अक्टूबर 1967 को हरियाणा के एक विधायक गया लाल ने 15 दिन में के भीतर तीन बार दल बदल इस मुद्दे को राजनीतिक मुख्य धारा में लाकर खड़ा कर दिया इसी के साथ जल्द ही दलों को मिलने मिले जनादेश का उल्लंघन करने वाले सदस्यों को चुनाव में भाग लेने से रोकने तथा आयोग घोषित करने की जरूरत महसूस होने लगी ।वर्ष 1985 में संविधान संशोधन के जरिए दल बदल विधायक कानून लाया गया। वास्तविक रूप में देखा जा सकता है कि भारतीय लोकतंत्र में दल बादल की राजनीति न केवल एक आम आदमी के विश्वास को खोने वाला कार्य बल्कि लोकतंत्र को कमजोर करने वाली कड़ी मानी गई है। जिसने राजनीतिक अपराधीकरण को भी बढ़ावा दिया है। जनता का जनता के लिए और जनता द्वारा शासन ही लोकतंत्र है। लोकतंत्र में जनता ही सत्ताधारी होती है उसकी अनुमति से शासन होता है उसकी प्रगति ही शासन का एकमात्र लक्ष्य माना जाता है अन्य शब्दों में कहां जा सकता है कि इसके कारण अंतर दलीय लोकतंत्र पर प्रभाव पड़ता है और डाल से जुड़े सदस्यों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता खतरे में पड़ जाती है परंतु यह कानून जनता का नहीं बल्कि दलों के शासन की व्यवस्था अर्थात पार्टी राज को बढ़ावा देती है कई विशेषज्ञ यह भी तर्क देते हैं कि दुनिया में कई परिपक्व लोकतंत्रो में दल बदल विरोधी कानून जैसी कोई व्यवस्था नहीं है। उदाहरण के लिए इंग्लैंड ऑस्ट्रेलिया अमेरिका आदि देशों में जनप्रतिनिधि अपने दलों के विपरीत मत रखते हैं या पार्टी लाइन से अलग जाकर पोर्ट करते हैं तो भी वह इस पार्टी में बने रहते हैं।

दल बदल विरोधी कानून सरकार पर विधायिका के नियंत्रण को कमजोर करता है क्योंकि यह विधानमंडल सदस्यों को राजनीतिक दल के शीर्ष नेतृत्व द्वारा लिए गए निर्णय के आधार पर मतदान करने के लिए बातें करता है दल बदल विरोधी कानून वास्तव में कार्यपालिका और विधायिका के भी शक्तियों की पृथक्करण को काम करता है और कार्यपालिका के हाथों में शक्ति को केंद्रीकृत करता है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

दल बादल की इस भयंकर समस्या पर विचार करने की सही स्पष्ट होता है की समस्या पर नियंत्रण कानून बनाने से नहीं वरन सभी महत्वपूर्ण राजनीतिक दल सर्वसम्मति से राजनीतिक नैतिकता से कुछ मूल्यों को निर्धारित करें और उन मूल्यों के प्रति ईमानदारी से रहे तभी इन समस्या का समाधान संभव है।

4) स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव---भारत निर्वाचन आयोग (ECI) एक स्वतंत्र संवैधानिक निकाय है जो भारत में लोकतंत्र से लेकर राष्ट्रपति तक सभी चुनाव कराने के लिए उत्तरदाई है भारत निर्वाचन आयोग को अपनी शक्तियों कार्य भारत के संविधान के अनुच्छेद 324 के तहत प्राप्त हुए इसके पास संपूर्ण प्रक्रिया की देखरेख निर्देशन और नियंत्रण का अधिकार है ।नियमों के बावजूद चुनाव में धान का प्रभाव एक चुनौती बना हुआ है अवैध फंडिंग , बेहिसाब व्यय और प्रचार में काले धन का इस्तेमाल चुनावी प्रक्रिया की निष्पक्षता को कमजोर करती है। आदर्श आचार संहिता का उल्लंघन करने के मामले बढ़ रहे हैं। निर्वाचन आयोग को नैतिक मानकों को प्रभावी ढंग से लागू करने, समान अवसर सुनिश्चित करने और उल्लंघनो को तेजी से संबोधित करने की चुनौती का सामना करना पड़ता है ।निर्वाचन प्रक्रिया में प्रौद्योगिकी के बढ़ते उद्योग उपयोग से साइबर सुरक्षा संबंधी नई चुनौतियां सामने आई है। चुनाव परिणाम की विश्वसनीय बनाए रखने के लिए इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन एवं और मतदाताओं डेटाबेस को हैकिंग से सुरक्षित रखना महत्वपूर्ण है निर्वाचन आयोग की अपनी स्वतंत्रता बनाए रखने और अनुचित राजनीतिक प्रभाव का विरोध करने की क्षमता कम होती दिखाई दी है । वर्तमान में वोट चोरी की आरोपी और इलेक्ट्रॉनिक मशीन के हैकिंग के कारण निर्वाचन प्रक्रिया में जनता के विश्वास को कमजोर कर दिया है। स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव भारतीय लोकतंत्र का आधार है।

5) लोकतंत्र में सत्ता का विकेंद्रीकरण---लोकतंत्र में सत्ता का विकेंद्रीकरण केंद्रीय सरकार के निर्णय लेने की शक्ति और संसाधनों को स्थानीय निकायों पंचायत और नगर पालिकाओं को रोकने की प्रक्रिया है ।यह शासन में लोगों को प्रत्यक्ष भागीदारी बढ़कर स्थानीय समस्याओं का प्रभावी समाधान और सुशासन निश्चित करता है 73वें और 74वें संविधान संशोधन के द्वारा भारत में इसे अनिवार्य बनाया गया है। 1957 में बलवंत राय मेहता समिति ने इसकी सिफारिश की और उसके बाद पंचायती राज 73 व संशोधन और नगर निकाय 74वां संशोधन प्रणाली अपनाई गए। स्थानीय निकायों द्वारा अपनी समस्याओं का तुरंत समाधान स्थानीय प्रतिनिधियों की सीधे जनता की प्रति जवाब दे ही और कमजोर वर्ग अनुसूचित जातियों महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करता है। लेकिन भारत में स्थानीय सरकारों के पास अभी भी वित्तीय संसाधनों और स्वायत्तता की कमी है। वित्तीय स्वायत्तता की कमी स्थानीय अभिजात वर्ग का प्रभु प्रशासनिक क्षमता में कमी भ्रष्टाचार और राजनीतिक दलों के निर्णय जैसी

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

समस्याएं प्रमुख है जो इससे प्रभावित होने से रोकते हैं। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के सामने मुख्य चुनौती धन के लिए राज्य को केंद्र सरकार पर निर्भर रहना , बाहुबली विकेंद्रीकृत संस्थाओं का कब्जा, स्थानीय प्रतिनिधियों में तकनीकी ज्ञान कुशलता ब्राह्मण और विकास योजना को क्रियान्वित करने की क्षमता का अभाव, गरीबी निरक्षरता आर्थिक बाधाओ के कारण आम जनता शासन प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग नहीं ले पाती। सत्ता के विकेंद्रीकरण के साथ-साथ भ्रष्टाचार का विकेंद्रीकरण भी हुआ है जिस ठेकेदार और आपराधिक तत्वों का स्थानीय प्रशासन में हस्तक्षेप बड़ा है। कुछ ग्राम पंचायत के पास अपना भवन नहीं है और वह स्कूलों आंगनबाड़ी केंद्रों और अन्य स्थानों के साथ जगह साझा करते हैं। शौचालय पेयजल और बिजली कनेक्शन जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव यह सभी समस्याएं लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था के लिए गंभीर चुनौती है।

6) भारतीय राजनीति में बढ़ता भ्रष्टाचार---भ्रष्टाचार लोकतांत्रिक संस्थाओं को कमजोर करता है आर्थिक विकास की रफ्तार को धीमा करता है और सरकार में अस्थिरता पैदा करने में भूमिका अदा करता है यह कहना है मरेला डम्मर फ्रेंही फेही का जो संयुक्त राष्ट्र मादक पदार्थों और अपराध कार्यालय (unencode) में सिविल सोसाइटी टीम लीडर है

भारत के प्रधानमंत्री ने 76 से स्वतंत्र दिवस पर अपने संबोधन में भ्रष्टाचार और भाई भतीजा बात की दोहरी चुनौतियों के खिलाफ टीका प्रहार किया और कहा कि यदि समय पर इसका समाधान नहीं किया गया तो यह बड़ी चुनौती बन सकती है। साथी ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल द्वारा भ्रष्टाचार बोध सूचकांक 2023 (CPI)की जारी किया । भारत में भ्रष्टाचार बोध सूचकांक 2023 में 40 अंक प्राप्त किया।

भ्रष्टाचार सत्ता के पदों पर बैठे लोगों द्वारा किया गया आसन्निस्ठ व्यवहार है।

भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में पारदर्शिता की कमी कमजोरी संस्थाएं एवं आप प्रभावित कानूनी ढांचे कम वेतन और प्रोत्साहन नौकरशाही और लालफीताशाही राजनीतिक हस्तक्षेप संस्कृत कारण आदि भ्रष्टाचार के मुख्य कारण है। वर्तमान परिपेक्ष में राजनीति का अपराधीकरण एक गंभीर चिंता का विषय है। भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में भ्रष्टाचार एक गंभीर चुनौती है जो सामान्य जवाब दे ही और कानून के शासन जैसे मूल सिद्धांतों को कमजोर करता है यह शासन व्यवस्था में अनैतिक आचरण के माध्यम से विकास दर को धीमा करता है और जान विश्वास को काम करता है राजनीतिक प्रशासनिक और सामाजिक स्तरों पर पहले इस भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए कानूनी उपाय जैसे R T I , PMLA , 1988 का सजा निवारण अधिनियम और डिजिटल इंडिया जैसे पहले के द्वारा सुशासन और नैतिक शासन की संस्कृति को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। भारतीय शासन व्यवस्था में भ्रष्टाचार सर्वव्यापी

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

हो गया है। जीवन का कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं है बस सचान हमारे रोजमर्रा के जीवन को भी अनेक रूपों से प्रभावित कर रहा है ट्रांसपेरेंसी करप्शन इंडेक्स के अनुसार भ्रष्टाचार के मामलों में 180 देश की सूची में भारत का 85 वा स्थान है। लोकतंत्र वास्तव में चुनाव पर मुख्ता आधारित है किंतु भारत में मतदाताओं के लिए चुने का और राजनीतिक क्यों और इन भ्रष्टाचारियों में इतना तालमेल हो गया है कि दोनों में मतदाता द्वारा अंतर करना ही मुश्किल हो गया है कोई भी राजनीतिक दल भ्रष्टाचार से अछूता नहीं है राजनीति में स्वार्थ वार्ता अवसरवादी था नेतृत्वहीन का चरित्रहीनता माफिया हिंसा नरेवाडी नारेबाजी देंगे अलगाववाद नॉट वोट सपोर्ट की राजनीति के कारण भ्रष्टाचार मुख्य कारण है राजनीतिक भ्रष्टाचार के ऐसे अनेक सैकड़ो मामले भरे पड़े हैं जिसमें नेतृत्व ने जनता के विश्वास और सरकारी धन को हानि पहुंचाई है जिसमें तांसी भूमि घोटाला, कोलतार घोटाला, एच डी डब्ल्यू पनडुब्बी सौदा, चुरहट लॉटरी घोटाला, बोफोस तोप सौदा, आवास घोटाला ,हवाला घोटाला, दूरसंचार घोटाला, झारखंड मुक्ति मोर्चा रिश्वत कांड, यूरिया घोटाला ,मुंबई पोस्ट ट्रस्ट घोटाला ,20 स्पेस श्रम घोटाला आदि अनेक है भारत में भ्रष्टाचार को रोकने के लिए डिजिटलीकारण ई गवर्नेंस पारदर्शी ई ट्रेडिंग कड़े कानून का अनुपालन और लोकपाल /लोकायुक्त जैसे संस्थानों को सशक्त बनना प्रमुख उपाय है इसके अलावा सरकारी सेवाओं में सरलीकरण ,बेहतर शिक्षा नागरिकों में जागरूकता और अपराधियों को त्वरित दंड (fast track court)से इस पर लगाम लगाई जा सकती है। साथी सरकारी प्रक्रियाओं में पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ाना नागरिकों में जागरूकता और शिक्षित करना भ्रष्टाचार के दुष्परिणामों के प्रति शिक्षित करना तथा रिश्वत देने से मना करना लोकपाल और लोकायुक्त और जांच एजेंसियों को स्वतंत्र और शक्तिशाली बनाना शिक्षा प्रणाली में नैतिकता और ईमानदारी के मूल्यों को शामिल करना राजनीतिक सुधार चुनाव भ्रष्ट जनप्रतिनिधियों पर रोक लगाना इन तथ्यों के आधार पर भारत में लोकतंत्र को मजबूत और भ्रष्टाचार को कम किया जा सकता है।

7) लोकतांत्रिक संस्थाओं को सुधारना तथा मजबूत बनाना-----विश्व में जहां कहीं भी लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था है उसके सामने लोकतन को मजबूत करने की महत्वपूर्ण चुनौती है इसमें लोकतांत्रिक संस्थाओं की कार्य पद्धति को सुधारना और मजबूत करना है ताकि लोगों की भागीदारी और नियंत्रण में वृद्धि हो भ्रष्टाचार वंशवाद कट्टरवाद और तानाशाही प्रवृत्ति से लोकतंत्र की रक्षा कई देशों में आपात जन समर्थन के कारण शासक वर्ग भ्रष्टाचार कट्टर बाद वंशवाद एवं तानाशाही प्रवृत्ति को अपना लेते हैं एक सफल लोकतंत्र को इससे बचना आवश्यक है हाल ही में भारत में अपना 78 वा गणतंत्र दिवस मनाया है परंतु देश में विभिन्न आंदोलन लोकतंत्र को चुनौती भी देते हैं इसलिए लोकतंत्र को मजबूत

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

करने के लिए सरकार में जिम्मेदारी और कार्यपालिका व्यवस्थापिका और न्यायपालिका की शक्तियों स्वतंत्र और निष्पक्ष रूप से अपना नाम जरूरी है शासन की तीनों ही अंगों में शक्ति पृथक्करण का सिद्धांत अपने के साथ-साथ ही नियंत्रण एवं संतुलन का सिद्धांत भी अपनाना लोकतंत्र की सफलता के लिए आवश्यक है न्यायपालिका की स्वतंत्रता लोकतंत्र को मजबूत और स्थाई बनाने के लिए आवश्यक है।

न्यायपालिका को राष्ट्र अनुच्छेद 14 सभी नागरिकों के लिए कानून के समक्ष समानता की गारंटी देता है अनुच्छेद 21 जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकारों की रक्षा करता है अनुच्छेद 50 न्यायालय की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए कार्यपालिका से न्यायपालिका के पृथक्करण का निर्देश देता है के संचालन में एक सशक्त अंग के रूप में देखा जा सकता है अनुच्छेद 32 के तहत सर्वोच्च न्यायालय को कार्यपालिका और विधायिका के कार्यों की न्यायिक समीक्षा करने का अधिकार प्राप्त है।

भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में कमजोर न्याय व्यवस्था मुख्य रूप से एक चुनौती है जिसमें न्यायिक व्यवस्था लंबित मामलों, धीमी प्रक्रिया और बुनियादी ढांचे की कमी से जूझ रही है निचली अदालतों से सुप्रीम कोर्ट तक 5 करोड़ से अधिक मामले लंबित है साथ ही न्याय में अत्यधिक देरी , उच्च लागत और विचाराधीन कैदियों की 76% से अधिक आबादी न्याय प्रणाली की कमजोरी कमजोरी को दर्शाता है।

8) आशिक्षा भारतीय लोकतंत्र के लिए एक चुनौती ---भारतीय लोकतंत्र के लिए आज शिक्षा की चुनौती है क्योंकि यह नागरिकों को उनके अधिकार कर्तव्य और सही राजनीतिक निर्णय की प्रति जागरूक होने से है अशिक्षित मतदाता अक्सर गुमराह होकर गलत उम्मीदवारों का चयन करते हैं जिस राजनीतिक शोषण का खतरा बढ़ता है और यह सामाजिक समानता आर्थिक विकास और सूचित मतदान में बाधा उत्पन्न करती है जो एक जीवंत लोकतंत्र के लिए आवश्यक है आज शिक्षा के द्वारा अधिकारों के प्रति अज्ञानता राजनीतिक फिर सामाजिक आर्थिक असमानता को बढ़ावा देना कमजोर भागीदारी जागरूक मतदाताओं के बिना लोकतंत्र नाममात्र का रह जाता है क्योंकि वोट की सही ताकत का उपयोग शिक्षित व्यक्ति ही कर सकता है शिक्षा के बिना नागरिकों के लिए लोकतांत्रिक प्रक्रिया में पूर्ण योगदान देना और सही मायने में लोकतंत्र को सफल बनाना मुश्किल हो जाता है। वर्तमान आंकड़ों के अनुसार भारत में पुरुष साक्षरता दर 82.14% और महिलाओं की साक्षरता दर 65.46% 74.6% के बीच है केरल 93.91% प्रतिशत के साथ शीर्ष पर है

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

9) आतंकवाद की समस्या लोकतंत्र के लिए एक बड़ी चुनौती—आतंकवाद भारत के लिए गंभीर खतरा है न केवल इसकी भौतिक सुरक्षा के लिए बल्कि उन लोकतांत्रिक मूल्यों के लिए भी जो भारत के लिए अत्यंत प्रिय हैं यह लड़ाई केवल हथियारबन आतंकवादियों के खिलाफ नहीं है बल्कि नफरत की विचारधाराओं व्यवस्थागत कमजोरी और नीतिगत निष्क्रियता के खिलाफ भी है जो आतंकवाद भी पान अपने देती है भारत को दृढ़ता के साथ-साथ निष्पक्षता से भी जवाब देना होगा केवल हथियार से नहीं बल्कि बुद्धिमत्ता से भी और संवैधानिक लचीलेपन के साथ जो न्याय,स्वतंत्रता और एकता के प्रति उसकी प्रतिबंधता की पुष्टि करता है तभी हम कह सकते हैं कि न केवल यह की हमने आतंकवाद की लड़ाई लड़ी बल्कि यहां की हमने इस प्रक्रिया में स्वयं को कोई बिना इसे पराजित किया।

आधुनिक भू राजनीतिक परिदृश्य में भारत जैसा देश आंतरिक जटिलता और भारी शत्रुता के चौराहे पर इतनी तीव्रता से स्थित है दशकों से आतंकवाद का सामना करते हुए विकास संबंधी चुनौतियों से जुझ रहे उत्तर औपनिवेशिक लोकतंत्र के रूप में भारत का सुरक्षा परिदृश्य अवसरों और खतरों का संगम है सीमा पर उग्रवाद से लेकर वामपंथी उग्रवाद शहरी आतंकवाद से लेकर साइबर खतरों तक भारत आतंकवाद से जुड़ी कई चुनौतियों का सामना कर रहा है।

भारतीय लोकतंत्र पर आतंकवादी घटनाएं जिन्होंने लोकतंत्र की चुनौतियों के रूप में अस्तित्व को खड़ा किया है और यहां एक लंबे समय से चली आ रही घटनाएं हैं जिन्होंने हमेशा भारतीय भारत की स्वतंत्रता पर प्रहार किया है जैसे की 1993 बंबई बम धमाके,संसद पर हमला 2001, मुंबई 26 11 2008 की घटना, इंडियन एयरलाइंस फ्लाइट 814 का अपहरण ,1999 गोधरा ट्रेन कांड ,2002 दिल्ली बम विस्फोट 2008, उरी हमला 2016, पुलगांव पुलवामा हमला 2019, 10 नवंबर 2025 को दिल्ली में ऐतिहासिक लाल किले के निकट हुई घटक कर विस्फोट की घटना , 22 अप्रैल 2025 को कश्मीर में पुलवामा हमला में पर्यटकों को निशाना बनाकर बनाए गए हमले में 22 लोगों की मौत हो गई थी यह घटना दुनिया भर में कई देशों द्वारा निंदा की है। आतंकवादी गंभीर राष्ट्रीय समस्या है और आंतरिक सुरक्षा के लिए बड़ी चुनौती है जो विकास को बाधित करती है।जम्मू कश्मीर पूर्वोत्तर और नक्सली क्षेत्र में सक्रिय उग्रवाद सीमा पार से प्रायोजित आतंकवाद नार्को ट्रेन टेररिज्म और साइबर हमले देश की अखंडता के लिए बड़े खतरे हैं।

10) जातिवाद—भारत का कोई भी ऐसा राज्य नहीं है जहां पर राजनीति जातिवाद से प्रभावित नहीं हो रही हो। केरल तमिलनाडु राजस्थान हरियाणा बिहार आंध्र प्रदेश महाराज शादी सभी राज्यों की राजनीति पर जातिवाद स्पष्ट रूप से हावी है। जाति के आधार पर भेदभाव भारत में स्वतंत्रता से पहले भी विद्यमान

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

था लेकिन स्वतंत्रता के बाद प्रजातां की स्थापना उन्हें से समझ गया कि जातिगत भेदभाव समाप्त हो जाएगा लेकिन ऐसा नहीं हुआ राजनीतिक संस्थाएं भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकें पर स्वरूप जाति का राजनीतिकरण हो गया जाति का राजनीतिकरण आधुनिकीकरण के मार्ग में पाठक सिद्ध हो रहा है क्योंकि जाति को राष्ट्रीय एकता सामाजिक सांप्रदायिक सद्भाव एवं समरसता का निर्माण करने में करने हेतु आधार नहीं बनाया जा सकता। संविधान के अनुच्छेद 17 अस्पृश्यकता उन्मूलन किया गया है। लोकतंत्र व्यक्ति को इकाई मानता है ना कि किसी जाति या समूह को जाति और समूह के आतंक से मुक्त रखना ही लोकतंत्र का आग्रह है लोकसभा तथा विधान मंडलों में के लिए जाति का आधार पर आरक्षण की व्यवस्था प्रचलित है केंद्र और राज्यों की सरकारी नौकरियां एवं पदोन्नतियों के लिए भी जातिगत आरक्षण को अपनाया गया है। जाति हमेशा चुनाव और मतदान व्यवहार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है राजनीतिक दल हमेशा जाति के आधार पर अपनी उम्मीदवारों का चयन करते हैं जाती एक प्रमुख कारण के कारक के तौर पर हमेशा सभी राजनीतिक दलों के घोषणा पत्रों में और यहां तक की सरकारी नीतियों में भी एक प्रमुख भूमिका निभाती रही है और यह वर्तमान में भी मौजूद है संघ और राज्य स्तर की सरकारों में मंत्री परिषद के गठन में जाती भी प्रभावित करती है वर्तमान भारतीय राजनीति में जाति मुख्ता राज्य स्तर की राजनीति में एक दबाव समूह और हित समूह के रूप में कार्य करती है और जाति के मध्य राजनीतिक सौदेबाजी एक स्वाभाविक घटना बन चुकी है कई राष्ट्रीय और क्षेत्रीय राजनीतिक दलों में राजनीतिक नेतृत्व एक विशेष जाति समूह के समर्थन से उभरता है और यह वहां इन्हीं जाति समूह के समर्थन पर लंबे समय तक कायम रहता है राजनीतिक दल विशेष जाति के वोट बैंक को देखते हैं और जाति की आधार पर अपनी उम्मीदवारों का चयन भी कर रहे हैं। आता जाति व्यवस्था या जातिवाद भारतीय लोकतंत्र के लिए एक बड़ी चुनौती है।

निष्कर्ष-----भारतीय लोकतंत्र अपनी प्रकृति में एक विशाल सामाजिक धार्मिक और सांस्कृतिक विभिन्नता वाला एक विषम मॉडल है। भारत के लोकतांत्रिक स्वरूप के संदर्भ में पश्चिमी राजनीतिक विशेषज्ञों द्वारा भविष्यवाणी की गई थी कि लोकतंत्र का भारतीय मॉडल लंबे समय तक कायम नहीं रह सकेगा हालांकि यह भारत के अपने संवैधानिक सिद्धांतों के प्रति मजबूत प्रतिबंधित ही थी जिसके कारण भारत न केवल एक रस के रूप में जीवित रहा बल्कि नए स्वतंत्र देश के प्रतिनिधि निधि के रूप में भी उभर कर सामने आया है चुनौतियों के बावजूद भारत ने एक स्थिर लोकतन के रूप में खुद को सिद्ध किया भाभी पीढ़ी की जागरूकता सामाजिक सुधार और डिजिटल क्रांति के माध्यम से इन चुनौतियों को अवसरों में बदला जा सकता है जो भारत को एक अधिक न्याय पूर्ण समाज बन सकती

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

है चुनौतियों के बावजूद भारत ने एक स्थिर लोकतंत्र के रूप में खुद को सिद्ध किया। भावी पीढ़ी की जागरूकता सामाजिक सुधार और डिजिटल क्रांति के माध्यम से इन चुनौतियों को अवसरों में बदला जा सकता है बल्कि भारत को एक अधिक न्यायपूर्ण समाज बनया जा सकता हैं भारतीय लोकतंत्र जातिववाद सांप्रदायिकता भ्रष्टाचार सामाजिक आर्थिक असमानता जैसी गंभीर चुनौतीयो के बावजूद, युवाओं की सक्रिय भागीदारी, तकनीकी प्रगति और जीवंत नागरिक समाज के दम पर एक मजबूत भविष्य की ओर अग्रसर है निष्कर्षत सुशासन समावेशी और नैतिक राजनीति के माध्यम से यह चुनौतीयो को संभावनाओ में बदलकर एक आदर्श लोकतंत्रात्मक व्यवस्था बन सकता है।भारतीय लोकतंत्र के सामने मौजूद चुनौतीयो का समाधान केवल बेहतर कानून से नहीं, बल्कि नागरिकों की सक्रिय और जागरूक भागीदारी से संभव है यदि भारत समावेशी विकास भ्रष्टाचार उन्मूलन और सामाजिक समरसता को प्राथमिकता देता है तो भविष्य में यह न केवल अपनी चुनौतियों को दुर करेगा, बल्कि में एक सशक्त मजबूत और जीवंत लोकतांत्रिक मांडल (Model Democracy) के रुप में अपनी भूमिका और अधिक पुख्ता करेगा। भारतीय संविधान केवल एक कानूनी दस्तावेज नहीं बल्कि राष्ट्र के आदर्शो मूल्यों और आकांक्षाओं का प्रतीक है।यह नागरिकों को अधिकारों के साथ कर्तव्यो का भी बोध कराता है । भविष्य में निरंतर सुधार और जागरूक नागरिक भागीदारी के माध्यम से भारतीय संविधान देश को प्रगति समानता और विकास की दिशा में मार्गदर्शन करता रहेगा।

संदर्भ---

1. बक्शी.पी.एम. भारत का संविधान चयआत्मक है टिप्पणियां ,नई दिल्ली यूनिवर्सल लॉ पब्लिकेशन पब्लिक पब्लिशिंग कंपनी प्राइवेट लिमिटेड 1999
2.फाडिया लबी एल भारतीय सरकार एवं राजनीति, आगरा, सत्यभवन प्रकाशन 2007
3. कोरी जे. ए लोकतांत्रिक सरकार के तत्व, नवीन यार्क आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय 1947
4.गहलोत एन एस नया चुनौतीया को भारतीय राजनीती, नया दिल्ली गहरा और गहन प्रकाशन 20020
5. गुआफ्ता संयुक्त राष्ट्र. भारतीय संसदीय प्रजातंत्र नया दिए अटलांटिक प्रकाशन 2003
6.कश्यप सुभाष हमारा संसद नया दिल्ली राष्ट्रीय किताब विश्वास 2008
7.गोल्ड कैरियर सी पुनर्विचार लोकतंत्र स्वतंत्रता और सामाजिक सहयोग मे राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र प्रेस 1988
8.टूरिएन एलेन क्या है प्रजातंत्र? बोल्डर सीओ पश्चिम देखना प्रेस 1997

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

जनजातीय विकास में लोक सेवा केन्द्रों की भूमिका

(मध्य प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों के विशेष संदर्भ में)

डॉ. नियाज अहमद अन्सारी

सहा. प्राध्यापक राजनीति विज्ञान एवं व्यक्तिव विकास

शासकीय आदर्श महाविद्यालय, उमरिया (मध्य प्रदेश)

ईमेल : dr.ansari786@gmail.com

लक्षमन डाबर

सहा. प्राध्यापक - राजनीति विज्ञान

शासकीय मामा टंटया महाविद्यालय, भीकनगांव, जिला- खरगोन (मध्य प्रदेश)

सारांश

डिजिटल डेमोक्रेसी (लोकतंत्र) आधुनिक युग में **' एक व्यक्ति, एक वोट '** की पारंपरिक अवधारणा को अब **' एक व्यक्ति, एक मोबाइल फोन '** के रूप में विस्तारित होता जा रहा है। इंटरनेट के वर्तमान युग में विभिन्न डिजिटल माध्यमों ने लोगों को सशक्त बनाया है जिससे वे राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक क्षेत्रों में अधिक सक्रिय हो गए हैं। डिजिटल माध्यमों से हर नागरिक अपने विचार व्यक्त कर सकता है और सीधे सरकार तक अपनी बात पहुँचा सकता है। सोशल मीडिया पोस्ट के जरिए लोग जागरूक हो रहे हैं और अपनी राय को व्यापक रूप से प्रसारित भी कर रहे हैं।

डिजिटल प्लेटफॉर्म जैसे- लोक सेवा केन्द्रों यूपीआई, भीम और ई-कॉमर्स साइट (अमेजन, फ्लिपकार्ट आदि) ने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच आर्थिक असमानता को कम किया है। **गिग इकोनॉमी** ने भी लोगों को घर बैठे काम करने और अपनी आजीविका कमाने का मौका दिया है जिससे शहरों की ओर पलायन कम हो रहा है। डिजिटल युग ने व्यक्तियों, विशेष रूप से लड़कियों को अधिक स्वतंत्रता दी है, जिससे वे बिना किसी पर निर्भर हुए अपने विचार व्यक्त कर सकती हैं। शिक्षा का भी लोकतंत्रीकरण हुआ है, जहाँ ग्रामीण छात्र भी ऑनलाइन कक्षाओं के माध्यम से बड़े शहरों के संस्थानों से पढ़ सकते हैं। ई- लोक सेवा केन्द्रों के माध्यम से आम आदमी कम समय और बिना रिश्वत के सरकारी सुविधाओं का लाभ प्राप्त कर रहा है।

डिजिटल लोकतंत्र के कुछ नकारात्मक पहलू भी हैं। राजनीतिक दल आसानी से लोगों की भावनाओं को भड़का सकते हैं और ऑनलाइन शिक्षा में छात्रों की वास्तविक भागीदारी कम हो सकती है। डिजिटल तकनीक एक दोधारी तलवार की तरह है जिसका सदुपयोग या दुरुपयोग दोनों संभव है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

डिजिटल लोकतंत्र तभी सफल होगा जब नागरिक जागरूक और विवेकवान हों। यद्यपि तकनीक ने कई कार्य आसान कर दिए हैं, लेकिन इसे सही और गलत की समझ नहीं है। इसलिए, समाज और राष्ट्र को सही दिशा देने के लिए अभी भी मध्य प्रदेश , उत्तर प्रदेश , बिहार , राजस्थान आदि हिन्दीभाषी और विकासशील राज्यों में इस दिशा में बहुत काम करने की आवश्यकता है।

कुंजी शब्द- डिजिटल लोकतंत्र, डिजिटलाइजेशन, सरकारी सुविधाएं, जनभागीदारी ।

सूचना और संचार प्रौद्योगिकी - ***Information and Communication Technology*** (ICT) के इस युग में, लोकतंत्र के पारंपरिक स्वरूप में एक मौलिक परिवर्तन आया है। 'डिजिटल लोकतंत्र' की अवधारणा, जो इंटरनेट और संबंधित तकनीकों का उपयोग कर लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को बढ़ाने पर केंद्रित है, अब शासन और नागरिक भागीदारी की प्रकृति को फिर से परिभाषित कर रही है। विभिन्न रिपोर्ट इस बहुआयामी विषय का विश्लेषण करती है जिसमें इसके सिद्धांतों, व्यावहारिक अनुप्रयोगों, लाभों और चुनौतियों की गहराई से पड़ताल की गई है। इसका उद्देश्य यह समझना है कि कैसे डिजिटल उपकरण शासन को अधिक पारदर्शी, जवाबदेह और कुशल बनाने में मदद कर सकते हैं, जबकि साथ ही वे नए जोखिम और असमानताएं भी पैदा करते हैं।

महात्मा गांधी ने लोकतंत्र को " ***सभी के सामान्य हित की सेवा में लोगों के सभी विभिन्न वर्गों के संपूर्ण भौतिक, आर्थिक और आध्यात्मिक संसाधनों को जुटाने की विज्ञान की कला*** " के रूप में परिभाषित किया था। आज, डिजिटल उपकरण इस सामूहिक शक्ति को जुटाने के लिए एक नए माध्यम के रूप में उभरे हैं। डिजिटल लोकतंत्र वह प्रक्रिया है जिसमें नागरिक तकनीकी माध्यमों जैसे इंटरनेट, मोबाइल ऐप्स, ई-गवर्नेंस पोर्टल, सोशल मीडिया आदि के द्वारा शासन, नीति निर्माण और जनभागीदारी में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। डिजिटल डेमोक्रेसी एक ऐसी प्रणाली है जहाँ नागरिक ऑनलाइन वोटिंग, डिजिटल बहस और सार्वजनिक नीति-निर्माण में भाग लेने के लिए इंटरनेट और संबंधित तकनीकों का उपयोग करते हैं। यह सरकार की पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ाती है। इसकी मुख्य अवधारणाएं हैं:

- **ई-गवर्नेंस** – सरकारी सेवाओं को ऑनलाइन प्रदान करना।
- **ई-पार्टिसिपेशन** – नागरिकों को नीति-निर्माण प्रक्रिया में शामिल करना।
- **ई-वोटिंग** – चुनावों में ऑनलाइन मतदान की सुविधा।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

1. ई-गवर्नेंस (E-Governance)

ई-प्रशासन का मूल उद्देश्य सरकारी सेवाओं, सूचना और शासन-प्रणाली को इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से संचालित करना है। यह नागरिकों को सुविधाजनक, पारदर्शी और तेज सेवाएं प्रदान करने का माध्यम है और लोकतंत्र के लिए एक ऐसा ढांचा बनाता है जिसमें सहभागिता, जवाबदेही और सतत सुधार संभव हो सके। आज के जागरूक समाज में ई-प्रशासन केवल तकनीकी परिवर्तन नहीं, बल्कि शासन-शैली, नीति-निर्माण और नागरिक-चेतना के एक हरे परिवर्तन का हिस्सा है। ई-प्रशासन लोकतंत्र के चार प्रमुख आयामों को सुदृढ़ बनाते हैं:

- सेवाओं की सहज उपलब्धता
- पारदर्शिता और निगरानी
- सहभागी शासन
- डेटा-चालित निर्णय

नागरिक किसी भी समय, कहीं से भी आवेदन, स्टेटस ट्रैकिंग और सेवाओं का लाभ उठा सकते हैं। यह आवेदन-केन्द्रित सेवाओं, मोबाइल एप और वेबपोर्टल के माध्यम से संभव होता है। प्रक्रियाओं, निर्णयों और डाटा तक नागरिकों की पहुँच बढ़ती है। खुली डेटा के जरिये सरकार के प्रदर्शन पर कठोर निगरानी संभव होती है। ऑनलाइन फोरम, सर्वे और नीति-निर्माण में नागरिक सहभागिता के अवसर बढ़ते हैं। इससे नीतियों की प्रभाविता और स्वीकार्यता बढ़ती है। डेटा-आधारित नीति-निर्माण से तर्कसंगत लक्ष्य-निर्धारण, संसाधन का उचित आवंटन और प्रदर्शन की माप संभव होती है।

भारत में ई-प्रशासन के कई सफल उदाहरण हैं, जैसे **ऑनलाइन पंजीकरण, पैन-आधारित सेवाएं,** और स्वास्थ्य शिक्षा क्षेत्रों में डिजिटल पहलें (ई-संजीवनी, आयुष्मान-डिजिटल रिकॉर्ड्स आदि)। साथ ही, नागरिक भागीदारी मंचों, ऑनलाइन शिकायत और निगरानी तंत्र के जरिये पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ाने का प्रयास जारी है। लेकिन सफलता के लिए स्थानीय संदर्भ, संसाधन-उपलब्धता, और डिजिटल लिटरेसी की मजबूती अहम है।

ई-प्रशासन लोकतंत्र के लिए एक सक्षम और सशक्त आधार बन सकता है जब यह नागरिक-केंद्रित, पारदर्शी और सुरक्षित तरीके से डिजाइन किया गया हो। सही ढांचे, तकनीकी निवेश और सामाजिक-आर्थिक समावेशन के साथ डिजिटल शासन पूरे समाज के लिए जवाबदेही, सहभागिता और विश्वसनीयता को मजबूत करता है। इसके परिणामस्वरूप नागरिक-स्वायत्तता बढ़ेगी, भ्रष्टाचार घटेगा, और लोकतंत्र के मूल्यों को अधिक प्रभावी ढंग से आगे बढ़ाया जा सकेगा।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

2. डिजिटल भागीदारी (Digital Participation)--

डिजिटल लोकतंत्र का उद्देश्य है शासन में पारदर्शिता, जवाबदेही और नागरिकों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना। इसमें डिजिटल भागीदारी एक मूलभूत भूमिका निभाती है क्योंकि यह नागरिकों को तकनीक के माध्यम से नीति निर्माण और प्रशासनिक प्रक्रियाओं में शामिल करती है। डिजिटल भागीदारी वह प्रक्रिया है जिसमें नागरिक इंटरनेट, मोबाइल ऐप्स, सोशल मीडिया, ई-गवर्नेंस पोर्टल आदि के माध्यम से शासन से जुड़ते हैं। इसमें सुझाव देना, शिकायत दर्ज करना, ऑनलाइन मतदान, जनमत संग्रह, और सरकारी योजनाओं पर प्रतिक्रिया देना शामिल है। डिजिटल भागीदारी केवल तकनीकी सुविधा नहीं, बल्कि लोकतंत्र को मजबूत करने का माध्यम है। यह नागरिकों को सशक्त बनाती है और शासन को अधिक उत्तरदायी और पारदर्शी बनाती है। इसलिए, डिजिटल लोकतंत्र की सफलता डिजिटल भागीदारी पर ही निर्भर करती है।

डिजिटल लोकतंत्र का दायरा अधिक व्यापक है। यह केवल सेवाओं के कुशल वितरण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह **नागरिक-से-नागरिक (C2C)** और **नागरिक-से-सरकार (C2G)** के बीच सहयोगात्मक बातचीत को भी सुविधाजनक बनाता है। यह नागरिकों को नीति निर्माण, सार्वजनिक बहस और सामूहिक कार्रवाई में सीधे भाग लेने के लिए सशक्त बनाता है। स्टीवन क्लिफ्ट जैसे डिजिटल लोकतंत्र के समर्थकों के अनुसार, इंटरनेट का उपयोग मौजूदा संवैधानिक ढाँचों को संशोधित किए बिना सार्वजनिक भागीदारी को बढ़ाने के लिए किया जाना चाहिए, जो इस बात पर जोर देता है कि डिजिटल उपकरण मौजूदा लोकतांत्रिक संस्थानों को प्रतिस्थापित करने के बजाय उन्हें मजबूत करने के लिए हैं। इस प्रकार, डिजिटल लोकतंत्र का लक्ष्य एक समग्र **"सहभागी शासन"** (participative governance) मॉडल का निर्माण करना है।

3. मध्य प्रदेश में डिजिटल लोकतंत्र की प्रमुख पहल-

आज का युग डिजिटल युग है, जहाँ सब कुछ डिजिटल माध्यमों से जुड़ा हुआ है। भारत में, सरकार ने डिजिटल इंडिया जैसी पहलों के माध्यम से डिजिटल परिवर्तन को तेज किया है। इसी क्रम में, मध्य प्रदेश सरकार भी डिजिटल लोकतंत्र को मजबूत करने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठा रही है। डिजिटल लोकतंत्र का अर्थ है, तकनीक का उपयोग करके शासन को अधिक पारदर्शी, जवाबदेह और नागरिकों के लिए सुलभ बनाना। मध्य प्रदेश में डिजिटल लोकतंत्र को बढ़ावा देने के लिए राज्य सरकार द्वारा उठाये गए इन कदमों का उद्देश्य सरकारी सेवाओं को नागरिकों तक अधिक पारदर्शी और सुलभ बनाना है। ये पहल नागरिकों की भागीदारी बढ़ाने और प्रशासन को जवाबदेह बनाने में मदद करती हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

मध्य प्रदेश में इस दिशा में की गई कुछ प्रमुख पहलें निम्नलिखित हैं:

1. ई-गवर्नेंस और ऑनलाइन सेवा वितरण-

मध्य प्रदेश में डिजिटल लोकतंत्र की सबसे महत्वपूर्ण पहलें ई-गवर्नेंस के क्षेत्र में हैं। सरकार ने कई नागरिक सेवाओं को ऑनलाइन उपलब्ध कराया है ताकि लोगों को सरकारी दफ्तरों के चक्कर न लगाने पड़ें।

- **लोक सेवा गारंटी अधिनियम (MP e-District):** इस पोर्टल के माध्यम से, नागरिक आय प्रमाण पत्र, जाति प्रमाण पत्र, और निवास प्रमाण पत्र जैसी 50 से अधिक सेवाएं ऑनलाइन प्राप्त कर सकते हैं। यह सेवाएं समय-सीमा के भीतर दी जाती हैं, जिससे भ्रष्टाचार कम होता है और पारदर्शिता बढ़ती है।
- **समाधान ऑनलाइन (Samadhan Online):** यह एक शिकायत निवारण प्रणाली है जो नागरिकों को अपनी समस्याओं को सीधे मुख्यमंत्री तक पहुँचाने का मौका देती है। यह पोर्टल नागरिकों को अपनी शिकायत की स्थिति को ट्रैक करने की अनुमति देता है जिससे सरकार की जवाबदेही बढ़ती है।
- **मध्य प्रदेश भू-अभिलेख पोर्टल (MP Bhulekh):** इस पोर्टल पर, किसान और नागरिक अपनी जमीन से जुड़े रिकॉर्ड (जैसे खसरा और खतौनी) ऑनलाइन देख सकते हैं। यह पहल भूमि से जुड़े विवादों को कम करती है और पारदर्शिता बढ़ाती है।
- **ई-नगर पालिका:** यह एक केंद्रीकृत वेब-आधारित मंच है जो नगरीय निकायों को आधुनिक बनाने के लिए बनाया गया है। इसका उद्देश्य शहरी क्षेत्रों में नागरिक सेवाओं को तेजी से और पारदर्शी तरीके से प्रदान करना है। मध्य प्रदेश ऐसा पहला राज्य है जहाँ सभी नगरीय निकाय एक ही पोर्टल के अंतर्गत लाए गए हैं। **रेवेन्यू केस मैनेजमेंट सिस्टम (RCMS) पोर्टल:** यह एक वेब-आधारित ई-गवर्नेंस पहल है जो नागरिकों को उनके कानूनी मामलों की जानकारी देती है। यह विभिन्न अदालतों के कामकाज को अधिक पारदर्शी तरीके से प्रबंधित करने में भी मदद करता है।
- **ई-ऑफिस सिस्टम:** यह प्रशासनिक प्रक्रियाओं को कागजरहित बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इस प्रणाली से प्रशासनिक कार्य सुचारू रूप से संचालित होते हैं, दस्तावेजों के खोने का खतरा खत्म हो जाता है, और जनसेवा की प्रक्रिया तेज होती है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

2. डिजिटल पहचान और वित्तीय समावेशन-

डिजिटल पहचान, डिजिटल लोकतंत्र का आधार है। मध्य प्रदेश में, आधार-आधारित सेवाओं ने शासन को और भी समावेशी बनाया है।

- **संबल योजना (Sambal Yojana):** इस योजना के तहत, श्रमिकों को सरकारी लाभ सीधे उनके बैंक खातों में ट्रांसफर किए जाते हैं। यह प्रक्रिया पूरी तरह से पारदर्शी है और इसमें बिचौलियों की कोई भूमिका नहीं है।
- **एम-गवर्नेंस (m-Governance):** सरकार ने कई सेवाओं को मोबाइल एप्लीकेशन के माध्यम से भी उपलब्ध कराया है। इससे दूरदराज के इलाकों में रहने वाले लोग भी इन सेवाओं का लाभ उठा सकते हैं, जिनके पास कंप्यूटर नहीं है।

3. सूचना तक पहुँच और ओपन डेटा-

डिजिटल लोकतंत्र में सूचना तक पहुँच बहुत महत्वपूर्ण है। मध्य प्रदेश सरकार ने इस दिशा में भी कई कदम उठाए हैं।

- **ओपन गवर्नमेंट डेटा (OGD) पोर्टल:** मध्य प्रदेश सरकार भी भारत सरकार के OGD प्लेटफॉर्म पर विभिन्न विभागों से संबंधित डेटा सेट प्रकाशित करती है। यह डेटा नागरिकों, शोधकर्ताओं और पत्रकारों के लिए उपलब्ध होता है, जिससे वे सरकार के कामकाज का विश्लेषण कर सकते हैं और उसे जवाबदेह बना सकते हैं।
- **सम्पदा 2.0:** यह प्रणाली संपत्ति के पंजीकरण और स्टाम्पिंग की प्रक्रिया को तेज और सुविधाजनक बनाती है। इससे नागरिकों को इन कार्यों के लिए सरकारी कार्यालयों में व्यक्तिगत रूप से जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती।
- **एमपी ऑनलाइन पोर्टल:** यह राज्य सरकार और टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज लिमिटेड का एक संयुक्त उद्यम है। इस पोर्टल के माध्यम से नागरिकों को विभिन्न सरकारी सेवाएं, जैसे कि स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, और व्यापार से संबंधित सुविधाएं मिलती हैं।
- **ई-विवेचना एप:** यह एप अनुसंधान में पारदर्शिता लाने और पुलिस जांचकर्ताओं की मदद के लिए बनाया गया है।
- **एम.पी. ज्ञानदूत:** यह मध्य प्रदेश में ई-गवर्नेंस की शुरुआती पहलों में से एक थी। इसका उद्देश्य ग्रामीण लोगों को सूचना प्रौद्योगिकी का लाभ देना और उन्हें सरकार से जोड़ना था।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

ये सभी पहलें डिजिटल इंडिया के उद्देश्यों को साकार करने में मदद करती हैं, जिससे राज्य में **सुशासन** (Good Governance) को बढ़ावा मिलता है।

4. सोशल मीडिया का उपयोग-

मध्य प्रदेश सरकार सोशल मीडिया का उपयोग नागरिकों से सीधे जुड़ने और उनकी प्रतिक्रिया जानने के लिए कर रही है। मुख्यमंत्री और अन्य विभागों के आधिकारिक सोशल मीडिया हैंडल लोगों को जानकारी देने, उनकी शिकायतों को सुनने और उनका समाधान करने के लिए सक्रिय हैं। यह सीधे संवाद का एक मंच है जो पारंपरिक माध्यमों में संभव नहीं था। मध्य प्रदेश में डिजिटल लोकतंत्र की पहलें शासन को अधिक पारदर्शी, जवाबदेह और कुशल बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हैं। ये पहलें नागरिकों को सशक्त करती हैं और उन्हें अपनी सरकार के साथ सीधे जुड़ने का अवसर देती हैं। हालाँकि, इन पहलों की सफलता के लिए डिजिटल साक्षरता और साइबर सुरक्षा को भी बढ़ावा देना जरूरी है। अगर इन चुनौतियों का सही ढंग से समाधान किया जाए, तो मध्य प्रदेश डिजिटल लोकतंत्र का एक बड़ा उदाहरण बन सकता है, जिससे न केवल शासन में सुधार होगा, बल्कि समाज में भी सकारात्मक बदलाव आएगा।

5. डिजिटल लोकतंत्र के लाभ-

पारदर्शिता, जवाबदेही और दक्षता में वृद्धि— डिजिटल लोकतंत्र का एक महत्वपूर्ण लाभ यह है कि यह सरकारी कामकाज में अभूतपूर्व पारदर्शिता लाता है। जब सभी आधिकारिक जानकारी ऑनलाइन अपलोड की जाती है और नागरिक किसी भी समय उस तक पहुँच सकते हैं, तो सरकार पर अपने कार्यों के प्रति अधिक जवाबदेह होने का दबाव बनता है। यह पारदर्शिता सीधे तौर पर जवाबदेही से जुड़ी है। यह प्रक्रिया डेटा-संचालित शासन के लिए "पारा" के रूप में कार्य करती है, जिससे नीति निर्माण और कार्यान्वयन में सुधार होता है। उदाहरण के लिए, भारत में जीएसटी नेटवर्क ने कर चोरी को कम करने में मदद की है, जिससे राजस्व में वृद्धि हुई है।

नागरिक सशक्तिकरण और भागीदारी— डिजिटल इंडिया जैसी पहलों का उद्देश्य नागरिकों को डिजिटल रूप से सशक्त बनाना है। यह केवल ऑनलाइन सेवाओं तक पहुँच प्रदान करने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह जमीनी स्तर पर भी लोकतांत्रिक भागीदारी को मजबूत करता है। 'ई-ग्राम स्वराज' पोर्टल ने ग्राम पंचायतों में ई-शासन को मजबूत किया है। यह पोर्टल पंचायतों के लिए विकेंद्रीकृत नियोजन, बजट, लेखांकन और प्रगति की रिपोर्टिंग को एक ही मंच पर एकीकृत करता है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

इसी प्रकार 'SVAMITVA' योजना ग्रामीण क्षेत्रों में संपत्ति का कानूनी स्वामित्व प्रदान करके ग्रामीण परिवारों को आर्थिक रूप से सशक्त बना रही है। यह उन्हें बैंक ऋण प्राप्त करने और संपत्ति विवादों को हल करने में सक्षम बनाता है। इस तरह की पहलें दर्शाती हैं कि डिजिटल लोकतंत्र केवल राजनीतिक प्रक्रियाओं के बारे में नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण का भी एक साधन है, जो अंततः लोकतांत्रिक भागीदारी के लिए एक मजबूत आधार तैयार करता है।

लागत बचत और सुव्यवस्थित सेवा वितरण— ई-गवर्नेंस से सरकारी व्यय में भारी बचत होती है। कागजी रिकॉर्ड और स्टेशनरी की जगह डिजिटल समाधानों का उपयोग करने से हर साल करोड़ों रुपये बचाए जा सकते हैं। डिजिटल भुगतान और ऑनलाइन सेवाएं भी नागरिकों को सेवाएं प्राप्त करने के लिए शहरों में यात्रा करने की आवश्यकता को कम करके समय और धन की बचत करती हैं।

6 . डिजिटल लोकतंत्र की चुनौतियाँ-

डिजिटल डिवाइड और असमानता— डिजिटल लोकतंत्र के लिए सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक डिजिटल डिवाइड है। भारत जैसे विशाल विकासशील देश में, यह डिवाइड कई स्तरों पर मौजूद है। 2023 तक, ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट की पहुँच केवल 37% थी, जबकि देश की समग्र डिजिटल साक्षरता दर भी लगभग 37% है। यह डिवाइड केवल इंटरनेट तक पहुँच की कमी नहीं है; यह डिजिटल निरक्षरता, भाषाई बाधाओं और ग्रामीण-शहरी व लैंगिक असमानताओं का एक जटिल मिश्रण है। यह बहुआयामी डिवाइड एक नया 'डिजिटल रूप से-अलोकतांत्रिक' वर्ग बना सकता है जो डिजिटल सेवाओं और भागीदारी के अवसरों तक पहुँच से वंचित है। इसका मतलब है कि डिजिटल लोकतंत्र के लाभ जनसंख्या के एक बड़े हिस्से तक नहीं पहुँच पाते हैं, जिससे समावेशी लोकतांत्रिक भागीदारी का मूल सिद्धांत कमजोर होता है। यह एक गंभीर विरोधाभास है: एक उपकरण जो सबको जोड़ने के लिए है, वह वास्तव में कुछ लोगों को बाहर कर रहा है।

गलत सूचना, दुष्प्रचार और सार्वजनिक विश्वास का क्षरण— डिजिटल मंचों के माध्यम से गलत सूचना और दुष्प्रचार अभियानों का तेजी से प्रसार सार्वजनिक राय को विकृत कर सकता है और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को कमजोर कर सकता है। प्रौद्योगिकी द्वारा जनित वास्तविक विकृति (reality distortion) लोकतांत्रिक संस्थानों में सार्वजनिक विश्वास को नष्ट कर रही है। सोशल मीडिया और एल्गोरिथम, जो उत्तेजक और ध्रुवीकरण करने वाली सामग्री को प्राथमिकता देते हैं, एक स्वस्थ सार्वजनिक क्षेत्र की क्षमता को सीमित करते हैं। अनीता सलेम के अनुसार यदि नागरिक सत्य और असत्य के बीच अंतर नहीं कर सकते हैं, तो निर्वाचित अधिकारियों को उनके कार्यों के लिए जवाबदेह

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

ठहराना असंभव हो जाता है। यह अंततः लोकतंत्र को "अशिक्षित और हेरफेर किए गए लोगों के लिए एक अभिव्यंजक उपकरण" में बदल सकता है। यह केवल एक राजनीतिक समस्या नहीं है, बल्कि एक मौलिक सामाजिक और सुरक्षा समस्या है।

निजता और डेटा सुरक्षा संबंधी चिंताएं— डिजिटल लोकतंत्र के संदर्भ में, निजता और डेटा सुरक्षा दो महत्वपूर्ण चिंताएं हैं। इंटरनेट के उपयोग से नागरिकों द्वारा ऑनलाइन दी जाने वाली व्यक्तिगत जानकारी की सुरक्षा पर सवाल उठते हैं। "सर्वेलांस कैपिटलिज्म" (surveillance capitalism) का उदय व्यक्तिगत स्वायत्तता को कम कर रहा है, क्योंकि विशाल मात्रा में व्यवहार डेटा का उपयोग उत्पादों को बेचने और व्यक्तिगत सामग्री प्रदान करने के लिए किया जाता है। निजता केवल व्यक्तिगत सुरक्षा के बारे में नहीं है, बल्कि यह एक लोकतांत्रिक अधिकार है। बड़े पैमाने पर निगरानी और निजता का उल्लंघन नागरिकों को अपनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रयोग करने से हतोत्साहित कर सकता है, जो एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिए महत्वपूर्ण है।

राजनीतिक ध्रुवीकरण और एल्गोरिथम पूर्वाग्रह— डिजिटल मंचों पर एल्गोरिथम उपयोगकर्ताओं को उनकी पसंद के आधार पर सामग्री प्रस्तुत करते हैं, जिससे राजनीतिक ध्रुवीकरण बढ़ता है और "इको चैंबर" का निर्माण होता है। एल्गोरिथम पूर्वाग्रह और निजी मंचों में शक्ति का केंद्रीकरण, लोकतंत्र के लिए एक नया खतरा है। ये निजी कंपनियां, जो लाभ-संचालित व्यवसाय मॉडल पर चलती हैं, बिना किसी सार्वजनिक जवाबदेही के जनमत को प्रभावित कर सकती हैं। शोध से पता चलता है कि गूगल खोज परिणाम अकेले 20% से अधिक अनिर्णीत मतदाताओं को प्रभावित कर सकते हैं। यह इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे कॉर्पोरेट शक्ति, लोकतांत्रिक प्रक्रिया में अदृश्य रूप से हस्तक्षेप कर सकती है, जिससे एक नए प्रकार के **"अभिजाततंत्र"** (oligarchy) का जन्म हो सकता है।

निष्कर्ष-

21वीं सदी में तकनीकी विकास ने लोकतंत्र के स्वरूप को नया आयाम दिया है। इंटरनेट, सोशल मीडिया, और डिजिटल उपकरणों के माध्यम से नागरिकों की भागीदारी, पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा मिला है। इस नवाचार को डिजिटल डेमोक्रेसी कहा जाता है, जो पारंपरिक लोकतंत्र को तकनीक के साथ जोड़कर अधिक समावेशी और उत्तरदायी बनाता है। डिजिटल डेमोक्रेसी लोकतंत्र को और अधिक समावेशी और प्रभावी बनाने की क्षमता रखती है। हालाँकि, इसे अपनाने से पहले डिजिटल डिवाइड को कम करना, साइबर सुरक्षा को मजबूत करना और गलत सूचना से निपटना आवश्यक है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भविष्य में, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और ब्लॉकचेन जैसी नई प्रौद्योगिकियाँ डिजिटल डेमोक्रेसी को और भी सुरक्षित और कुशल बना सकती हैं। इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए, सरकारों, तकनीकी कंपनियों और नागरिकों को मिलकर काम करना होगा ताकि एक मजबूत और सहभागी डिजिटल लोकतांत्रिक प्रणाली बनाई जा सके।

डिजिटल डेमोक्रेसी लोकतंत्र को अधिक उत्तरदायी, पारदर्शी और समावेशी बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। हालाँकि इसके समुचित क्रियान्वयन के लिए तकनीकी साक्षरता, साइबर सुरक्षा और नीति निर्धारण में सतर्कता आवश्यक है। यदि इन चुनौतियों का समाधान किया जाए, तो डिजिटल डेमोक्रेसी लोकतंत्र को नई ऊंचाइयों तक पहुँचा सकती है। डिजिटल लोकतंत्र भारत के लिए सुशासन, पारदर्शिता और नागरिक सशक्तिकरण का एक शक्तिशाली माध्यम है। हालाँकि, इन पहलों का पूर्ण लाभ उठाने के लिए डिजिटल डिवाइड को पाटना, साइबर सुरक्षा को मजबूत करना, और डिजिटल साक्षरता को बढ़ाना आवश्यक है। सरकार, नागरिक समाज और निजी क्षेत्र के सहयोग से, भारत एक सच्चा डिजिटल लोकतंत्र बन सकता है जहाँ हर नागरिक शासन प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग ले सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1 . रोजगार और निमार्ण , मध्य प्रदेश माध्यम , जनसंपर्क विभाग, भोपाल।

2. ज्ञान गरिमा सिंन्धु , अप्रैल-जून 2018, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग , नई दिल्ली।

3. सईद एस. एम. , भारतीय राजनीतिक व्यवस्था , 2011, भारत बुक सेन्टर, लखनउ।

4. मण्डलोई एवं अन्सारी , भारतीय अर्थव्यवस्था एवं राजव्यवस्था के बदलते प्रतिमान, 2024, भारती पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।

5. नवीन शोध संसार, जुलाई-सितम्बर 2023, नीमच, (म.प्र.)

6. अन्सारी, नियाज़ अहमद , नई सदी : नये निबंध , 2023, भारती पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।

7. Ministry of Electronics and Information Technology, Govt. of India

8. Digital India Mission official portal: https://digitalindia.gov.in

9. MyGov India: https://mygov.in

10. World Bank Report on e-Governance, 2023

11. www.govpilot.com

12. www.researchgate.net

13. Association for Democratic Reforms (ADR), 2025 Reports

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

वैश्विक पहचान और प्रवासी भारतीय संस्कृति के सन्दर्भ में

सुरेश ननोमा

शोधार्थी

गोविन्द गुरु जनजातीय विश्वविद्यालय

बाँसवाड़ा, राजस्थान

E-mail: sureshnanoma93@gmail.com

शोध सार:

वैश्वीकरण के वर्तमान युग में प्रवासन और सांस्कृतिक आदान-प्रदान ने विश्व-समाज को गहराई से प्रभावित किया है। भारतीय प्रवासी समुदाय, जिसे सामान्यतः Indian diaspora कहा जाता है, विश्व के अनेक देशों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हुए भारतीय संस्कृति के प्रसार और संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इस शोध का उद्देश्य वैश्विक पहचान के निर्माण में प्रवासी भारतीय संस्कृति की भूमिका का अध्ययन करना है। प्रवासी भारतीय समुदाय अपनी परंपराओं, भाषा, धार्मिक आस्थाओं और सामाजिक मूल्यों को विदेशों में भी जीवित रखता है। विदेशों में बसे भारतीय समुदाय विभिन्न सांस्कृतिक गतिविधियों, त्योहारों और सामाजिक संगठनों के माध्यम से अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखते हैं। उदाहरण के रूप में Diwali, होली और अन्य भारतीय त्योहार विदेशों में भी बड़े उत्साह से मनाए जाते हैं, जिससे स्थानीय समाज को भारतीय संस्कृति से परिचित होने का अवसर मिलता है। वैश्वीकरण के प्रभाव से प्रवासी भारतीयों की पहचान केवल राष्ट्रीय सीमाओं तक सीमित नहीं रहती, बल्कि एक व्यापक वैश्विक पहचान का रूप ले लेती है। इस प्रक्रिया में भारतीय संस्कृति और स्थानीय संस्कृति के बीच पारस्परिक संवाद और सांस्कृतिक मिश्रण देखने को मिलता है। इस सांस्कृतिक संवाद के माध्यम से प्रवासी भारतीय अपनी मूल सांस्कृतिक जड़ों को बनाए रखते हुए नए सामाजिक परिवेश के साथ भी सामंजस्य स्थापित करते हैं। इसके अतिरिक्त संचार माध्यम, शिक्षा, साहित्य, व्यापार और विशेष रूप से बॉलीवुड जैसे सांस्कृतिक उद्योगों ने भी भारतीय संस्कृति के वैश्विक प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन माध्यमों के कारण भारतीय भाषा, संगीत, नृत्य, भोजन और जीवन शैली विश्व के विभिन्न समाजों में लोकप्रिय हो रहे हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि प्रवासी भारतीय समुदाय वैश्विक स्तर पर भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है। उनकी सांस्कृतिक गतिविधियाँ न केवल भारतीय परंपराओं के संरक्षण में सहायक हैं, बल्कि भारतीय संस्कृति को वैश्विक मंच पर पहचान दिलाने में भी महत्वपूर्ण

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भूमिका निभाती हैं। इस प्रकार वैश्विक पहचान के निर्माण में प्रवासी भारतीय संस्कृति का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण और प्रभावशाली है।

शोध सार के मुख्य शब्द : वैश्विक पहचान, प्रवासी भारतीय, प्रवासी भारतीय संस्कृति, वैश्वीकरण, सांस्कृतिक प्रसार, सांस्कृतिक पहचान, अंतरराष्ट्रीय समाज।

प्रस्तावना :

वैश्विक पहचान का अर्थ है किसी व्यक्ति, समूह, या देश की पहचान वैश्विक स्तर पर होना। यह पहचान विभिन्न माध्यमों से बनाई जा सकती है, जैसे की संस्कृति, व्यापार, राजनीति, और मीडिया आदि। भारत की वैश्विक पहचान उसकी संस्कृति, योग, आयुर्वेद, वेशभूषा और फिल्म उद्योग के माध्यम से है। भारतीय प्रवासी, भारतीय मूल के उन व्यक्तियों को सन्दर्भित करता है जो भारत से बाहर निवास करते हैं। इनमें अनिवासी भारतीय (NRI) और भारतीय मूल के व्यक्ति (PIO), दोनों शामिल हैं। अनिवासी भारतीय का आशय ऐसे भारतीय नागरिक से है जो काम, शिक्षा या अन्य उद्देश्यों के लिए अस्थायी रूप से विदेश में रहता है। जबकि भारतीय मूल के व्यक्ति का आशय ऐसे भारतीय वंशी विदेशी नागरिकों से है, जो पीढ़ियों से विदेश में पैदा हुए या बसे हुए हैं, लेकिन वे भारत के साथ एक सशक्त सांस्कृतिक संबंध बनाए रखते हैं। तीसरी श्रेणी भारत के ऐसे विदेशी नागरिकों की है (OCI), जिनमें भारतीय मूल के ऐसे व्यक्ति शामिल हैं, जिनके पास विदेशी नागरिकता तो है, किन्तु उन्हें भारत सरकार द्वारा एक विशेष ओसीआई कार्ड के माध्यम से विशेषाधिकार दिए गए हैं।

अगर संख्या की बात करें तो विदेश मंत्रालय के अनुसार, नवम्बर 2024 तक, प्रवासी भारतीयों की कुल जनसंख्या 35,421,987 थी। सबसे बड़ी भारतीय प्रवासी आबादी वाले शीर्ष तीन देश संयुक्त राज्य अमेरिका: 5.4 मिलियन, संयुक्त अरब अमीरात: 3.6 मिलियन और मलेशिया: 2.1 मिलियन हैं। भारत का यह प्रवासी समुदाय दुनिया के दो सौ से ज्यादा देशों में फैला हुआ है। अंकों के हिसाब से यह अब दुनिया का सबसे बड़ा प्रवासी समुदाय है। यह समुदाय सिर्फ उन लोगों का समूह नहीं है जो देश छोड़कर चले गए हैं, अपितु विस्तृत नजरिये से इसे एक ऐसी शक्ति के रूप में देखा जाना चाहिए जो न केवल भारत के, अपितु दुनिया के भविष्य को भी आकार दे रहा है।

अमेरिका की सिलिकॉन वैली की दिग्गज टेक कंपनियों में, ब्रिटेन में नीति-निर्माताओं में, मध्य पूर्व में चिकित्सा क्षेत्र, ऑस्ट्रेलिया में छात्रों का बड़ी संख्या में, भारतीय प्रवासी समुदाय का होना अब

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

केवल प्रवास की एक घटना भर नहीं है, अपितु इसमें देशों के सहयोग, नवाचार, वैश्वीकरण और पारस्परिक विकास की शाखाएँ भी देखी जा सकती हैं।

प्रवासी भारतीय समुदाय :

प्रवासी समुदाय की कहानी 19वीं सदी की शुरुआत के दौरान प्रारम्भ हुई थी। यह प्रवास व्यापार, औपनिवेशिक नीतियों और बेहतर अवसरों की खोज से प्रेरित था। पूर्वी भारत के कई भारतीयों को मॉरीशस, फिजी और कैरिबियन जैसे ब्रिटिश उपनिवेशों में गिरमिटिया मजदूरों के रूप में ले जाया गया। कई लोग रेलवे स्थापित करने के लिए पूर्वी अफ्रीका गए या व्यापार के लिए दक्षिण पूर्व एशिया में बस गए। प्रवासन के इस स्वरूप में 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में परिवर्तन देखने को मिला। सिंगापुर जैसी पूर्वी देशों की बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं के कारण वहाँ भी भारतीयों को जाने का अवसर मिला। कुल मिलाकर भारतीय प्रवासी समुदायों के प्रवासन की कहानियाँ प्रेरक हैं और उनमें से प्रत्येक की अपनी अनूठी यात्रा है, किन्तु वे सब साझा सांस्कृतिक मूल्यों एवं अपने पूर्वजों की भूमि से जुड़ाव की गहरी भावना के कारण आज भी भारत के साथ बंधे हुए हैं। इन प्रवासी भारतीयों की सामूहिक शक्ति का भारत के विकास और वैश्विक स्थिति पर गहरा प्रभाव पड़ा है।

एक वैश्विक शक्ति के रूप में प्रवासी भारतीयों ने विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान दिया है। प्रौद्योगिकी और नवाचार के क्षेत्र में भारतीयों की श्रेष्ठता को आसानी से देखा जा सकता है; इसका प्रमाण है कि वैश्विक अग्रणी आईटी कंपनियों, जैसे अल्फाबेट और माइक्रोसॉफ्ट, भारतीय मूल के इंजीनियरों के नेतृत्व में है। ये उदाहरण कंप्यूटर क्षेत्र में भारतीय प्रतिभा के वर्चस्व को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। गूगल की मूल कंपनी अल्फाबेट के सीईओ सुन्दर पिचाई और माइक्रोसॉफ्ट के सीईओ सत्या नडेला से हम सब परिचित हैं। स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र की बात करें तो भारतीय डॉक्टर, नर्स और स्वास्थ्य कार्यकर्ता संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, खाड़ी के तथा अफ्रीकी देशों के चिकित्सा कार्यबल का एक खास हिस्सा बन कर उभरे हैं। वित्तीय परिसंचालन के क्षेत्र में देखें तो विश्व बैंक समूह के अध्यक्ष अजय बंगा हैं। विज्ञान के क्षेत्र में भारतीय मूल के वैज्ञानिक और नोबेल पुरस्कार विजेता वेंकटरमन रामकृष्णन हैं। प्रवासी भारतीयों की कहानियाँ केवल व्यक्तिगत उपलब्धियों के साथ समाप्त नहीं होतीं, उनका दायरा इससे कहीं आगे का है।

भारत के भविष्य को आकार देने में प्रवासी समुदाय अति महत्त्वपूर्ण बनकर उभरा है और इसमें सर्वाधिक भूमिका इन प्रवासियों के भारत में रह रहे परिवार, मित्र या रिश्तेदारों को धन हस्तान्तरण या धनप्रेषण की है। वर्ष 2024 में, भारत को 129.1 बिलियन डॉलर का चौंका देने वाला धन प्रेषण प्राप्त

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

हुआ। यह किसी भी देश को एक वर्ष में मिला सर्वाधिक धन है और यदि इसे प्रतिशत में देखें तो यह वैश्विक धन प्रेषण का 14.3 फीसदी था। इससे भारत दुनिया में धनप्रेषण का शीर्ष प्राप्तकर्ता देश बन गया है, जिसका श्रेय प्रवासी भारतीयों को जाता है। निश्चित ही यह एक उल्लेखनीय उपलब्धि है और इस क्षेत्र में भारत के बढ़ते प्रभुत्व को रेखांकित करती है। आज धन प्रेषण की भारत के सकल घरेलू उत्पाद में हिस्सेदारी 3.3 प्रतिशत हो गई है। प्रवासियों के भारत में रह रहे परिवारों को सहायता प्रदान करने के अतिरिक्त इस विशाल धनराशि का इस्तेमाल स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं में उपभोग, व्यय और निवेश में होता है। भारतीय उद्यमों को वैश्विक बाजारों से जोड़कर प्रवासी भारतीय देश के व्यापार परिदृश्य को समृद्ध बना रहे हैं। वे वंचित क्षेत्रों के विकास में सहयोग देकर देश को विकसित अर्थव्यवस्था बनने के लक्ष्य की ओर अग्रसर भी करते हैं। भारत को भेजा जाने वाला धन लंबे समय से देश की अर्थव्यवस्था की आधारशिला रहा है और यह घरेलू आय, आर्थिक स्थिरता तथा समग्र विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है। प्रवासी भारतीयों का यह वित्तीय हस्तांतरण न केवल उन्हें प्राप्त करने वाले परिवारों के लिए अपितु देश के व्यापक आर्थिक परिदृश्य के लिए भी महत्वपूर्ण है।

प्रवासी भारतीय अपने-अपने देशों में भारतीय परंपराओं, कला और विरासत को बढ़ावा देकर भारत की सॉफ्ट पावर को मजबूत करते हैं। प्रवासी भारतीयों के कारण त्योहार, योग, बॉलीवुड और व्यंजनों ने अपार लोकप्रियता प्राप्त की है, जिससे भारत की वैश्विक स्वीकृति बढ़ी है। कई अमेरिकी राज्यों में दिवाली को अवकाश घोषित करने जैसी पहल विदेशों में भारतीय संस्कृति के सफल एकीकरण को उजागर करती है।

प्रवासी भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार में योगदान:

भारत से लोगों का दूसरे देशों में जाकर बसना कम से कम दो हजार वर्षों से चला आ रहा है। लगभग आठ समुदाय अलग-अलग काल में भारत से जाकर दूसरे देशों में बस गए। ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में तमिल-भाषी श्रीलंका गए। जिप्सी नाम से विख्यात रोमनी लोग ईसा पूर्व चौथी शताब्दी और ग्यारहवीं शताब्दी के दौरान अफगानिस्तान की तरफ से टर्की होते हुए यूरोप, अमेरिका, कनाडा, दक्षिण अमेरिका, न्यूज़ीलैंड और ऑस्ट्रेलिया में फैल गए। भारत मूल के लोग पांचवीं शताब्दी और फिर बीसवीं शताब्दी में इंडोनेशिया गए। उन्नीसवीं शताब्दी में सिंगापुर, मलेशिया, थाईलैंड, हांगकांग आदि और 1834-1917 के दौरान शर्तबंद श्रमिक मॉरीशस, रियूनियन, गयाना, त्रिनिदाद, सूरीनाम, ग्वाडेलोप, फिजी, दक्षिण अफ्रीका आदि गए। उन्नीसवीं शताब्दी में पूर्वी अफ्रीका, उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में नेपाल और बीसवीं शताब्दी में यूरोप, अमेरिका, कनाडा, ब्रिटेन, न्यूज़ीलैंड,

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

ऑस्ट्रेलिया आदि देशों में भारतीयों का भारत से विदेश-गमन और प्रवासन हुआ। सभी समुदायों ने अपनी संस्कृति के कुछ अवयवों का पीढ़ी-दर-पीढ़ी संरक्षण किया है। इन संरक्षित उपकरणों में धर्म, खाना, और मनःपटल पर अंकित कुछ संस्कार हैं। परन्तु भाषा का उपकरण हर जगह नहीं बचा पाए। भाषा और संस्कृति एक दूसरे से जुड़ी हैं। जब भाषा लुप्त होने लगती है तो संस्कृति के लोप का बीज उसी समय रख दिया जाता है। निस्संदेह सुदूर बसे प्रवासी संस्कृति और भाषा दोनों के संरक्षण की दिशा में प्रयासरत हैं। तथापि यह भी सत्य है कि आधुनिक डायस्पोरा की स्थिति उन्नीसवीं सदी में अंग्रेजों द्वारा भारत से कमोबेश जबरन ले जाए गए भारतीय मजदूरों से सर्वथा भिन्न है। गिरमिटिया मजदूर या कुली कहे जाने वाले इन लोगों को प्रताड़ित और शोषित किया जाता था। बावजूद इसके इनके वंशजों ने आज उन देशों में अपना सुदृढ़ स्थान बना लिया है। कठिन व कठोर परिस्थितियों का सामना करते हुए भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रगति की राह चलते हुए इन भारतीयों ने भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार इतनी प्रबलता से किया कि आज इन देशों में भारतीय संस्कृति, सभ्यता और धर्म की ऐसी झलक देखने को मिलती है कि भारत से दूर होते हुए भी इन देशों में भारतीयता की महक चहुँ ओर महसूस की जा सकती है।

आज अनेक राष्ट्रों के शासकीय पदों पर भी भारतवंशी पदासीन हैं। विश्व हिन्दी सम्मेलन के मेजबान देश के राष्ट्रपति महामहिम अनिरुद्ध जगन्नाथ और प्रधानमंत्री माननीय रामगुलाम जैसे भारतवंशियों की लम्बी फहरिस्त है। त्रिनिदाद और टोबैगो की प्रधानमंत्री रह चुकीं श्रीमती कमला प्रसाद बिसेसर को पहली भारतीय महिला प्रधानमंत्री होने का गौरव प्राप्त है। विश्वपटल पर भारत का परचम फहराने वाले अन्य लोगों की सूची में गूगल के सी.ई.ओ. सुन्दर पिचाई से लेकर नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक हर गोविन्द खुराना और माइक्रोसॉफ्ट के सी.ई.ओ. सत्या नाडेला से लेकर विश्व के प्रसिद्ध ऑर्केस्ट्रा संचालक जैसे अनेक नाम शामिल हैं। यह सूची अनन्त है। विश्व में भारत की संस्कृति का प्रसार करने वाले ये लोग विभिन्न क्षेत्रों से जुड़कर भी इस दिशा में कार्यरत हैं। चाहे वे फिल्म निर्माता हों, लेखक, गीतकार, संगीतकार, गायक, नाटककार, रंगमंचकर्मी, चित्रकार, फोटोग्राफर हों या फिर वे डॉक्टर, वकील या व्यापारी ही क्यों न हों, ये भारतवंशी समस्त विश्व में भारत का तिरंगा निरन्तर ऊँचा करने के मार्ग पर अग्रसर हैं। बहुल संस्कृति देश होने के बावजूद भारत की प्राचीनतम व सामाजिक संस्कृति अपनी सर्वांगीणता, विशालता, उदारता, प्रेम और सहिष्णुता जैसी विशेषताओं के कारण विश्व में एक अलग स्थान रखती है। प्रवासी भारतीय जिन देशों में रहते हैं, उन देशों की संस्कृतियों के प्रभाव और भारत में पसर चुकी आधुनिकता के बावजूद भारत की संस्कृति अपने समन्वयवादी और

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

उदारतावादी दृष्टिकोण के चलते लगातार समृद्ध ही हो रही है। भारतीय संस्कृति के इस वृक्ष पर कितने ही नव पल्लव उगते जाएँ, इसकी परम्परा की जड़ें पोषित होती रहती हैं और अधिक मजबूत ही होती जाती हैं। मन्दिरों की श्रृंखला में एक और खूबसूरत मन्दिर है दक्षिण त्रिनिदाद के गेस्परिलो के हार्डबार्गेन में बना त्रिवेणी मंदिर। तीनों गाँवों की सीमाओं पर स्थित होने के चलते, भारत में गंगा, जमुना और सरस्वती के संगम स्थल की तर्ज पर इसका यह नाम पड़ा; इसकी गगनचुंबी मीनारें इसकी सुन्दरता में चार चाँद लगाती हैं। भारत की तरह ही वहाँ भी सभी देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना की जाती है। देश के हर प्रान्त में आपको मंदिर जरूर मिलेंगे, फिर चाहे वह राम मन्दिर हो, शिव मन्दिर, गणेश मन्दिर, देवी का मन्दिर, लक्ष्मी नारायण मन्दिर या फिर कृष्ण मन्दिर; लगभग दो सौ के करीब मंदिर हैं। अनेक हिन्दू समूह भी हैं जैसे सनातन धर्म महासभा, आर्य समाज, चिन्मय मिशन, डिवाइन लाइफ सोसाइटी, इस्कॉन युवा वर्ग भी सभी धार्मिक गतिविधियों में बढ़-चढ़कर रुचि लेता है, जिससे समाज के निर्माण में नित नवीनता का संचार होता रहता है।

जो लोग भारत छोड़कर विश्व के दूसरे देशों में जा बसे हैं उन्हें प्रवासी भारतीय कहते हैं। ये विश्व के अनेक देशों में फैले हुए हैं। कई देशों में रह रहे प्रवासियों की जनसंख्या करीब 2 करोड़ है। इनमें 11 देशों में 5 लाख से ज्यादा प्रवासी भारतीय वहाँ की औसत जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते हैं और वहाँ की आर्थिक व राजनीतिक दशा व दिशा को तय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यहाँ उनकी आर्थिक, शैक्षणिक व व्यावसायिक दक्षता का आधार काफी मजबूत है। वे विभिन्न देशों में रहते हैं, अलग भाषा बोलते हैं परन्तु वहाँ के विभिन्न क्रियाकलापों में अपनी महती भूमिका निभाते हैं। प्रवासी भारतीयों को अपनी सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण बनाए रखने के कारण ही साझा पहचान मिली है और यही कारण है जो उन्हें भारत से गहराई से जोड़ता है। जहाँ-जहाँ प्रवासी भारतीय बसे वहाँ उन्होंने आर्थिक तन्त्र को मजबूती प्रदान की और बहुत कम समय में अपना स्थान बना लिया। वे मजदूर, व्यापारी, शिक्षक, अनुसन्धानकर्ता, उद्यमी, डॉक्टर, वकील, इंजीनियर, प्रबन्धक, प्रशासक आदि के रूप में दुनियाभर में स्वीकार किए गए। प्रवासियों की सफलता का श्रेय उनकी परम्परागत सोच, सांस्कृतिक मूल्यों और शैक्षणिक योग्यता को दिया जा सकता है। कई देशों में वहाँ के मूल निवासियों की अपेक्षा भारतवंशियों की प्रति व्यक्ति आय ज्यादा है। वैश्विक स्तर पर सूचना तकनीक के क्षेत्र में क्रान्ति में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है जिसके कारण भारत की विदेशों में छवि निखरी है। प्रवासी भारतीयों की सफलता के कारण भी आज भारत विश्व में आर्थिक महाशक्ति के रूप में उभर रहा है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भारतीय सन्दर्भ में सांस्कृतिक विशिष्टताओं का सुदृढीकरण भारतीय समाज में, वैश्वीकरण ने सांस्कृतिक समांगीकरण के बजाय सांस्कृतिक विशिष्टताओं को मजबूत करने में योगदान दिया है। इसके कई कारण हैं:

स्थानीय प्रतिक्रियाएँ: वैश्वीकरण के प्रति भारतीय समाज की प्रतिक्रिया निष्क्रिय नहीं रही है। स्थानीय समुदायों और व्यक्तियों ने अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने और बढ़ावा देने के लिए सक्रिय कदम उठाए हैं।

सांस्कृतिक पुनरुत्थान: वैश्वीकरण ने भारतीय कला, संगीत, नृत्य और साहित्य में रुचि को पुनर्जीवित किया है। लोग अपनी जड़ों से जुड़ने और अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने के लिए अधिक उत्सुक हैं।

भाषाओं का संरक्षण: भारत में कई भाषाएँ बोली जाती हैं। वैश्वीकरण के बावजूद, लोग अपनी मातृभाषाओं को संरक्षित करने और बढ़ावा देने के लिए प्रयास कर रहे हैं।

स्थानीय उत्पादों की मांग: वैश्वीकरण के कारण, स्थानीय उत्पादों और सेवाओं की मांग बढ़ी है। लोग स्थानीय उत्पादों को खरीदना पसंद करते हैं, जो उनकी सांस्कृतिक पहचान को दर्शाते हैं।

डिजिटल माध्यमों का उपयोग: डिजिटल माध्यमों, जैसे सोशल मीडिया और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म ने भारतीय संस्कृति को दुनिया भर में फैलाने में मदद की है। इसने भारतीय संस्कृति को वैश्विक स्तर पर पहचान दिलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

उदाहरण के लिए, खादी और हैंडलूम उत्पादों की मांग में वृद्धि हुई है, जो भारतीय संस्कृति और विरासत का प्रतीक हैं। इसी तरह, योग और आयुर्वेद जैसी पारम्परिक भारतीय चिकित्सा पद्धतियों ने वैश्विक स्तर पर लोकप्रियता हासिल की है।

प्रवासी भारतीयों का महत्व और योगदान:

सांस्कृतिक राजदूत के रूप में कार्य करते हुए, प्रवासी समुदाय मेजबान देशों में भारत की परंपराओं, कला और विरासत को बढ़ावा देकर भारत की सॉफ्ट पावर को प्रबल करते हैं। कई अमेरिकी राज्यों में दिवाली पर अवकाश घोषित करने जैसी पहल, विदेशों में भारतीय संस्कृति के सफल एकीकरण को उजागर करती है तथा अधिक स्वीकृति एवं प्रशंसा को बढ़ावा देती है। योग, बॉलीवुड और व्यंजनों ने वैश्विक लोकप्रियता हासिल की है, जिससे भारत की सॉफ्ट पावर बढ़ी है। भारतीय मूल के परोपकारी लोग भारत में शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और ग्रामीण विकास के लिए उदारतापूर्वक योगदान

देते हैं। उदाहरण के लिए, प्रवासी भारतीयों के लिए 'भारत विकास फाउंडेशन' जैसी पहल ऐसे योगदान को सुगम बनाती है।

प्रवासी भारतीयों से जुड़ी चुनौतियाँ:

इसमें उन्हें वित्तीय अस्थिरता और अनिश्चित भविष्य का सामना करना पड़ता है। खाड़ी सहयोग परिषद् में भारतीय श्रमिकों को अस्थिर तेल कीमतों और बदलते श्रम कानूनों के कारण प्रायः नौकरी की असुरक्षा का सामना करना पड़ता है। कई प्रवासी सदस्य विशेष रूप से कम कौशल वाली नौकरियों में अपनी क्षमता का पूर्ण उपयोग करने में असमर्थ हैं, जिसके परिणामस्वरूप अल्प रोजगार और आय असमानता उत्पन्न होती है।

दूसरी और तीसरी पीढ़ी के भारतीयों को अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाए रखने, अपनी विरासत को संरक्षित करते हुए मेजबान संस्कृतियों के साथ एकीकरण में सन्तुलन बनाने में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। कई मेजबान देशों में नस्लवाद और विदेशी द्वेष की घटनाएँ चिन्ता का विषय बनी हुई हैं, जो प्रवासी सदस्यों के कल्याण को प्रभावित कर रही हैं। अमेरिका और ब्रिटेन जैसे देशों में सख्त आप्रवासन नीतियां प्रवासी भारतीयों और उनके परिवारों के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न करती हैं, तथा उनके निवास और विकास के अवसर सीमित कर देती हैं। वैवाहिक और संपत्ति संबंधी विवाद प्रायः प्रवासी भारतीयों के जीवन को जटिल बना देते हैं, जिसके लिए राजनयिक और कानूनी हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष :

प्रवासी भारतीय भारत की वैश्विक पहचान के स्तम्भ हैं, जो देश की अर्थव्यवस्था, संस्कृति और सॉफ्ट पावर में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। सक्रिय भागीदारी एवं सुदृढ़ नीतियों के साथ, भारत इन संबंधों को और भी मजबूत कर सकता है, जिससे पारस्परिक विकास तथा समृद्धि सुनिश्चित हो सके। वैश्वीकरण ने भारतीय समाज में सांस्कृतिक समांगीकरण को बढ़ावा देने के बजाय सांस्कृतिक विशिष्टताओं को सुदृढ़ किया है।

भारतीय समाज ने वैश्वीकरण के प्रति एक सक्रिय और रचनात्मक प्रतिक्रिया दी जिससे अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने और बढ़ावा देने में सफलता मिली है। यह दर्शाता है कि वैश्वीकरण एक समान बनाने वाली शक्ति नहीं है, बल्कि यह स्थानीय संस्कृतियों को अनुकूलित करने और विकसित करने का अवसर प्रदान करती है। अतः भारत को अपनी सांस्कृतिक विविधता को संरक्षित करने और बढ़ावा देने के लिए निरन्तर प्रयास करने की आवश्यकता है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

सन्दर्भ सूची :

1.भारतीय संस्कृति के आधार स्तम्भ - डॉ. कृष्ण कान्त पाठक

2.लोक संस्कृति, समाज एवं पारिस्थितिकी सन्तुलन - अरुणा व्यास

3.वैश्विक हिन्दी परिवार संस्कृति - संस्कृति संबंधी लेख

4.वैश्वीकरण और भारतीय संस्कृति: एक विश्लेषण

5.विकिपीडिया - एक मुक्त ज्ञान कोष

6.सिंह, राणा पी.बी. (2012) प्रवासी भारतीय और वैश्विक पहचान। नई दिल्ली: रावत प्रकाशन

7.दुबे, श्यामाचरण, संस्कृति और समाज, नई दिल्ली: राष्ट्रीय पुस्तक न्यास।

8.शोध-पत्र - शर्मा, रामविलास: वैश्वीकरण और भारतीय संस्कृति।

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

हाशिये की पुकार: वंचित वर्गों की सामाजिक और साहित्यिक आवाज़ें

प्रकाश चन्द्र बामनियाँ

शोधार्थी

गोविन्दुरु जनजातीय विश्वविद्यालय बांसवाडा (राज.)

email id - pcbamaniya1987@gmail.com

सारांश :- (Abstract)

भारतीय समाज की संरचना ऐतिहासिक रूप से बहुविध और असमानताओं से युक्त रही है। जाति, वर्ग, लिंग और धर्म के आधार पर समाज के कई वर्ग मुख्यधारा से वंचित रहे हैं। इन हाशिये के वर्गों को केवल सामाजिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक दृष्टि से भी मुख्यधारा से बाहर रखा गया। इस शोध-पत्र का उद्देश्य हाशिये के वर्गों के सामाजिक संघर्ष, उनकी साहित्यिक अभिव्यक्ति और संवैधानिक अधिकारों के महत्व को समझना है। दलित साहित्य, आदिवासी साहित्य और स्त्री साहित्य ने हाशिये के वर्गों के अनुभव और संघर्ष को सामने लाया। सामाजिक न्याय और समानता की दिशा में बी. आर. अम्बेडकर, ज्योतिराव फुले, बिरसा मुंडा और पेरियार ई. वी. रामासामी जैसे विचारकों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। भारतीय संविधान ने वंचित वर्गों के अधिकारों और सामाजिक सुरक्षा के लिए कानूनी आधार प्रदान किया। साहित्य और संवैधानिक संरचना दोनों ने मिलकर हाशिये के वर्गों की पहचान और उनके अधिकारों की रक्षा में योगदान दिया।

मूल शब्द :- हाशिया, वंचित वर्ग, दलित साहित्य, आदिवासी साहित्य, स्त्री साहित्य, सामाजिक न्याय, संविधान, समानता, मानवाधिकार, पहचान, सामाजिक चेतना |

प्रस्तावना :-

भारतीय समाज में सामाजिक असमानता की जड़ें गहरी और ऐतिहासिक हैं। प्राचीन काल से ही जाति व्यवस्था और पितृसत्तात्मक संरचनाओं ने समाज के अनेक वर्गों को मुख्यधारा से बाहर रखा। हाशिये के वर्गों में दलित, आदिवासी, महिला और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग प्रमुख हैं। सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक रूप से उपेक्षित ये वर्ग कई बार समाज में अपनी पहचान और अधिकारों के लिए संघर्ष करते रहे।बीसवीं शताब्दी में समाज में परिवर्तन की गति बढ़ी। शिक्षित वर्गों और सामाजिक आंदोलनों के माध्यम से हाशिये के वर्गों की आवाज़ को महत्व मिला। साहित्य ने उनके दर्द, संघर्ष और आकांक्षाओं को उजागर किया। दलित साहित्य ने जातिगत भेदभाव और सामाजिक अपमान

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

को सामने रखा, आदिवासी साहित्य ने उनकी सांस्कृतिक पहचान और संघर्ष को व्यक्त किया, जबकि स्त्री साहित्य ने महिलाओं के जीवन और उनके अधिकारों की रक्षा पर प्रकाश डाला। भारतीय संविधान ने हाशिये के वर्गों के अधिकारों की रक्षा के लिए कानूनी आधार प्रदान किया। इस शोध-पत्र में सामाजिक चेतना, साहित्य और संवैधानिक संरक्षण का विश्लेषण किया गया है।

सामाजिक चेतना और परिवर्तन

ज्योतिराव फुले ने समाज के उपेक्षित वर्गों की शिक्षा और उत्थान के महत्व पर विशेष ध्यान दिया। उनकी कृति *गुलामगिरी* में दलित और शूद्र वर्ग के शोषण का विस्तृत चित्रण है। फुले ने स्पष्ट किया कि शिक्षा और जागरूकता ही सामाजिक परिवर्तन का सबसे प्रभावी साधन है। उन्होंने महिलाओं की शिक्षा पर भी जोर दिया और कहा कि जब तक समाज के हर वर्ग को समान अवसर नहीं मिलते, तब तक सामाजिक न्याय अधूरा है।

दक्षिण भारत में पेरियार ई. वी. रामासामी ने जाति व्यवस्था और सामाजिक भेदभाव के खिलाफ "आत्मसम्मान आंदोलन" शुरू किया। उन्होंने जातिवाद और अंधविश्वास के खिलाफ खुलकर संघर्ष किया। पेरियार का तर्कवादी दृष्टिकोण और सामाजिक न्याय के लिए उनकी क्रांतिकारी सोच हाशिये के वर्गों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनी।

बिरसा मुंडा ने औपनिवेशिक शासन और जमींदारी व्यवस्था के खिलाफ आदिवासी आंदोलन का नेतृत्व किया। उनका "उलगुलान" आदिवासी समाज के स्वाभिमान और भूमि अधिकार की रक्षा का प्रतीक बन गया। बिरसा मुंडा के आंदोलन ने आदिवासी चेतना और सामाजिक समानता की दिशा में मार्ग प्रशस्त किया।

बी. आर. अम्बेडकर ने दलितों और वंचित वर्गों के अधिकारों के लिए जीवन समर्पित किया। उन्होंने भारतीय संविधान में समानता और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने के लिए कई अनुच्छेद शामिल किए। उनका यह योगदान हाशिये के वर्गों के उत्थान में निर्णायक रहा।

दलित साहित्य और प्रमुख साहित्यकार

दलित साहित्य ने वंचित वर्गों के अनुभवों और संघर्ष की सशक्त अभिव्यक्ति की है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा *जूठन* में दलित जीवन की कठोर सामाजिक वास्तविकताओं और जातिगत भेदभाव का मार्मिक चित्रण है। वाल्मीकि ने अपने बचपन और शिक्षा के अनुभवों के माध्यम से समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव को उजागर किया। यह केवल व्यक्तिगत कहानी नहीं है, बल्कि पूरे दलित समाज की पीड़ा और संघर्ष का प्रतिनिधित्व करती है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

शरण कुमार लिंबाले की आत्मकथा *अक्करमाशी* दलित जीवन की कठिनाइयों और सामाजिक अपमान का गहन विश्लेषण करती है। उनके लेखन में दलित चेतना, सामाजिक विद्रोह और आत्मसम्मान की भावनाएँ प्रकट होती हैं।

नामदेव ढसाल की कविताएँ, विशेषकर *गोलपीठा*, दलित जीवन के संघर्ष और विद्रोह की अभिव्यक्ति हैं। उनके शब्दों में दलित समाज की पीड़ा और सामाजिक चेतना को मार्मिक और क्रांतिकारी रूप में व्यक्त किया गया है। इसके अलावा, सुशील कुमार सुमन और हरिकृष्ण सावरकर की लेखनी ने दलित जीवन और सामाजिक अन्याय को साहित्य में उजागर किया। दलित साहित्य ने हाशिये के वर्गों के अधिकारों और सामाजिक न्याय के महत्व को पाठकों के समक्ष रखा।

आदिवासी साहित्य और प्रमुख साहित्यकार

आदिवासी साहित्य उनके जीवन, संस्कृति और संघर्ष का सशक्त माध्यम है। महाश्वेता देवी ने आदिवासी जीवन और उनके संघर्षों को साहित्य का मुख्य विषय बनाया। उनकी कहानी द्रौपदी और उपन्यास *अरण्येर अधिकार* आदिवासी समाज के शोषण और संघर्ष का गहन चित्रण प्रस्तुत करते हैं। विशेषकर *अरण्येर अधिकार* में बिरसा मुंडा के आंदोलन का साहित्यिक चित्रण मिलता है। निर्मला पुतुल की कविताएँ आदिवासी स्त्रियों के जीवन और उनकी सांस्कृतिक पहचान को उजागर करती हैं। आदिवासी साहित्य ने हाशिये के वर्गों की पहचान, अधिकार और सामाजिक न्याय को साहित्यिक रूप से मजबूती दी है। आदिवासी जीवन के संघर्ष और सांस्कृतिक विविधता के माध्यम से यह साहित्य सामाजिक चेतना को भी बढ़ावा देता है।

स्त्री साहित्य और प्रमुख साहित्यकार

स्त्री साहित्य ने महिलाओं के अनुभव, पीड़ा और सामाजिक संघर्ष को प्रभावशाली रूप से अभिव्यक्त किया। महादेवी वर्मा की *श्रृंखला की कड़ियाँ* में महिला जीवन की जटिलताओं और सामाजिक प्रतिबंधों का चित्रण मिलता है। कृष्णा सोबती का उपन्यास *मित्रो मरजानी* स्त्री स्वतंत्रता और सामाजिक बाधाओं के बीच संघर्ष को प्रकट करता है।

इस्मत चुगताई की कहानी *लिहाफ* पितृसत्तात्मक समाज की रूढ़ियों और लैंगिक असमानता को चुनौती देती है। अमृता प्रीतम की कविताएँ महिला जीवन की संवेदनाओं, प्रेम और संघर्ष की अभिव्यक्ति हैं। स्त्री साहित्य ने सामाजिक न्याय, समानता और पहचान की अवधारणा को साहित्य में उजागर किया। इस प्रकार स्त्री साहित्य हाशिये के वर्गों के अधिकार और पहचान को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

संवैधानिक प्रावधान और सामाजिक सुरक्षा -

भारतीय संविधान ने वंचित वर्गों के अधिकारों और समानता की रक्षा के लिए व्यापक प्रावधान किए हैं। अनुच्छेद 14 से 18 तक सभी नागरिकों को समानता का अधिकार प्राप्त है। अनुच्छेद 14 कानून के समक्ष समानता सुनिश्चित करता है, जबकि अनुच्छेद 15 जाति, धर्म, लिंग आदि के आधार पर भेदभाव निषेध करता है। अनुच्छेद 16 सरकारी नौकरियों में समान अवसर प्रदान करता है। अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता का उन्मूलन करता है और अनुच्छेद 18 उपाधियों का उन्मूलन सुनिश्चित करता है। अनुच्छेद 46 अनुसूचित जाति और जनजाति के हितों की रक्षा करता है, जबकि अनुच्छेद 330 और 332 संसद और विधानसभाओं में अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए आरक्षण प्रदान करते हैं। अनुच्छेद 29 और 30 अल्पसंख्यक समुदायों की संस्कृति और शिक्षा के अधिकारों की सुरक्षा करते हैं। इन संवैधानिक प्रावधानों ने हाशिये के वर्गों के सामाजिक उत्थान, समानता और मानवाधिकारों की रक्षा का आधार तैयार किया।

साहित्य और सामाजिक परिवर्तन

हाशिये का साहित्य सामाजिक चेतना और परिवर्तन का सशक्त माध्यम है। यह साहित्य सामाजिक अन्याय को उजागर करता है, वंचित वर्गों की पहचान को मान्यता देता है और समानता तथा मानवाधिकारों के लिए प्रेरणा प्रदान करता है। दलित, आदिवासी और स्त्री साहित्य ने हाशिये के वर्गों के संघर्ष को उजागर कर सामाजिक न्याय और समानता के महत्व को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया। साहित्य और संविधान मिलकर सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को मजबूत करते हैं।

निष्कर्ष -

हाशिये की पुकार केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं बल्कि सामाजिक न्याय, समानता और लोकतांत्रिक मूल्यों की सशक्त आवाज़ है। ज्योतिराव फुले, बिरसा मुंडा, पेरियार ई. वी. रामासामी और बी. आर. अम्बेडकर जैसे नेताओं के संघर्षों और विचारों ने वंचित वर्गों को जागरूक किया। ओमप्रकाश वाल्मीकि, शरण कुमार लिंबाले, महाश्वेता देवी, नामदेव ढसाल, महादेवी वर्मा, कृष्णा सोबती, इस्मत चुगताई और अमृता प्रीतम जैसी साहित्यकारों की रचनाओं ने हाशिये के वर्गों के अनुभवों और पहचान को साहित्य में मजबूती से स्थापित किया। भारतीय संविधान ने उनके अधिकारों और सामाजिक सुरक्षा के लिए कानूनी आधार प्रदान किया। इस प्रकार हाशिये की पुकार सामाजिक न्याय, समानता और सांस्कृतिक चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1.अम्बेडकर, बी. आर. *अनीहिलेशन ऑफ कास्ट*.

2.फुले, ज्योतिराव. *गुलामगिरी*.

3.वाल्मीकि, ओमप्रकाश. *जूठन*.

4.लिंबाले, शरण कुमार. *अक्करमाशी*.

5.देवी, महाश्वेता. *चयनित कहानियाँ*।

6.ढसाल, नामदेव. *गोलपीठा*।

7.कुमार, अमित. आदिवासी विमर्श अर्थ एवं अवधारणा |

8.मीना, गंगासहाय संपादक आदिवासी साहित्य विमर्श |

9.सिंह, आराधना -स्त्री विमर्श अवधारणा एवं आलोचना के आयाम |

10.नव निशा, दलित विमर्श शोधछात्रा मगध विश्वविद्यालय बोधगया |

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

हिंदी साहित्य में आदिवासी अस्मिता और जीवन-संघर्ष : हाशिये से केंद्र की ओर

आकांक्षा बांगर, शोधार्थी

हिंदी विभाग, रा. तु. म. नागपुर विश्वविद्यालय नागपुर

डॉ. गजानन पालेनवार, शोध निर्देशक

हिंदी विभाग प्रमुख, तायवाडे महाविद्यालय, कोराडी, नागपुर

शोध सार

भारतीय समाज में आदिवासी समुदाय का इतिहास अत्यंत प्राचीन और समृद्ध रहा है, किंतु सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारणों से उन्हें लंबे समय तक मुख्यधारा से दूर रखा गया। आदिवासी समुदाय

भारत के प्रथम निवासी माने जाते है। उनकी जीवन-पद्धति, संस्कृति, परंपराएँ और प्रकृति के साथ उनका गहरा संबंध भारतीय सांस्कृतिक विरासत का महत्वपूर्ण अंग है। किंतु औपनिवेशिक शासन, औद्योगीकरण, आधुनिक विकास नीतियों और सामाजिक उपेक्षा के कारण आदिवासी समाज लंबे समय तक मुख्यधारा से अलग रहा। हिंदी साहित्य ने समय-समय पर आदिवासी जीवन, उनके संघर्ष, सांस्कृतिक अस्मिता और सामाजिक समस्याओं को अभिव्यक्ति प्रदान की है। आधुनिक समय में आदिवासी विमर्श हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण सशक्त धारा के रूप में उभर कर सामने आया है। जिसने आदिवासी समाज की पहचान, अधिकारों और संघर्षों को केंद्र में स्थापित करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन के चित्रण का अध्ययन करना तथा यह देखना है कि किस प्रकार साहित्य ने आदिवासी समाज को हाशिये से उठाकर केंद्र की ओर लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

बीज शब्द:- आदिवासी अस्मिता, हिंदी साहित्य, प्रकृति, संस्कृति, जीवन संघर्ष

प्रस्तावना - साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज में जो भी परिवर्तन होते हैं, उनका प्रभाव साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। आदिवासी समाज भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग है, किंतु ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण यह समाज लंबे समय तक मुख्यधारा से अलग रहा। "आदिवासी समुदाय लंबे समय से सामाजिक और आर्थिक शोषण का शिकार रहा है, जिसके कारण उनकी अस्मिता और अस्तित्व का प्रश्न साहित्य और समाज दोनों में महत्वपूर्ण बन गया है।"[1]

हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन का चित्रण धीरे-धीरे विकसित हुआ और आधुनिक काल में यह एक सशक्त विमर्श के रूप में सामने आया। "हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श दलित और स्त्री विमर्श

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

की तरह एक महत्वपूर्ण वैचारिक धारा के रूप में विकसित हुआ है।"[2] आदिवासी समाज की अपनी विशिष्ट संस्कृति, परंपराएँ और जीवन-दृष्टि है। वे प्रकृति के साथ गहरे संबंध में जीवन जीते हैं। उनकी संस्कृति सामूहिकता, समानता और प्रकृति-पूजा पर आधारित है। हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन का चित्रण केवल उनकी पीड़ा और संघर्ष तक सीमित नहीं है, बल्कि उनकी सांस्कृतिक पहचान और जीवन-मूल्यों को भी प्रस्तुत करता है।

शोध का उद्देश्य - इस शोध-पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन के चित्रण का अध्ययन करना।
2. आदिवासी अस्मिता और सांस्कृतिक पहचान के स्वरूप को समझना।
3. आदिवासी समाज के जीवन-संघर्ष और समस्याओं का विश्लेषण करना।
4. यह देखना कि हिंदी साहित्य में आदिवासी समाज को किस प्रकार हाशिये से केंद्र की ओर लाया गया है।

शोध-पद्धति - इस शोध-पत्र में विश्लेषणात्मक एवं आलोचनात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है। इसके अंतर्गत हिंदी साहित्य की विभिन्न कृतियों, आलोचनात्मक ग्रंथों तथा शोध-लेखों का अध्ययन करके आदिवासी जीवन और अस्मिता के चित्रण का विश्लेषण किया गया है।

आदिवासी समाज और उसकी अस्मिता - भारत में संथाल, भील, गोंड, मुंडा, उरांव, हो आदि अनेक जनजातियाँ निवास करती हैं। आदिवासी समाज की पहचान उनकी संस्कृति, परंपराओं, सामूहिक जीवन-पद्धति और प्रकृति पूजक के रूप में होती है। "आदिवासी समाज की संस्कृति प्रकृति के साथ सहअस्तित्व पर आधारित है, जिसमें सामूहिकता और समानता की भावना प्रमुख होती है।"[3] आदिवासी अस्मिता का संबंध उनकी सांस्कृतिक पहचान, परंपराओं और जीवन-मूल्यों से है। औपनिवेशिक शासन, औद्योगीकरण और आधुनिक विकास नीतियों के कारण आदिवासी समाज के जल, जंगल और जमीन पर अधिकार कम होते गए। "आदिवासी अस्मिता का संबंध केवल सामाजिक पहचान से नहीं बल्कि उनकी सांस्कृतिक परंपराओं, भाषाओं और जीवन-मूल्यों से भी है।"[4]

हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन का चित्रण

(क) प्रारंभिक हिंदी साहित्य में आदिवासी संदर्भ

प्रारंभिक हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन का चित्रण सीमित रूप में मिलता है। उस समय साहित्य मुख्यतः राजदरबार, धार्मिक विषयों और उच्च वर्ग के जीवन पर केंद्रित था। "लोक साहित्य में आदिवासी जीवन, प्रकृति-प्रेम और सामूहिक जीवन-दृष्टि के अनेक उदाहरण मिलते हैं।"[5]

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

(ख) आधुनिक हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श - आधुनिक हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन का चित्रण अधिक स्पष्ट और सशक्त रूप में दिखाई देता है।

1960 के उपरान्त के साहित्य में उपन्यास, कहानी और कविता में आदिवासी जीवन के संघर्ष, शोषण और सांस्कृतिक पहचान को प्रमुखता से प्रस्तुत किया गया है।

"हिंदी उपन्यासों में आदिवासी समाज को लंबे समय तक हाशिये पर रखा गया, किंतु समकालीन साहित्य में उनकी आवाज़ अधिक मुखर होकर सामने आई है।"[6]

आदिवासी जीवन-संघर्ष का साहित्यिक चित्रण - हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन-संघर्ष कई रूपों में दिखाई देता है—

(1) आर्थिक संघर्ष - आदिवासी समाज का प्रमुख संघर्ष अपने जंगल और जमीन को बचाने को लेकर रहा है।

"भूमि और जंगल आदिवासी जीवन का आधार हैं; इनके बिना उनकी संस्कृति और अस्तित्व दोनों संकट में पड़ जाते हैं।"[7] क्योंकि जनजातीय आबादी या आदिवासियों का जीवन पूरी तरह जंगल और उससे प्राप्त संसाधनों पर ही निर्भर होता है, वही उनकी आय का मुख्य स्रोत होता है। जंगल पर लगाएं गए प्रतिबंधों से उनके जीवन में आर्थिक अस्थिरता भी दिखाई देती है।"नई आर्थिक नीतियों ने आदिवासी समाज के शोषण की प्रक्रिया को तेज किया, जिससे उनकी अस्मिता और अस्तित्व का संकट और गहरा हुआ।"[8]

(2) सांस्कृतिक संघर्ष - आधुनिकता और वैश्वीकरण के प्रभाव से आदिवासी संस्कृति पर भी खतरा उत्पन्न हुआ है।

"आदिवासी संस्कृति प्रकृति के साथ सामंजस्य पर आधारित है, जबकि आधुनिक विकास मॉडल उसे विस्थापन और विनाश की ओर ले जाता है।"[9] इसी बीच वे अपना सांस्कृतिक जीवन को बचाने में भी संघर्षरत दिखाई देते है।

"आदिवासी समाज को लंबे समय तक सामाजिक संरचना में हाशिये पर रखा गया, जिसके कारण उनकी सांस्कृतिक पहचान और अस्तित्व का प्रश्न गंभीर हो गया।"[10]

(3) सामाजिक और राजनीतिक संघर्ष - इतिहास में आदिवासी समाज को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्तर पर उपेक्षा का सामना करना पड़ा। उनकी जमीन, जंगल और प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार धीरे-धीरे कम होते गए। इसके परिणामस्वरूप आदिवासी समाज का जीवन संकटग्रस्त हो गया।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

आदिवासी समाज को लंबे समय तक सामाजिक उपेक्षा का सामना करना पड़ा है।

"आदिवासी समाज आज भी शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार जैसी मूलभूत सुविधाओं से वंचित है।"[11]

हिंदी साहित्य में आदिवासी अस्मिता का उदय - समकालीन हिंदी साहित्य में आदिवासी अस्मिता का स्वर अधिक मुखर हुआ है। कविता, कहानी और उपन्यास में आदिवासी लेखकों ने स्वयं अपनी पीड़ा और संघर्ष को अभिव्यक्ति दी है।

"आदिवासी साहित्य केवल पीड़ा का साहित्य नहीं है, बल्कि यह प्रतिरोध और आत्मसम्मान की चेतना का साहित्य भी है।" [12] अपने पर जो बीती उसकी अभिव्यक्ति मात्र नहीं अपितु समाज को जागृत कर एकजुट करना भी है।

"आदिवासी विमर्श का उद्देश्य केवल शोषण का चित्रण करना नहीं, बल्कि आदिवासी समाज की पहचान और अधिकारों को स्थापित करना है।"[13]

हिंदी कथा साहित्य में आदिवासी जीवन - हिंदी कथा साहित्य में कई लेखकों ने आदिवासी जीवन का सशक्त चित्रण किया है। निर्मला पुतुल, महाश्वेता देवी, संजीव, और अन्य लेखकों ने अपने साहित्य में आदिवासी समाज के संघर्ष और शोषण को प्रमुखता से प्रस्तुत किया है।

"समकालीन हिंदी उपन्यासों में आदिवासी जीवन का चित्रण सामाजिक न्याय और मानवीय संवेदना के दृष्टिकोण से किया गया है।"[14]

हाशिये से केंद्र की ओर - आधुनिक हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन का चित्रण अब केवल सहानुभूति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय और समानता की मांग भी करता है। आज कई आदिवासी लेखक स्वयं अपने अनुभवों को साहित्य में अभिव्यक्त कर रहे हैं।

"समकालीन हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श ने हाशिये के समाज को केंद्र में लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।"[15] समकालीन हिंदी साहित्य में आदिवासी समाज की उपस्थिति पहले की तुलना में अधिक मजबूत हुई है।

"आदिवासी विमर्श ने हिंदी साहित्य में उन समुदायों को केंद्र में स्थापित किया है जो लंबे समय तक हाशिये पर रहे।"[16]

इस प्रकार हिंदी साहित्य ने आदिवासी समाज की समस्याओं, संघर्षों और सांस्कृतिक पहचान को उजागर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

निष्कर्ष - उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन का चित्रण समय के साथ विकसित हुआ है। प्रारंभिक साहित्य में जहां आदिवासी जीवन का उल्लेख सीमित था, वहीं आधुनिक और समकालीन साहित्य में यह एक महत्वपूर्ण विमर्श के रूप में उभर कर सामने आया है।

हिंदी साहित्य ने आदिवासी समाज की पीड़ा, संघर्ष, संस्कृति और अस्मिता को अभिव्यक्ति देकर उन्हें हाशिये से केंद्र की ओर लाने का प्रयास किया है। आज आदिवासी साहित्य केवल सहानुभूति का विषय नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, समानता और सांस्कृतिक पहचान की स्थापना का माध्यम बन गया है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि हिंदी साहित्य ने आदिवासी समाज की आवाज़ को सशक्त बनाकर उनके अस्तित्व और अस्मिता को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

संदर्भ सूची

1. मीणा, गंगासहाय (2019). आदिवासी चिंतन की भूमिका. नई किताब प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 32
2. कौर, मनप्रीत एवं सेन, राजेन्द्र कुमार (2020). हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श की चुनौतियाँ, पृ. 115
3. शर्मा, रामविलास (2008). हिंदी साहित्य और समाज, पृ. 52
4. कंडुलना, अजय (2024). आदिवासी अस्मिता और संघर्ष, पृ. 68
5. शर्मा, रामविलास (2008)हिंदी साहित्य और समाज, पृ. 45
6. कौर, मनप्रीत एवं सेन, राजेन्द्र कुमार (2020). हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श की चुनौतियाँ, पृ. 116
7. कंडुलना, अजय (2024). आदिवासी अस्मिता और संघर्ष, पृ. 112
8. मीणा, गंगासहाय (2019). आदिवासी चिंतन की भूमिका. नई किताब प्रकाशन, पृ. 54
9. वही, पृ. 61
10. वही, पृ. 34
11. साहित्यसेतु (2020). हिंदी उपन्यासों में आदिवासी समाज और संघर्ष, पृ. 3
12. अली, मुल्ला आदम (2024). आदिवासी अस्मिता और हिंदी कविता, पृ. 14)
13. मीणा, गंगासहाय (2019). आदिवासी चिंतन की भूमिका. नई किताब प्रकाशन, पृ. 72)
14.कौर, मनप्रीत एवं सेन, राजेन्द्र कुमार (2020). हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श की चुनौतियाँ, पृ. 118)
15. वही, पृ. 118
16. मीणा, गंगासहाय (2019). आदिवासी चिंतन की भूमिका. नई किताब प्रकाशन, पृ. 75

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

इक्कीसवीं सदी के उपन्यासों में 'वृद्ध विमर्श'

डॉ. कमलाकर देवरावजी नवघरे

सहायक प्राध्यापक, हिंदी

रा. सुं. बिडकर कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय, हिंगनघाट.

शोध सारांश -

इक्कीसवीं सदी के उपन्यास वृद्धों के अकेलेपन, संवादहीनता और अप्रासंगिकता के बोध को अभिव्यक्ति दे रहे हैं। जहाँ एक ओर परंपराएं उन्हें सम्मान देने की बात करती हैं, वहीं दूसरी ओर व्यावहारिक धरातल पर उन्हें 'वृद्धाश्रम' या 'फ्लैट' के एक अंधेरे कमरे तक सीमित कर दिया गया है। अतः, इस कालखंड का उपन्यास साहित्य वृद्धों की केवल शारीरिक जर्जरता का नहीं, बल्कि उनके मानसिक अवसाद और भावनात्मक उपेक्षा का जीवंत दस्तावेज़ है। वैश्वीकरण, महानगरीय संस्कृति और संयुक्त परिवारों के विघटन ने वृद्धों को समाज के हाशिए पर ला खड़ा किया है। समकालीन उपन्यासकारों ने अपने लेखन में वृद्धों के अकेलेपन, उपेक्षा, पीढ़ीगत अंतराल और उनके अस्तित्वगत संकट को प्रमुखता से उभारा है। आधुनिकता की दौड़ में मानवीय संवेदनाएँ लुप्त हो रही हैं और वृद्ध केवल 'अनावश्यक वस्तु' बनकर रह गए हैं। हृदयेश के 'चार दरवेश' जैसे उपन्यासों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि वृद्ध समाज अब केवल सहानुभूति नहीं, बल्कि सम्मान और सक्रिय भागीदारी की तलाश में है। समकालीन साहित्य वृद्धों की मौन पीड़ा को स्वर देकर समाज को आत्म-निरीक्षण के लिए प्रेरित कर रहा है।

मूलशब्द – भूमंडलीकरण, वृद्ध विमर्श, वृद्धावस्था, विभक्त परिवार, समकालीन उपन्यास, पीढ़ी अंतराल, अकेलापन, सामाजिक विघटन।

प्रस्तावना -

इक्कीसवीं सदी का साहित्य मानव जीवन के उन अनछुए और जटिल कोनों को स्पर्श कर रहा है, जिन्हें पूर्ववर्ती साहित्य में प्रायः हाशिए पर रखा गया था। आज के समय में 'वृद्ध विमर्श' केवल एक सामाजिक चिंता नहीं, बल्कि समकालीन उपन्यासों का एक केंद्रीय और अनिवार्य विषय बन गया है। इक्कीसवीं सदी में वैश्विक स्तर पर हुए तकनीकी विकास, शहरीकरण और उपभोक्तावादी संस्कृति ने परिवार की पारंपरिक संरचना को पूरी तरह बदल दिया है। 'वसुधैव कुटुंबकम्' और 'संयुक्त परिवार' की अवधारणाएं तेजी से बिखर रही हैं, जिसका सबसे गहरा और सीधा प्रभाव समाज के वयोवृद्ध वर्ग पर

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

पड़ा है। चिकित्सा विज्ञान की प्रगति ने मनुष्य की औसत आयु तो बढ़ा दी है, लेकिन इस बढ़ी हुई आयु को समाज और परिवार ने गुणवत्तापूर्ण जीवन देने के बजाय एक 'बोझ' या 'अतिरिक्त समय' के रूप में स्वीकार किया है। आज का वृद्ध पात्र उपन्यासों में केवल आशीर्वाद देने वाला 'कुलपति' या 'घर का बुजुर्ग' भर नहीं है, बल्कि वह अपनी अस्मिता, निर्णय शक्ति और अस्तित्व की लड़ाई लड़ता हुआ एक द्वंद्वात्मक व्यक्तित्व है। समकालीन उपन्यासकारों ने बहुत ही संवेदनशीलता के साथ यह चित्रित किया है कि कैसे आधुनिकता की अंधी दौड़ में वृद्ध अपनी ही संतानों के लिए 'अजनबी' होते जा रहे हैं।

इक्कीसवीं सदी के उपन्यासों में वृद्धों की स्थिति -

पारिवारिक जीवन में वृद्धावस्था एक ऐसी समस्या बन गई है जिसने किसी विशिष्ट समुदाय या देश को नहीं तो संपूर्ण संसार को ग्रस लिया है| जो व्यक्ति जीवन भर काम कर अपना पेट काटकर अपने परिवार, बच्चों की देखभाल करता है, सुख सुविधाओं से भरा पूरा जीवन उन्हें प्रदान करता है, वही व्यक्ति वृद्धावस्था में दुख भोगता है| उसके अपने बच्चे उससे घृणा, नफरत करने लगते हैं| परिवार के सदस्यों के लिए वह अप्रिय लगने लगता है। एक अंधेरा बदबूदार कमरा और नरक यातनाएं उसका जीवन बन कर रह जाती है| संयुक्त परिवार वर्तमान युग में महज कल्पना बनकर रह गई है। भूमंडलीकरण के इस युग में ग्रामीण जीवन नगरों की ओर पलायन कर रहा है| ग्रामीण जीवन में संयुक्त परिवार एक बुनियाद की तरह था| ग्रामीणों की शहरों की ओर पलायनवादी भूमिका ने संयुक्त परिवार की नींव खोखली कर महानगरों में विभक्त परिवार का साम्राज्य खड़ा किया| छोटे परिवारों में वृद्ध माता-पिता या अन्य वृद्ध व्यक्तियों को कोई स्थान नहीं है| जो व्यक्ति अपने काम से निवृत्त होकर नाती-पोतों के साथ खेलने की इच्छा रखता था, उसकी इच्छा अब मात्र इच्छा ही बनकर रह गई है|

इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक में वृद्धावस्था को लेकर अंतिम अरण्य, गिलिगडु, रेहन पर रग्घू, आखिरी मंजिल, चार दरवेश, कथा सनातन आदि उपन्यास लिखे गए हैं। लेखक हृदयेश द्वारा लिखित ‘चार दरवेश’ उपन्यास में चार वृद्धों का मर्मज्ञ चित्रण किया गया है| यह चार वृद्ध जब कभी एक जगह बैठते हैं तब एक दूसरे के पास अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हैं। कोई अपने दामाद के बारे में सुनाता है, तो कोई पोते की शिकायत करता है| रामप्रसाद को वृद्धावस्था के कारण पेशाब करते समय नियंत्रण नहीं रहता जिस कारण पेशाब की कुछ बूंदे उनके पैंट पर गिर जाती है| इस बात को लेकर उसे बेटी और उसके पूरे परिवार की उपेक्षा सहन कर जलील होना पड़ता है। दिलीपचन्द अपने मित्रों को अखबार में

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

छपी खबर को पढ़कर सुनाता है "एक पुत्र ने अपने बीमार वृद्ध पिता को घर से बाहर निकाल दिया था और जब वह पिता थाने में शिकायत करने गया, तो दीवान ने उसे अपनी आप बीती सुना दी थी की उसके बेटे ने उसके नए मकान पर जबरदस्ती कब्जा कर लिया है और वह अपने इस मकान में पाव तक रख नहीं सकता है। फिर उसे इस ज्यादती को बर्दाश्त करने की सीख यह कहते हुए दी थी की जमाने की हवा ने अपने ही बीज को जहरीला बना दिया है।"1 आज वृद्ध व्यक्ति बोझ बन कर रह गया है, जिस बेटे की खुशियों को पूरा करने के लिए वह कष्ट उठाता है, उस बेटे को पिता का पास आना भी पसंद नहीं है, घर में रखना तो दूर की बात है।

वृद्ध व्यक्ति का अंतिम दिनों में पुरानी यादें और अकेलापन ही एकमात्र सहारा रहता है| बदबूदार कमरा और उसमें रखे चारपाई बस यही उसकी दुनिया रह जाती है| निर्मल वर्मा ने अपने उपन्यास 'अंतिम अरण्य' में जीवन के इसी पड़ाव का चित्रण किया है| साहब के मन में कई आकांक्षाऐं उठती हैं जिसे वह बार-बार दबाने की कोशिश करते हैं, फिर भी वह लहरों की भांति और ऊपर उठकर आती है| वह अपने परिवार के साथ रहना चाहते हैं, नाती-पोतों के साथ खेलने की उनकी इच्छा कभी पूरी नहीं हो पाती है| चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यास 'गिलिगडु' में बाबू जसवंत सिंह और कर्नल स्वामी इन दो वृद्धों का सजीव चित्रण किया है| बाबू जसवंत सिंह और कर्नल स्वामी अपने बेटे को आईआईटी कानपुर में पढ़ाते हैं| बेटे के पढ़ाई का खर्च जब अधिक लगने लगता है, तब वह अपना प्रोविडेंट फंड तोड़कर उससे इसकी पढ़ाई का बोझ उठाते हैं। वह मन ही मन सोचते हैं की बेटा पढ़-लिख कर बड़ा बन जाए तो वही उनका सहारा बनेगा परंतु जब वह अपने बेटे नरेंद्र के घर जाते हैं, तो उन्हें बचा-कुचा बासी खाना दिया जाता है| बनाकर रखी गई रोटी उनसे चबाई नहीं जाती। इसकी शिकायत जब वह अपने बेटे से करते हैं तब वह उन्हें ही भाषण सुनाने लगता है। वह पोते के साथ खेलना चाहते हैं उसका जन्मदिन मनाने की उनकी इच्छा रहती है परंतु ऐन वक्त पर वह माता-पिता के साथ किसी बड़े से होटल में चले जाते हैं| बाबू जसवंत सिंह मन मसोसकर घर पर ही रहते हैं, उन्हें चलने के लिए पूछा तक नहीं जाता।

अकेलेपन की समस्या आज एक बड़ी समस्या बन गई है। अकेला रहना और अकेला छोड़ देना इन दोनों में अंतर है। कई लोग अकेला रहना पसंद करते हैं, परंतु भरे-पूरे परिवार में अकेला छोड़ देना गलत बात है। अकेलापन वृद्धों की सबसे बड़ी समस्या है। यह कभी नियति द्वारा मिलती है तो कभी अपने ही परिवार द्वारा मिलती है। वृद्ध और बालक में कोई अंतर नहीं रहता है। छोटा बालक घर के

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

अंदर, आँगन में परिवार वालों के साथ या बाहर अपने दोस्तों के साथ खेलना पसंद करता है। अकेले रहने से उसे बोरियत महसूस होती है। वह लाख मना करने पर भी बाहर दोस्तों से खेलने जाता ही है। इसी में उसे खुशी मिलती है। ठीक उसी तरह वृद्धों के जीवन में भी एकाकीपन चुभता है। वह चाहते हैं कि उनके साथ कोई बात करे। नाती-पोतों के साथ खेलने से उन्हें आनंद मिलता है।

वर्तमान युग में वृद्धों का स्थान घर के एक कोने में बदबूदार कमरा और उसमें रखी चारपाई यह रह गया है। उसे कोई पूछने वाला नहीं है। चार आवाज लगाओ तब एक का जवाब मिलता है। वृद्धों के परिवार से बाहर बात करने पर भी इन्हें आपत्ति होती है। 'चार दरवेश' उपन्यास के पात्र रामप्रसाद के साथ ठीक ऐसा ही होता है। रामप्रसाद अपनी बेटी और दामाद के घर रहते हैं। घर के लोग बात नहीं करते हैं इसलिए वे बाहर आस-पड़ोस के कुछ दोस्त बनाते हैं। समय काटने के लिए उनके साथ बैठते हैं, बातचीत करते हैं। दोस्तों के साथ बातचीत करने से उन्हें आनंद मिलता है। परंतु उनका इस तरह बाहर लोगों से बात करना उनकी बेटी को बुरा लगता है। वे उन्हें फटकारते हुए बाहरी लोगों से बात करने से साफ मना कर देती है।

पत्नी के देहांत के बाद उनका कोई सहारा नहीं था। किसी तरह आस-पड़ोस के दोस्त यही एकमात्र सहारा था। उस पर भी बेटी ने पाबंदी लगा दी। पत्नी की तस्वीर के सामने जाकर रामप्रसाद बहुत रोते हैं। "तुम मुझे बहुत जल्द छोड़कर चली गयी। मैं एकदम अकेला पड़ गया हूँ। मेरा अपना कोई नहीं है। अपनों की नज़र में मेरा दिमाग फिर गया है। घर कहने को बस मेरा है। मेरी दशा लद गए मेहमान से भी बदतर हो गयी है। समझ में नहीं आता कि मैं कहाँ जाऊँ, क्या करूं? जी बहुत घबराता है।"2 दुःख-दर्द बाँटने वाली संगिनी के देहांत के पश्चात रामप्रसाद बिलकुल अकेले पड़ गए हैं।

एक उम्र के बाद घर का मुखिया अपने ही घर में मेहमान बन जाता है, नहीं बनाया जाता है। उनको पता हो जाता है कि अब घर में उनकी नहीं चलने वाली। पहनावे से लेकर खान-पान तक सब परिवार भरोसे हो जाता है। 'गिलिगडु' उपन्यास में जसवंत सिंह की स्थिति कुछ ऐसी ही है। जसवंत सिंह को अपने ही घर में परायों की तरह रखा जाता है। बहू बात-बात पर ताने देने से नहीं चुकती है। बेटे के पास शिकायत करो तो बेटा पत्नी की ही जुबान बोलता है। बुढ़ापे में भी खुद के काम खुद ही करने पड़ते है।मशीन होने के बावजूद उनके कपड़े उन्हें खुद ही धोने पड़ते हैं। जसवंत सिंह को बवासीर है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

जिसके कारण अक्सर उनकी चड्डी में खून के दाग लग जाते हैं। बहु को उनके कपड़े धोना असह्य लगता है। परेशान होकर वह कहती है, "उनके पायजामे और चड्डी में लगे खून के धब्बे वाशिंग मशीन में नहीं छूटते। उनके बाथरूम में रिन की बट्टी रख दी गई है। कपड़े धोने डालने से पहले वे स्वयं धब्बों को तनिक रगड़ दिया करें। बच्चों के सफेद युनिफार्म इसी लापरवाही के चलते लगभग पीले पड़ रहे।"3

बुढ़ापा रोगों का घर बन जाता है। मधुमेह, रक्तचाप, दमा, कई तरह के दर्द इसी बुढ़ापे में अधिकतर उभरते हैं। रोगियों के लिए खान-पान में ध्यान रखना परिवार की खास जिम्मेदारी होती है। जसवंत सिंह को मधुमेह और बवासीर दोनों की शिकायत है। इसलिए उनके खाने की खास जिम्मेदारी बनती है लेकिन उनकी बहु अक्सर उन्हें तले हुए पदार्थ या बच्चों की बची-खुची मिठाई खाने को दे देती है। जसवंत सिंह को पता है की उनकी बहु उन्हें जूठन खाने को देती है। पर वे मन मसोसकर सोचते हैं कि, "औरों ने चिला खाने से मना कर दिया होगा। वे अनिच्छा प्रकट करने की औकात नहीं रखते। इच्छा-अनिच्छा घरवालों की होती है। घर में आकर रहनेवालों की नहीं।"4

आज वृद्धावस्था अभिशाप बन गई है वृद्धावस्था के चलते जीवनयापन असंभव सा हो गया है| पुराने मूल्यों के खोने का दुख, नई पीढ़ी के कुसंस्कारी बर्ताव का दुख, अकेलेपन का दुख, अपने ही घर में पराएपन का दुख, भावनाएं व्यक्त न करने का दुख ऐसे अनगिनत दुखों को भोगते हुए उन्हें अपना जीवन असह्य होकर जीना पड़ता है। वृद्धावस्था के कारण शरीर कमजोर हो जाने पर उन्हे सहारे की आवश्यकता होती हैं, पर कोई सहारा देने के लिए उनके पास नही रहता है। अपनी भावनाओं को व्यक्त करने हेतु वह दरवाजे पर टकटकी लगाए बैठे हैं, लेकिन परिवार के किसी सदस्य के पास उनसे दो बातें करने के लिए समय नहीं है। इक्कीसवीं सदी मे उनकी यह स्थिति एक गंभीर समस्या बनी है। जिसे उपन्यासकारों ने उपन्यास के द्वारा समाज, देश, दुनिया के सामने प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष -

इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में वृद्धों का चित्रण केवल सहानुभूति या करुणा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक गहरे सामाजिक और मनोवैज्ञानिक बदलाव का दस्तावेजीकरण है। पारंपरिक संयुक्त परिवारों के टूटने से वृद्ध अपने ही घर में 'अतिथि' या 'बोझ' की तरह महसूस करने लगे हैं। चार दरवेश जैसे उपन्यासों के माध्यम से यह स्थापित हुआ है कि वृद्धावस्था केवल अंत की प्रतीक्षा नहीं है, बल्कि यह इच्छाओं और नई संभावनाओं के पुनर्जन्म का समय भी हो सकता है। महानगरीय बोध और एकाकीपन ने वृद्धों के मानसिक स्वास्थ्य और 'अस्तित्व के संकट' को साहित्य के केंद्र में ला दिया है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

अंततः, इक्कीसवीं सदी का कथा-साहित्य यह संदेश देता है कि वृद्ध समाज को केवल पेंशन या चिकित्सा सुविधा की नहीं, बल्कि गरिमा और भावनात्मक संवाद की आवश्यकता है। लेखकों ने पुरानी पीढ़ी के अनुभवों और नई पीढ़ी की महत्वाकांक्षाओं के बीच के 'शून्य' को भरने का प्रयास किया है। यह साहित्य समाज को चेतावनी देता है कि यदि मानवीय संवेदनाओं का ह्रास इसी गति से होता रहा, तो भविष्य का समाज अपनी जड़ों से पूरी तरह कट जाएगा।

संदर्भ :

1. हृदयेश, चार दरवेश, पृ.16
2. हृदयेश, चार दरवेश पृ.139
3. चित्रा मुद्गल, गिलिगडु, पृ.71.
4. चित्रा मुद्गल, गिलिगडु, पृ. 39.

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

समकालीन हिंदी साहित्य और उदयीमान भारत

डॉ. संजय एस. धोटे

हिंदी विभाग प्रमुख, यशवंत महाविद्यालय, वर्धा

ईमेल - dhotedr.sanjay@yahoo.com

सार Abstract :

भारत आज वैश्विक स्तर पर एक उभरती हुई शक्ति के रूप में स्थापित हो रहा है। राजनीति, समाज, अर्थव्यवस्था, विज्ञान-प्रौद्योगिकी तथा प्रशासनिक व्यवस्था में हो रहे तीव्र परिवर्तनों ने भारतीय समाज की संरचना और मानसिकता को गहराई से प्रभावित किया है। इन परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। साहित्य समाज का दर्पण होने के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन का प्रेरक भी होता है। समकालीन हिंदी साहित्य में उदीयमान भारत की बहुआयामी छवि विभिन्न रूपों में व्यक्त हुई है,चाहे वह लोकतांत्रिक राजनीति का स्वरूप हो, सामाजिक न्याय और समानता के प्रश्न हों, आर्थिक उदारीकरण और बाजारवाद की चुनौतियाँ हों या प्रशासनिक व्यवस्था की जटिलताएँ।

यह शोधालेख समकालीन हिंदी साहित्य में उदीयमान भारत की अवधारणा का विश्लेषण करता है। इसमें विशेष रूप से राजनीतिक चेतना, सामाजिक परिवर्तन, आर्थिक बदलाव, प्रशासनिक व्यवस्था, वैश्वीकरण और डिजिटल युग के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि समकालीन हिंदी साहित्य केवल सामाजिक यथार्थ का चित्रण ही नहीं करता, बल्कि बदलते भारत की दिशा और संभावनाओं को भी अभिव्यक्त करता है।

कीवर्ड Keywords : समकालीन हिंदी साहित्य, उदीयमान भारत, सामाजिक परिवर्तन, वैश्वीकरण, राजनीतिक चेतना, आर्थिक विकास, डिजिटल संस्कृति

भारत प्राचीन काल से ही समृद्ध सांस्कृतिक, दार्शनिक और साहित्यिक परंपराओं का देश रहा है। भारतीय सभ्यता की विशेषता उसकी बहुलतावादी दृष्टि, आध्यात्मिकता, सहिष्णुता और सांस्कृतिक विविधता में निहित है। वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, पुराण, भक्तिकालीन साहित्य और आधुनिक साहित्यिक परंपराएँ इस बात का प्रमाण हैं कि भारत की सांस्कृतिक चेतना सदैव साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त होती रही है। हिंदी साहित्य भी इसी समृद्ध परंपरा का महत्वपूर्ण अंग है, जिसने विभिन्न ऐतिहासिक कालखंडों में भारतीय समाज के जीवन-मूल्यों, विचारधाराओं और सामाजिक परिस्थितियों

को अभिव्यक्ति प्रदान की है। हिंदी साहित्य का इतिहास यह दर्शाता है कि साहित्य केवल कल्पना या मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह समाज की चेतना और परिवर्तन का महत्वपूर्ण माध्यम भी है। प्रत्येक युग में साहित्यकारों ने अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों को समझते हुए उन्हें अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है। इसी कारण हिंदी साहित्य को भारतीय समाज का **जीवंत दस्तावेज** कहा जाता है।

वर्तमान समय में भारत को वैश्विक स्तर पर **'उदीयमान भारत'** के रूप में देखा जा रहा है। पिछले कुछ दशकों में भारत ने राजनीति, समाज, अर्थव्यवस्था, विज्ञान, प्रौद्योगिकी और प्रशासनिक व्यवस्था के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। आर्थिक उदारीकरण, वैश्वीकरण, सूचना प्रौद्योगिकी का विकास, शिक्षा का विस्तार, लोकतांत्रिक संस्थाओं की सुदृढ़ता तथा सामाजिक जागरूकता के बढ़ते स्तर ने भारतीय समाज की संरचना को गहराई से प्रभावित किया है। उदीयमान भारत का अर्थ केवल आर्थिक विकास या औद्योगिक प्रगति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया को भी दर्शाता है। इसमें लोकतांत्रिक मूल्यों की सुदृढ़ता, सामाजिक न्याय की स्थापना, लैंगिक समानता, तकनीकी नवाचार, पर्यावरणीय चेतना और सांस्कृतिक पुनर्जागरण जैसे विविध आयाम शामिल हैं। आज का भारत वैश्विक मंच पर अपनी पहचान बना रहा है और साथ ही अपनी सांस्कृतिक विरासत को भी नए रूप में पुनर्स्थापित कर रहा है। इन व्यापक परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। समकालीन हिंदी साहित्य ने इन सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों को संवेदनात्मक और वैचारिक रूप में अभिव्यक्त किया है। आज का साहित्यकार केवल सौंदर्यबोध या भावुकता तक सीमित नहीं है, बल्कि वह अपने समय की जटिल समस्याओं, संघर्षों और संभावनाओं को भी गंभीरता से समझता और प्रस्तुत करता है।

समकालीन हिंदी साहित्य में आधुनिक समाज के अनेक महत्वपूर्ण प्रश्नों और विमर्शों को प्रमुखता मिली है। **स्त्री विमर्श** ने महिलाओं की स्वतंत्रता, अधिकारों और सामाजिक स्थिति के प्रश्नों को उठाया है**, दलित विमर्श** ने सामाजिक न्याय और समानता की आवश्यकता को रेखांकित किया है, **आदिवासी विमर्श** ने आदिवासी समुदायों की संस्कृति, जीवन संघर्ष और पहचान को अभिव्यक्ति दी है। इसी प्रकार पर्यावरणीय संकट, वैश्वीकरण के प्रभाव, बाजारवाद, उपभोक्तावाद तथा डिजिटल संस्कृति जैसे विषय भी समकालीन साहित्य के महत्वपूर्ण आयाम बन गए हैं। डिजिटल युग में साहित्य

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

की अभिव्यक्ति के नए माध्यम भी विकसित हुए हैं। इंटरनेट, सोशल मीडिया, ब्लॉग और ई-पुस्तकों ने साहित्य के प्रसार और पाठकीयता के स्वरूप को बदल दिया है। इससे साहित्य अधिक व्यापक समाज तक पहुँचने लगा है और नई पीढ़ी के लेखकों को अपनी अभिव्यक्ति के लिए नए मंच प्राप्त हुए हैं।

समकालीन हिंदी साहित्य की अवधारणा :- समकालीन हिंदी साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है जो अपने समय की वास्तविक सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों को संवेदनात्मक और वैचारिक रूप में अभिव्यक्त करता है। 'समकालीन' शब्द का अर्थ है- वर्तमान समय से संबंधित। इसलिए समकालीन हिंदी साहित्य वह साहित्य है, जो वर्तमान युग की समस्याओं, संघर्षों, परिवर्तनों और मानवीय अनुभवों को प्रतिबिंबित करता है। साहित्य और समाज के संबंध पर विचार करते हुए प्रख्यात आलोचक नामवर सिंह का मत है कि " साहित्य अपने समय की चेतना का सृजनात्मक रूप होता है।"[1] इस कथन के अनुसार साहित्यकार अपने समय के सामाजिक अनुभवों, वैचारिक संघर्षों और सांस्कृतिक परिवर्तनों को अपनी रचनाओं के माध्यम से अभिव्यक्ति देता है। इसी कारण समकालीन हिंदी साहित्य को आधुनिक भारतीय समाज के जीवन का सांस्कृतिक दस्तावेज भी कहा जा सकता है। हिंदी साहित्य के इतिहास में सामान्यतः स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विशेषकर 1960 के दशक के बाद की साहित्यिक प्रवृत्तियों को समकालीन हिंदी साहित्य की श्रेणी में रखा जाता है। यह वह समय था जब भारतीय समाज तीव्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था। स्वतंत्रता के बाद लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना, औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, शिक्षा का विस्तार, सामाजिक आंदोलनों का प्रभाव तथा वैश्वीकरण और तकनीकी विकास ने समाज की संरचना को गहराई से प्रभावित किया। प्रसिद्ध साहित्य इतिहासकार रामचंद्र शुक्ल ने साहित्य और समाज के संबंध को स्पष्ट करते हुए कहा है कि "साहित्य समाज की चित्तवृत्तियों का संचित प्रतिबिंब होता है।"[2] यद्यपि उनका यह कथन पूर्ववर्ती साहित्यिक संदर्भ में दिया गया था, किंतु यह समकालीन साहित्य पर भी समान रूप से लागू होता है, क्योंकि आधुनिक साहित्य भी अपने समय की सामाजिक चेतना और मानसिकता को अभिव्यक्त करता है।

समकालीन हिंदी साहित्य में कथा, कविता, उपन्यास, नाटक, आलोचना, संस्मरण और आत्मकथा आदि सभी विधाओं में व्यापक परिवर्तन और प्रयोग दिखाई देते हैं। इस साहित्य की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें मानव जीवन की जटिलताओं, सामाजिक असमानताओं, सत्ता संरचना,

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

सांस्कृतिक संघर्षों तथा व्यक्ति की आंतरिक संवेदनाओं का गहन चित्रण मिलता है। प्रसिद्ध आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा का मानना है कि आधुनिक हिंदी साहित्य में सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनके अनुसार " साहित्य का उद्देश्य केवल सौंदर्यबोध उत्पन्न करना नहीं, बल्कि समाज की वास्तविकताओं को उजागर करना और सामाजिक चेतना को विकसित करना भी है।"[3] इसी दृष्टि से समकालीन हिंदी साहित्य में यथार्थवादी दृष्टिकोण प्रमुख रूप से दिखाई देता है। समकालीन हिंदी साहित्य के विकास में अनेक महत्वपूर्ण साहित्यकारों का योगदान रहा है। कथा साहित्य के क्षेत्र में कमलेश्वर, राजेंद्र यादव, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, मन्नू भंडारी, भीष्म साहनी और उदय प्रकाश जैसे लेखकों ने आधुनिक भारतीय समाज की जटिलताओं, मध्यवर्गीय जीवन, सामाजिक विसंगतियों और मानवीय संबंधों को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया। उदाहरण के लिए भीष्म साहनी के उपन्यास 'तमस' में विभाजन और साम्प्रदायिकता की त्रासदी का यथार्थवादी चित्रण मिलता है, जबकि निर्मल वर्मा की रचनाओं में आधुनिक मनुष्य की मानसिक संवेदनाओं और अस्तित्वगत प्रश्नों का गहन विश्लेषण दिखाई देता है।

कविता के क्षेत्र में धूमिल, रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण इत्यादि कवियों ने समकालीन जीवन की विडंबनाओं, राजनीतिक यथार्थ और सामाजिक चेतना को अपनी कविताओं में अभिव्यक्ति दी। धूमिल की कविताओं में व्यवस्था के प्रति तीखा प्रतिरोध और जनसाधारण की पीड़ा का सशक्त स्वर दिखाई देता है। समकालीन हिंदी साहित्य की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह भी है कि इसमें विमर्शात्मक साहित्य का विकास हुआ है। स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श और पर्यावरणीय विमर्श जैसे विषय साहित्य के केंद्र में आए हैं। स्त्री विमर्श के अंतर्गत मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा और अनामिका जैसी लेखिकाओं ने महिला जीवन की समस्याओं, लैंगिक असमानता और स्त्री स्वतंत्रता के प्रश्नों को उठाया है। इसी प्रकार दलित साहित्य के क्षेत्र में ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा 'जूठन' तथा तुलसीराम की आत्मकथा 'मुर्दहिया' सामाजिक भेदभाव और जातिगत उत्पीड़न की कठोर वास्तविकताओं को सामने लाती हैं। साहित्यकार शरणकुमार लिंबाले ने दलित साहित्य को सामाजिक न्याय और आत्मसम्मान के संघर्ष का साहित्य बताया है। समकालीन हिंदी साहित्य में वैश्वीकरण और तकनीकी परिवर्तन का प्रभाव भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। बाजारवाद, उपभोक्तावाद, प्रवासी जीवन, सांस्कृतिक संक्रमण और डिजिटल संस्कृति जैसे विषय आधुनिक साहित्य की नई चिंताओं के रूप में सामने आए हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

समकालीन हिंदी साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ :- समकालीन हिंदी साहित्य आधुनिक भारतीय समाज की बदलती सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का सृजनात्मक प्रतिबिंब है। यह साहित्य केवल सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि समाज की वास्तविकताओं, अंतर्विरोधों और मानवीय संघर्षों को भी गहराई से प्रस्तुत करता है। प्रसिद्ध आलोचक डॉ. नामवर सिंह के अनुसार " समकालीन साहित्य वह है जो अपने समय की चुनौतियों और प्रश्नों से सक्रिय संवाद करता है।" [4] इस दृष्टि से समकालीन हिंदी साहित्य आधुनिक भारतीय समाज की चेतना का महत्वपूर्ण दस्तावेज है। समकालीन हिंदी साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं -

1. **यथार्थवाद और सामाजिक चेतना :** समकालीन हिंदी साहित्य की सबसे प्रमुख विशेषता यथार्थवाद है। इस साहित्य में कल्पना या आदर्शवाद की अपेक्षा वास्तविक जीवन की समस्याओं, संघर्षों और परिस्थितियों को प्रमुखता दी गई है। साहित्यकारों ने समाज में व्याप्त गरीबी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, सामाजिक असमानता, राजनीतिक विसंगतियाँ, ग्रामीण संकट तथा शहरी जीवन की जटिलताओं को अपनी रचनाओं का केंद्र बनाया है। प्रख्यात आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा का मत है कि " साहित्य का वास्तविक उद्देश्य समाज के जीवन-संघर्षों और ऐतिहासिक यथार्थ को अभिव्यक्त करना है।" [5] इस दृष्टि से समकालीन हिंदी साहित्य में सामाजिक यथार्थ का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण मिलता है। उदाहरण के लिए भीष्म साहनी के उपन्यास ' तमस' में विभाजन की त्रासदी और साम्प्रदायिक हिंसा का यथार्थवादी चित्रण मिलता है। इसी प्रकार फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास 'मैला आँचल' में ग्रामीण समाज की समस्याओं, गरीबी और सामाजिक विषमताओं को अत्यंत सजीव रूप में प्रस्तुत किया गया है। कविता के क्षेत्र में धूमिल और रघुवीर सहाय जैसे कवियों ने समकालीन राजनीतिक व्यवस्था और सामाजिक असमानताओं की तीखी आलोचना की है। धूमिल की कविता 'मोचीराम' सामाजिक वर्ग विभाजन और सत्ता संरचना की विसंगतियों को उजागर करती है। इसके साथ ही समकालीन हिंदी साहित्य में सामाजिक चेतना का भी गहरा स्वर दिखाई देता है। साहित्यकार समाज में व्याप्त अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाते हैं। दलित साहित्य, स्त्री विमर्श और आदिवासी साहित्य इसी सामाजिक चेतना के परिणाम हैं। उदाहरण के लिए ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा 'जुठन' दलित जीवन की कठोर वास्तविकताओं और सामाजिक भेदभाव को उजागर करती है।

2. **व्यक्ति और समाज के संबंधों का विश्लेषण :** समकालीन हिंदी साहित्य में व्यक्ति और समाज के संबंधों का गहन विश्लेषण मिलता है। आधुनिक समाज में व्यक्ति अनेक प्रकार के सामाजिक, आर्थिक

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

और मानसिक दबावों से गुजरता है। परिवार, सामाजिक संरचना, राजनीतिक परिस्थितियाँ और सांस्कृतिक परिवर्तन व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करते हैं। प्रख्यात साहित्यकार अज्ञेय ने आधुनिक साहित्य में व्यक्ति की स्वतंत्रता और आत्मचेतना को महत्वपूर्ण माना है। उनके अनुसार "आधुनिक साहित्य का केंद्र व्यक्ति की चेतना और उसका अस्तित्वगत अनुभव है।"[6] नई कहानी आंदोलन के लेखकों में मोहन राकेश, राजेंद्र यादव और कमलेश्वर ने व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक स्थितियों और सामाजिक परिस्थितियों के बीच संबंध को अत्यंत गहराई से प्रस्तुत किया। निर्मल वर्मा की कहानियों और उपन्यासों में आधुनिक मनुष्य के अकेलेपन, असुरक्षा और अस्तित्वगत संकट का सूक्ष्म विश्लेषण मिलता है। इस प्रकार समकालीन हिंदी साहित्य में व्यक्ति केवल समाज का हिस्सा नहीं बल्कि एक स्वतंत्र और संवेदनशील चेतना के रूप में भी सामने आता है।

3. **लोकतांत्रिक मूल्यों की अभिव्यक्ति :** स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना हुई, जिसका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा । समकालीन हिंदी साहित्य में समानता, स्वतंत्रता, न्याय और मानवाधिकार जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों की स्पष्ट अभिव्यक्ति दिखाई देती है। आलोचक नामवर सिंह के अनुसार आधुनिक हिंदी साहित्य में लोकतांत्रिक चेतना का विकास समाज में हो रहे सामाजिक आंदोलनों और राजनीतिक परिवर्तनों से गहराई से जुड़ा हुआ है। उदाहरण के लिए दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों में लोकतांत्रिक व्यवस्था की विसंगतियों और आम आदमी की कांक्षाओं को अभिव्यक्ति मिली है - " कहाँ तो तय था चरागाँ हर एक घर के लिए , कहाँ चराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।" [7] इसी प्रकार रघुवीर सहाय की कविताएँ सत्ता और प्रशासन की विसंगतियों पर तीखा व्यंग्य करती हैं और लोकतांत्रिक चेतना को मजबूत करती हैं। समकालीन साहित्य में किसान, मजदूर, दलित, स्त्री और अन्य वंचित वर्गों की समस्याओं को प्रमुख स्थान मिला है। इस प्रकार साहित्य लोकतांत्रिक मूल्यों को सुदृढ़ करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम बन गया है।

4. **हाशिए के वर्गों की समस्याओं का चित्रण :** समकालीन हिंदी साहित्य की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें उन वर्गों की आवाज़ को स्थान मिला जो लंबे समय तक मुख्यधारा के साहित्य से बाहर रहे। प्रसिद्ध आलोचक शरणकुमार लिंबाले के अनुसार " दलित साहित्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और आत्मसम्मान के संघर्ष का साहित्य है।"[8] दलित साहित्य के क्षेत्र में ओमप्रकाश वाल्मीकि, तुलसीराम, मोहनदास नैमिशराय और शरणकुमार लिंबाले जैसे

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

लेखकों ने जातिगत भेदभाव और सामाजिक अन्याय के विरुद्ध सशक्त आवाज़ उठाई। उदाहरण के लिए तुलसीराम की आत्मकथा 'मुर्दहिया' तथा ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'जूठन' दलित जीवन की कठोर वास्तविकताओं का प्रभावशाली चित्रण करती हैं। इसी प्रकार स्त्री विमर्श के अंतर्गत कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग और मैत्रेयी पुष्पा जैसी लेखिकाओं ने महिलाओं की स्वतंत्रता, अधिकार और सामाजिक स्थिति के प्रश्नों को उठाया। आदिवासी साहित्य में महाश्वेता देवी की रचनाएँ आदिवासी समुदाय के जीवन और संघर्षों को उजागर करती हैं। इस प्रकार समकालीन हिंदी साहित्य अधिक समावेशी और बहुलतावादी बन गया है।

5. **वैश्वीकरण और तकनीकी परिवर्तन का प्रभाव :** वैश्वीकरण और सूचना प्रौद्योगिकी के विकास ने आधुनिक समाज को गहराई से प्रभावित किया है। इसका प्रभाव साहित्य पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। प्रसिद्ध आलोचक डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में बाजारवाद, उपभोक्तावाद और सांस्कृतिक परिवर्तन जैसे नए विषय उभरकर सामने आए हैं। समकालीन हिंदी साहित्य में उदय प्रकाश की कहानियाँ वैश्वीकरण और बाजारवाद के प्रभाव से बदलते समाज का चित्रण करती हैं। उनकी कहानी 'पीली छतरी वाली लड़की' में आधुनिक शहरी जीवन की विसंगतियाँ और सामाजिक असमानताएँ दिखाई देती हैं। इसके साथ ही इंटरनेट और डिजिटल तकनीक ने साहित्य के स्वरूप और प्रसार को भी प्रभावित किया है। आज ब्लॉग, सोशल मीडिया, ई - पुस्तकें और ऑनलाइन पत्रिकाएँ साहित्य के नए मंच बन गए हैं। इससे साहित्य का पाठक वर्ग व्यापक हुआ है और नई पीढ़ी के लेखकों को अभिव्यक्ति के नए अवसर प्राप्त हुए हैं।

उदयीमान भारत की अवधारणा :- समकालीन वैश्विक परिदृश्य में भारत को एक 'उदीयमान राष्ट्र' के रूप में देखा जा रहा है। 'उदीयमान भारत' की अवधारणा केवल आर्थिक विकास या औद्योगिक प्रगति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और तकनीकी परिवर्तन की प्रक्रिया को भी अभिव्यक्त करती है। वर्तमान समय में भारत विश्व की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में से एक बनता जा रहा है और वैश्विक मंच पर उसकी भूमिका लगातार सशक्त हो रही है। इस संदर्भ में उदीयमान भारत का अर्थ उस राष्ट्र से है जो तीव्र आर्थिक विकास, लोकतांत्रिक संस्थाओं की मजबूती, वैज्ञानिक और तकनीकी नवाचार, ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक परिवर्तन के माध्यम से विश्व व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर रहा है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

1. **वैश्विक संदर्भ में उदीयमान भारत :** वैश्वीकरण के युग में राष्ट्रों की प्रगति का मूल्यांकन केवल आर्थिक विकास के आधार पर नहीं किया जाता, बल्कि उसमें राजनीतिक स्थिरता, सामाजिक विकास, तकनीकी प्रगति और सांस्कृतिक प्रभाव भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत को आज विश्व की सबसे तेजी से विकसित होती अर्थव्यवस्थाओं में से एक माना जा रहा है। अर्थशास्त्रियों और वैश्विक संस्थाओं के अनुसार 21वीं शताब्दी में भारत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होगी। जनसंख्या, मानव संसाधन, तकनीकी क्षमता और लोकतांत्रिक व्यवस्था के कारण भारत वैश्विक अर्थव्यवस्था और राजनीति में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर रहा है। वैश्वीकरण के प्रभाव से भारत की अर्थव्यवस्था अंतरराष्ट्रीय बाजार से जुड़ी और व्यापार, निवेश तथा तकनीकी सहयोग के नए अवसर उत्पन्न हुए। इसके परिणामस्वरूप भारत की आर्थिक संरचना, सामाजिक जीवन और सांस्कृतिक चेतना में व्यापक परिवर्तन देखने को मिलते हैं।

2. **आर्थिक उदारीकरण और आर्थिक विकास :** उदीयमान भारत की अवधारणा को समझने के लिए 1991 की आर्थिक उदारीकरण नीति को एक महत्वपूर्ण मोड़ माना जाता है। भारत सरकार द्वारा अपनाई गई इस नीति के अंतर्गत उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण को प्रोत्साहन दिया गया। इस आर्थिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप भारत में औद्योगिक विकास, विदेशी निवेश, निजी क्षेत्र की भागीदारी और सेवा क्षेत्र का विस्तार हुआ। सूचना प्रौद्योगिकी, दूरसंचार, बैंकिंग, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति हुई। आर्थिक उदारीकरण ने भारतीय समाज में एक नए मध्यवर्ग का निर्माण किया और उपभोक्तावादी संस्कृति को भी बढ़ावा दिया। इस परिवर्तन ने भारतीय समाज की मानसिकता, जीवन शैली और सामाजिक संबंधों को गहराई से प्रभावित किया। इन परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। समकालीन हिंदी साहित्य में बाजारवाद, उपभोक्तावाद, आर्थिक असमानता और शहरी जीवन की जटिलताओं जैसे विषय प्रमुखता से सामने आए हैं।

3. **ज्ञान अर्थव्यवस्था और तकनीकी प्रगति :** 21वीं शताब्दी को ज्ञान और सूचना का युग कहा जाता है। आज के समय में किसी भी राष्ट्र की प्रगति उसके ज्ञान संसाधनों, तकनीकी नवाचार और मानव पूंजी पर निर्भर करती है। भारत ने सूचना प्रौद्योगिकी, विज्ञान और अनुसंधान के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। भारत की युवा जनसंख्या, उच्च शिक्षा संस्थान और तकनीकी क्षमता ने देश को ज्ञान अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान दिलाया है। सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग, सॉफ्टवेयर विकास, डिजिटल सेवाएँ और नवाचार आधारित उद्योगों ने भारत की वैश्विक पहचान को मजबूत किया है। इसके

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

साथ ही डिजिटल तकनीक ने शिक्षा, संचार और ज्ञान के प्रसार को भी नई दिशा प्रदान की है। इंटरनेट और डिजिटल माध्यमों ने ज्ञान के लोकतंत्रीकरण को संभव बनाया है, जिससे समाज के विभिन्न वर्गों को शिक्षा और सूचना तक पहुँच प्राप्त हुई है।

4. **डिजिटल इंडिया और नवाचार की संस्कृति :** भारत में तकनीकी विकास को प्रोत्साहित करने के लिए अनेक सरकारी पहलें भी की गई हैं। 'डिजिटल इंडिया' कार्यक्रम का उद्देश्य देश को डिजिटल रूप से सशक्त बनाना और सरकारी सेवाओं को अधिक पारदर्शी तथा सुलभ बनाना है। इसके अतिरिक्त 'मेक इन इंडिया' और 'स्टार्टअप इंडिया' जैसी योजनाओं ने औद्योगिक विकास और नवाचार की संस्कृति को बढ़ावा दिया है। इन पहलों के माध्यम से भारत में उद्यमिता, नवाचार और तकनीकी विकास को प्रोत्साहन मिला है। स्टार्टअप संस्कृति के विकास ने युवाओं को नए अवसर प्रदान किए हैं और भारत को नवाचार आधारित अर्थव्यवस्था की दिशा में आगे बढ़ाया है। इससे भारतीय समाज में आत्मनिर्भरता, रचनात्मकता और उद्यमिता की भावना का विकास हुआ है।

5. **उदीयमान भारत और साहित्यिक चेतना:** उदीयमान भारत के इन सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। साहित्य समाज की चेतना और अनुभवों का प्रतिबिंब होता है, इसलिए समाज में होने वाले परिवर्तन साहित्य में भी अभिव्यक्त होते हैं। समकालीन हिंदी साहित्य में वैश्वीकरण, बाजारवाद, उपभोक्तावाद, तकनीकी परिवर्तन और डिजिटल संस्कृति जैसे विषय प्रमुख रूप से उभरकर सामने आए हैं। साहित्यकारों ने बदलते समाज की जटिलताओं, नई आकांक्षाओं और मानवीय संघर्षों को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है। उदाहरण के लिए उदय प्रकाश की कहानियों में वैश्वीकरण और बाजारवादी व्यवस्था के प्रभाव से बदलते समाज का चित्रण मिलता है। इसी प्रकार समकालीन कवियों और कथाकारों ने आधुनिक जीवन की जटिलताओं, शहरीकरण, सामाजिक असमानता और तकनीकी परिवर्तन से उत्पन्न नई परिस्थितियों को अपने साहित्य में स्थान दिया है। डिजिटल युग में साहित्य की अभिव्यक्ति के नए माध्यम भी विकसित हुए हैं। ब्लॉग, सोशल मीडिया, ऑनलाइन पत्रिकाएँ और ई-पुस्तकें साहित्य के प्रसार के नए साधन बन गए हैं। इससे साहित्य अधिक व्यापक समाज तक पहुँचने लगा है और नई पीढ़ी के लेखकों को अपनी रचनात्मकता व्यक्त करने के लिए नए मंच प्राप्त हुए हैं।

इस प्रकार 'उदीयमान भारत' की अवधारणा एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसमें आर्थिक विकास, तकनीकी नवाचार, लोकतांत्रिक संस्थाओं की मजबूती, सामाजिक परिवर्तन और सांस्कृतिक पुनर्जागरण जैसे अनेक आयाम शामिल हैं। भारत की वैश्विक भूमिका में निरंतर वृद्धि हो रही है और यह

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

परिवर्तन भारतीय समाज की मानसिकता, जीवन शैली और सांस्कृतिक चेतना को भी प्रभावित कर रहा है। समकालीन हिंदी साहित्य इन परिवर्तनों को संवेदनात्मक और वैचारिक रूप में अभिव्यक्त करता है। इसलिए उदीयमान भारत की अवधारणा को समझने के लिए समकालीन हिंदी साहित्य का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि साहित्य केवल समाज का प्रतिबिंब ही नहीं होता, बल्कि वह समाज की दिशा और भविष्य की संभावनाओं को भी रेखांकित करता है।

समकालीन हिंदी साहित्य में राजनीतिक चेतना :- समकालीन हिंदी साहित्य में **राजनीतिक चेतना** एक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली तत्व के रूप में उपस्थित है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना हुई, जिसके साथ ही सामाजिक, राजनीतिक और प्रशासनिक संरचना में व्यापक परिवर्तन हुए। इन परिवर्तनों ने साहित्यकारों की दृष्टि को भी प्रभावित किया और उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से राजनीति, सत्ता संरचना और सामाजिक व्यवस्था से जुड़े प्रश्नों को गंभीरता से उठाया। प्रसिद्ध आलोचक **नामवर सिंह** का मत है कि " समकालीन साहित्य अपने समय की राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों से गहरे रूप में जुड़ा होता है।"[9] इस दृष्टि से समकालीन हिंदी साहित्य में राजनीतिक चेतना केवल सत्ता की आलोचना तक सीमित नहीं है, बल्कि यह लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और जनसामान्य की आकांक्षाओं को भी अभिव्यक्त करती है।

1. लोकतंत्र और सत्ता संरचना : स्वतंत्रता के बाद भारत में लोकतंत्र की स्थापना ने नागरिकों को समान अधिकार, स्वतंत्रता और राजनीतिक भागीदारी का अवसर प्रदान किया। किंतु लोकतांत्रिक व्यवस्था के साथ-साथ सत्ता संरचना में अनेक प्रकार की विसंगतियाँ और विरोधाभास भी सामने आए। समकालीन हिंदी साहित्य में इन विरोधाभासों का गहन चित्रण मिलता है। कविता और कथा साहित्य में लोकतंत्र की आदर्श अवधारणा और वास्तविकता के बीच के अंतर को उजागर किया गया है। अनेक साहित्यकारों ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि लोकतंत्र केवल एक राजनीतिक व्यवस्था नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय गरिमा से भी जुड़ा हुआ है। उदाहरण के लिए **रघुवीर सहाय** की कविताओं में सत्ता और समाज के संबंधों का तीखा विश्लेषण मिलता है। उनकी रचनाएँ यह प्रश्न उठाती हैं कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में आम नागरिक की वास्तविक स्थिति क्या है और सत्ता संरचना किस प्रकार जनसाधारण से दूर होती जा रही है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

2. राजनीतिक भ्रष्टाचार और व्यवस्था की आलोचना : समकालीन हिंदी साहित्य में राजनीतिक भ्रष्टाचार, सत्ता के दुरुपयोग और प्रशासनिक अव्यवस्था की तीखी आलोचना भी दिखाई देती है। स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज में लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्थापना के बावजूद भ्रष्टाचार, अवसरवाद और राजनीतिक स्वार्थ जैसी समस्याएँ उभरकर सामने आईं। कवि **धूमिल** की कविताएँ इस संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उनकी कविताओं में राजनीतिक व्यवस्था के प्रति तीखा प्रतिरोध और जनसाधारण की पीड़ा का सशक्त स्वर दिखाई देता है। धूमिल की प्रसिद्ध कविता 'मोचीराम' में सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था की विडंबनाओं का गहरा चित्रण मिलता है। इसी प्रकार **सर्वेश्वर दयाल सक्सेना** की कविताओं और व्यंग्यात्मक लेखन में भी सत्ता और व्यवस्था की आलोचना दिखाई देती है। उनके साहित्य में राजनीतिक पाखंड और सामाजिक असमानता के विरुद्ध तीखा व्यंग्य मिलता है।

3. जन आंदोलनों का प्रभाव : समकालीन हिंदी साहित्य पर विभिन्न सामाजिक और राजनीतिक आंदोलनों का भी गहरा प्रभाव पड़ा है। स्वतंत्रता के बाद भारत में अनेक जन आंदोलनों ने समाज और राजनीति को प्रभावित किया। सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक अधिकार, भ्रष्टाचार विरोध और मानवाधिकार जैसे मुद्दों ने साहित्यकारों की चेतना को भी प्रभावित किया। इन आंदोलनों के प्रभाव से साहित्य में जनसामान्य की आकांक्षाओं और संघर्षों को अभिव्यक्ति मिली। साहित्यकारों ने अपने लेखन के माध्यम से समाज में व्याप्त अन्याय, शोषण और असमानता के विरुद्ध आवाज़ उठाई। कवि **दुष्यंत कुमार** की ग़ज़लों में इस जनचेतना का अत्यंत प्रभावशाली स्वर मिलता है। उनकी प्रसिद्ध पंक्तियाँ –" कहाँ तो तय था चरागाँ हर एक घर के लिए ,कहाँ चराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।" [10] लोकतांत्रिक व्यवस्था की विडंबनाओं और आम जनता की निराशा को अत्यंत मार्मिक ढंग से व्यक्त करती हैं। दुष्यंत कुमार की ग़ज़लें समकालीन हिंदी साहित्य में राजनीतिक चेतना का सशक्त उदाहरण मानी जाती हैं।

4. व्यवस्था के प्रति साहित्य का प्रतिरोध : समकालीन हिंदी साहित्य की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह भी है कि इसमें सत्ता और व्यवस्था के प्रति प्रतिरोध का स्वर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। साहित्यकारों ने अन्यायपूर्ण व्यवस्था, सामाजिक असमानता और राजनीतिक पाखंड के विरुद्ध अपने लेखन के माध्यम से आवाज़ उठाई है। यह प्रतिरोध केवल राजनीतिक आलोचना तक सीमित नहीं है,

बल्कि यह एक व्यापक सामाजिक चेतना का प्रतीक भी है। साहित्यकारों ने अपने लेखन के माध्यम से यह दिखाने का प्रयास किया है कि साहित्य समाज में परिवर्तन और जागरूकता का महत्वपूर्ण माध्यम बन सकता है। धूमिल, रघुवीर सहाय, दुष्यंत कुमार और सर्वेश्वर दयाल सक्सेना जैसे कवियों ने अपने साहित्य के माध्यम से सत्ता संरचना, लोकतांत्रिक व्यवस्था और सामाजिक असमानताओं की आलोचना करते हुए जनसाधारण की आवाज़ को अभिव्यक्ति दी है। उनकी रचनाएँ यह संकेत करती हैं कि साहित्य केवल सौंदर्यबोध का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक चेतना को जागृत करने का भी एक प्रभावी साधन है।

समकालीन हिंदी साहित्य और सामाजिक परिवर्तन :- समकालीन हिंदी साहित्य आधुनिक भारतीय समाज में हो रहे सामाजिक परिवर्तनों का सशक्त प्रतिबिंब है। साहित्य केवल समाज का दर्पण ही नहीं होता, बल्कि वह सामाजिक चेतना को जागृत करने और परिवर्तन की दिशा निर्धारित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय समाज में लोकतंत्र, शिक्षा के प्रसार, सामाजिक आंदोलनों और मानवाधिकारों की चेतना के कारण अनेक सामाजिक परिवर्तन हुए। इन परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। समकालीन हिंदी साहित्य में विशेष रूप से **स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, लैंगिक समानता और सामाजिक न्याय** जैसे विषय प्रमुख रूप से उभरकर सामने आए हैं। इन विमर्शों ने साहित्य को अधिक लोकतांत्रिक, समावेशी और बहुआयामी बनाया है।

1. स्त्री विमर्श और लैंगिक समानता : समकालीन हिंदी साहित्य में **स्त्री विमर्श** एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति के रूप में विकसित हुआ है। यह विमर्श महिलाओं की सामाजिक स्थिति, लैंगिक असमानता, पितृसत्तात्मक व्यवस्था और स्त्री स्वतंत्रता से जुड़े प्रश्नों को केंद्र में रखता है। भारतीय समाज में लंबे समय तक महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक अवसरों से वंचित रखा गया। समकालीन साहित्यकारों ने इन समस्याओं को अपनी रचनाओं में उठाते हुए स्त्री अधिकारों और लैंगिक समानता की आवश्यकता को रेखांकित किया। प्रसिद्ध लेखिका **मन्नू भंडारी** के उपन्यास 'आपका बंटी' में परिवार और समाज में स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिलताओं तथा आधुनिक जीवन की समस्याओं का चित्रण मिलता है। इसी प्रकार **कृष्णा सोबती** की रचनाएँ स्त्री चेतना और स्वतंत्र व्यक्तित्व को अभिव्यक्ति देती हैं। उनकी प्रसिद्ध कृति 'मित्रो मरजानी' में स्त्री की स्वतंत्र सोच और सामाजिक बंधनों

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

के विरुद्ध उसका प्रतिरोध दिखाई देता है। इसी क्रम में **मैत्रेयी पुष्पा** ने ग्रामीण समाज में स्त्री जीवन की समस्याओं और संघर्षों को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। उनकी रचनाएँ स्त्री अस्मिता और आत्मसम्मान के प्रश्नों को प्रमुखता से उठाती हैं। स्त्री विमर्श के माध्यम से समकालीन हिंदी साहित्य ने लैंगिक समानता, स्त्री स्वतंत्रता और मानवाधिकार जैसे महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों को साहित्य के केंद्र में स्थापित किया है।

2. दलित विमर्श और सामाजिक न्याय : समकालीन हिंदी साहित्य में **दलित विमर्श** सामाजिक परिवर्तन की एक महत्वपूर्ण धारा के रूप में उभरा है। दलित साहित्य का उद्देश्य समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव, सामाजिक अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाना है। प्रसिद्ध आलोचक **शरणकुमार लिंबाले** के अनुसार "दलित साहित्य सामाजिक न्याय और आत्मसम्मान के संघर्ष का साहित्य है।" इस दृष्टि से दलित साहित्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण माध्यम भी है। दलित साहित्य के क्षेत्र में **ओमप्रकाश वाल्मीकि, तुलसीराम और मोहनदास नैमिशराय** जैसे लेखकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। **ओमप्रकाश वाल्मीकि** की आत्मकथा 'जूठन' में दलित जीवन की पीड़ा, सामाजिक भेदभाव और संघर्ष का अत्यंत मार्मिक चित्रण मिलता है। इसी प्रकार **तुलसीराम** की आत्मकथा 'मुर्दहिया' दलित जीवन के कठोर यथार्थ को उजागर करती है। इसमें लेखक ने अपने बचपन के अनुभवों के माध्यम से ग्रामीण समाज में व्याप्त जातिगत असमानता और सामाजिक उपेक्षा को सामने रखा है। **मोहनदास नैमिशराय** की रचनाएँ भी दलित समाज के संघर्षों और सामाजिक न्याय की आकांक्षाओं को अभिव्यक्ति देती हैं। दलित विमर्श ने हिंदी साहित्य को नई दृष्टि प्रदान की है और सामाजिक समानता तथा मानवाधिकार की चेतना को मजबूत किया है।

3. आदिवासी विमर्श और सांस्कृतिक पहचान : समकालीन हिंदी साहित्य में **आदिवासी विमर्श** भी सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण आयाम बनकर उभरा है। आदिवासी समाज लंबे समय तक मुख्यधारा के साहित्य और सामाजिक विमर्श से उपेक्षित रहा। समकालीन साहित्यकारों ने आदिवासी समुदाय की संस्कृति, जीवन शैली, संघर्ष और पहचान के प्रश्नों को अपने साहित्य में स्थान दिया है। आदिवासी साहित्य में आदिवासी समुदाय के सामाजिक शोषण, विस्थापन, प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार और सांस्कृतिक पहचान जैसे मुद्दों को प्रमुखता से उठाया गया है। प्रसिद्ध लेखिका **महाश्वेता देवी** की रचनाओं में आदिवासी जीवन और उनके संघर्षों का अत्यंत सशक्त चित्रण मिलता है। उनकी कहानियाँ और उपन्यास आदिवासी समाज की समस्याओं, शोषण और प्रतिरोध को सामने लाते हैं। आदिवासी विमर्श ने समकालीन हिंदी साहित्य को एक नई संवेदनशीलता प्रदान की है और यह दिखाया है कि साहित्य समाज के उन वर्गों की आवाज़ भी बन सकता है जिन्हें लंबे समय तक उपेक्षित रखा गया था।

समकालीन हिंदी साहित्य और आर्थिक परिवर्तन :-

समकालीन हिंदी साहित्य में आर्थिक परिवर्तन का प्रभाव अत्यंत स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। विशेषतः 20वीं शताब्दी के अंतिम दशक के बाद भारत में आर्थिक उदारीकरण, वैश्वीकरण और बाजार आधारित अर्थव्यवस्था के विकास ने भारतीय समाज की आर्थिक संरचना, जीवन शैली और सामाजिक संबंधों को गहराई से प्रभावित किया। इन परिवर्तनों ने साहित्यकारों की संवेदनशील दृष्टि को भी प्रभावित किया और उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से बदलती आर्थिक परिस्थितियों, सामाजिक असमानताओं और मानवीय संघर्षों को अभिव्यक्ति दी। प्रख्यात आलोचक **डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी** के अनुसार आधुनिक हिंदी साहित्य में आर्थिक परिवर्तन के प्रभाव से समाज में उत्पन्न नई समस्याएँ और चुनौतियाँ साहित्य के प्रमुख विषय बन गई हैं। इस दृष्टि से समकालीन हिंदी साहित्य आर्थिक उदारीकरण, बाजारवाद, उपभोक्तावाद, मध्यवर्ग के विस्तार और ग्रामीण-शहरी असमानता जैसे विषयों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

1. आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण : भारत में **1991 की आर्थिक उदारीकरण नीति** ने देश की आर्थिक संरचना को नई दिशा प्रदान की। इस नीति के अंतर्गत उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण को प्रोत्साहन दिया गया, जिससे विदेशी निवेश, औद्योगिक विकास और सेवा क्षेत्र का विस्तार हुआ। इस आर्थिक परिवर्तन ने भारतीय समाज में नई आकांक्षाओं और अवसरों को जन्म दिया, लेकिन इसके साथ ही सामाजिक और आर्थिक असमानताएँ भी बढ़ीं। समकालीन हिंदी साहित्यकारों ने इन परिवर्तनों को अपनी रचनाओं में गंभीरता से चित्रित किया है। प्रसिद्ध कथाकार **उदय प्रकाश** की कहानियों में वैश्वीकरण और बाजारवादी व्यवस्था के प्रभाव से बदलते समाज का सशक्त चित्रण मिलता है। उनकी कहानी ' पीली छतरी वाली लड़की' में आधुनिक शहरी जीवन, सामाजिक असमानता और बाजारवादी संस्कृति के प्रभाव को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

2. बाजारवाद और उपभोक्तावाद : आर्थिक उदारीकरण के बाद भारतीय समाज में **बाजारवाद और उपभोक्तावाद** का प्रभाव तेजी से बढ़ा है। आधुनिक जीवन में वस्तुओं और उपभोग की संस्कृति ने सामाजिक संबंधों और मानवीय मूल्यों को भी प्रभावित किया है। समकालीन हिंदी साहित्य में बाजारवादी संस्कृति के प्रभाव से उत्पन्न सामाजिक समस्याओं और मानवीय संवेदनाओं के क्षरण का चित्रण मिलता है। साहित्यकारों ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण समाज में प्रतिस्पर्धा, असमानता और मानवीय संबंधों में दूरी बढ़ती जा रही है। कथाकार **ज्ञानरंजन** की रचनाओं में मध्यवर्गीय जीवन की जटिलताओं और सामाजिक बदलावों का सूक्ष्म चित्रण मिलता है। उनकी कहानियाँ आधुनिक समाज में आर्थिक आकांक्षाओं और मानवीय मूल्यों के बीच उत्पन्न संघर्ष को उजागर करती हैं।

3. मध्यवर्ग का विस्तार और सामाजिक परिवर्तन : आर्थिक उदारीकरण के बाद भारतीय समाज में **मध्यवर्ग का तेजी से विस्तार** हुआ है। शिक्षा, रोजगार और तकनीकी विकास के कारण मध्यवर्ग की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ और उसकी सामाजिक भूमिका भी महत्वपूर्ण हो गई। मध्यवर्गीय जीवन की आकांक्षाएँ, संघर्ष और सामाजिक दबाव समकालीन हिंदी साहित्य के प्रमुख विषय बन गए हैं। साहित्यकारों ने मध्यवर्गीय समाज की मानसिकता, आर्थिक आकांक्षाओं और सामाजिक संघर्षों को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्ति दी है। कथाकार **संजीव** की रचनाओं में ग्रामीण और शहरी समाज के बीच उत्पन्न आर्थिक और सामाजिक असमानताओं का चित्रण मिलता है। उनकी कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि आर्थिक विकास के बावजूद समाज के विभिन्न वर्गों के बीच असमानता बनी हुई है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

4. ग्रामीण-शहरी अंतर और आर्थिक असमानता : समकालीन हिंदी साहित्य में **ग्रामीण और शहरी जीवन के बीच बढ़ते अंतर** का भी गहन चित्रण मिलता है। आर्थिक विकास और औद्योगिकीकरण के कारण शहरों का तेजी से विकास हुआ, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक समस्याएँ बनी रहीं। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी, कृषि संकट और आर्थिक असुरक्षा जैसी समस्याएँ आज भी मौजूद हैं। इसके विपरीत शहरी क्षेत्रों में आधुनिक जीवन शैली, उपभोक्तावादी संस्कृति और तकनीकी विकास दिखाई देता है। साहित्यकारों ने इन दोनों संसारों के बीच उत्पन्न सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को अपनी रचनाओं में प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। इस प्रकार समकालीन हिंदी साहित्य आर्थिक परिवर्तन के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पक्षों को सामने लाता है।

समकालीन हिंदी साहित्य और प्रशासनिक व्यवस्था :- समकालीन हिंदी साहित्य में प्रशासनिक व्यवस्था का चित्रण भी एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में सामने आया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की स्थापना हुई, जिसके साथ प्रशासनिक तंत्र का भी विस्तार हुआ। प्रशासन का उद्देश्य समाज में न्याय, समानता और विकास को सुनिश्चित करना है, किंतु व्यवहारिक स्तर पर अनेक समस्याएँ जैसे **नौकरशाही, भ्रष्टाचार, लालफीताशाही और न्यायिक जटिलताएँ** सामने आती रही हैं। समकालीन हिंदी साहित्यकारों ने इन समस्याओं को अपने साहित्य में अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। साहित्य में प्रशासनिक व्यवस्था का चित्रण केवल यथार्थ को सामने लाने के लिए ही नहीं, बल्कि व्यवस्था की विसंगतियों की आलोचना और सुधार की आवश्यकता को रेखांकित करने के लिए भी किया गया है।

1. नौकरशाही और लालफीताशाही : भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था में नौकरशाही एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, किंतु कई बार यह व्यवस्था अत्यधिक जटिल और धीमी भी हो जाती है। फाइलों की प्रक्रिया, नियमों की कठोरता और निर्णय लेने में देरी जैसी समस्याएँ आम नागरिक के लिए कठिनाइयाँ उत्पन्न करती हैं। समकालीन हिंदी साहित्य में नौकरशाही की इन समस्याओं का तीखा और व्यंग्यात्मक चित्रण मिलता है। प्रसिद्ध व्यंग्यकार **हरिशंकर परसाई** ने अपने व्यंग्य लेखों में प्रशासनिक व्यवस्था की विसंगतियों और नौकरशाही की मानसिकता का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण किया है। उनके व्यंग्य समाज और प्रशासन के बीच के अंतर्विरोधों को उजागर करते हैं और पाठकों को व्यवस्था की वास्तविकता से परिचित कराते हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

2. भ्रष्टाचार और सत्ता का दुरुपयोग : समकालीन हिंदी साहित्य में प्रशासनिक भ्रष्टाचार और सत्ता के दुरुपयोग की समस्या भी एक महत्वपूर्ण विषय रही है। भ्रष्टाचार के कारण प्रशासनिक व्यवस्था की विश्वसनीयता प्रभावित होती है और समाज में असमानता तथा अन्याय की स्थिति उत्पन्न होती है। व्यंग्यकार **शरद जोशी** ने अपने लेखन में राजनीतिक और प्रशासनिक भ्रष्टाचार पर तीखा व्यंग्य किया है। उनकी रचनाएँ समाज और शासन व्यवस्था की विसंगतियों को उजागर करती हैं और पाठकों को व्यवस्था के प्रति जागरूक बनाती हैं।

3. शासन व्यवस्था और ग्रामीण प्रशासन : समकालीन हिंदी साहित्य में शासन व्यवस्था के विभिन्न स्तरों का चित्रण भी मिलता है। विशेष रूप से ग्रामीण प्रशासन, पंचायत व्यवस्था और स्थानीय राजनीति से जुड़े अनेक प्रश्न साहित्य में सामने आए हैं। प्रसिद्ध उपन्यासकार **श्रीलाल शुक्ल** का उपन्यास 'राग दरबारी' इस संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण कृति है। इस उपन्यास में ग्रामीण समाज, प्रशासनिक तंत्र और स्थानीय राजनीति की विडंबनाओं का अत्यंत यथार्थवादी और व्यंग्यात्मक चित्रण किया गया है। राग दरबारी में यह दिखाया गया है कि किस प्रकार प्रशासनिक और राजनीतिक व्यवस्था कई बार समाज के वास्तविक विकास के बजाय स्वार्थ और सत्ता संघर्ष का माध्यम बन जाती है।

4. न्याय व्यवस्था और सामाजिक न्याय : समकालीन हिंदी साहित्य में न्याय व्यवस्था से जुड़े प्रश्नों को भी महत्वपूर्ण स्थान मिला है। न्यायिक प्रक्रियाओं की जटिलता, न्याय प्राप्त करने में होने वाली देरी और सामाजिक असमानता के कारण उत्पन्न समस्याएँ साहित्यकारों की चिंता का विषय रही हैं। साहित्यकारों ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि न्याय व्यवस्था केवल कानूनी प्रक्रिया तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका संबंध सामाजिक न्याय और मानवीय गरिमा से भी है। इसलिए साहित्य में न्याय व्यवस्था की आलोचना केवल व्यवस्था के विरोध के रूप में नहीं, बल्कि समाज में न्याय और समानता की स्थापना की आकांक्षा के रूप में भी दिखाई देती है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

समकालीन हिंदी साहित्य और डिजिटल युग :- 21वीं शताब्दी में सूचना प्रौद्योगिकी और इंटरनेट के विकास ने मानव जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को गहराई से प्रभावित किया है। इसका प्रभाव साहित्य और साहित्यिक अभिव्यक्ति पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। डिजिटल तकनीक के विकास ने साहित्य के सृजन, प्रकाशन और प्रसार के स्वरूप को बदल दिया है। परिणामस्वरूप समकालीन हिंदी साहित्य में एक नई प्रवृत्ति के रूप में **डिजिटल साहित्य** या **साइबर साहित्य** का विकास हुआ है। डिजिटल युग में साहित्य केवल मुद्रित पुस्तकों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि इंटरनेट, ब्लॉग, सोशल मीडिया, ई-पुस्तकों और ऑनलाइन पत्रिकाओं के माध्यम से व्यापक रूप से प्रसारित होने लगा है। इससे साहित्य के पाठक वर्ग का विस्तार हुआ है और नए लेखकों को अपनी रचनात्मक अभिव्यक्ति के लिए नए मंच प्राप्त हुए हैं। प्रसिद्ध आलोचक **डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी** के अनुसार आधुनिक समय में तकनीकी विकास ने साहित्य के स्वरूप और पाठकीयता दोनों को प्रभावित किया है। डिजिटल माध्यमों ने साहित्य को अधिक लोकतांत्रिक और सुलभ बनाया है, जिससे समाज के विभिन्न वर्गों तक साहित्य की पहुँच संभव हुई है।

1. ब्लॉग साहित्य और नई अभिव्यक्ति : डिजिटल युग में **ब्लॉग साहित्य** एक महत्वपूर्ण साहित्यिक माध्यम के रूप में उभरा है। ब्लॉग के माध्यम से लेखक अपनी रचनाएँ सीधे पाठकों तक पहुँचा सकते हैं। इससे साहित्यिक अभिव्यक्ति अधिक स्वतंत्र और त्वरित हो गई है। ब्लॉग लेखन ने साहित्यकारों को पारंपरिक प्रकाशन प्रक्रियाओं से मुक्त कर दिया है और नए विषयों तथा प्रयोगों के लिए अवसर प्रदान किया है। ब्लॉग के माध्यम से कविता, कहानी, संस्मरण और आलोचना जैसी विभिन्न साहित्यिक विधाओं का विकास हुआ है।

2. सोशल मीडिया और साहित्यिक लेखन : सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे फेसबुक, ट्विटर (एक्स) और इंस्टाग्राम ने साहित्यिक अभिव्यक्ति के नए आयाम विकसित किए हैं। इन माध्यमों के माध्यम से लेखक अपनी रचनाएँ व्यापक पाठक वर्ग तक पहुँचा सकते हैं और पाठकों के साथ सीधे संवाद स्थापित कर सकते हैं। सोशल मीडिया ने साहित्य को अधिक गतिशील और सहभागी बनाया है। यहाँ लघु कविताएँ, सूक्तियाँ, लघुकथाएँ और वैचारिक लेखन तेजी से प्रसारित होते हैं। इससे साहित्य का लोकतंत्रीकरण हुआ है और नई पीढ़ी के लेखकों को पहचान मिलने के अवसर बढ़े हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

3. डिजिटल कविता और नए साहित्यिक प्रयोग : डिजिटल युग में कविता के स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। **डिजिटल कविता** या **ई-कविता** के माध्यम से कवि अपने विचारों और भावनाओं को नए तकनीकी माध्यमों में प्रस्तुत कर रहे हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म पर कविता के साथ-साथ दृश्य, ध्वनि और मल्टीमीडिया का प्रयोग भी किया जा रहा है, जिससे साहित्यिक अभिव्यक्ति के नए प्रयोग सामने आए हैं। इससे कविता का स्वरूप अधिक व्यापक और प्रयोगधर्मी बन गया है।

4. ई पुस्तकें और डिजिटल प्रकाशन : डिजिटल तकनीक के विकास के साथ **ई-पुस्तकों** का भी व्यापक प्रसार हुआ है। आज अनेक प्रकाशन संस्थाएँ अपनी पुस्तकों को डिजिटल रूप में उपलब्ध करा रही हैं, जिससे पाठकों को पुस्तकों तक आसानी से पहुँच प्राप्त हो रही है। ई-पुस्तकों ने साहित्य के प्रसार को वैश्विक स्तर पर संभव बनाया है। अब पाठक किसी भी स्थान से इंटरनेट के माध्यम से साहित्यिक कृतियों को पढ़ सकते हैं। इससे हिंदी साहित्य की पहुँच भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बढ़ी है।

5. ऑनलाइन साहित्यिक पत्रिकाएँ : डिजिटल युग में अनेक **ऑनलाइन साहित्यिक पत्रिकाएँ** भी विकसित हुई हैं, जिन्होंने हिंदी साहित्य के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ये पत्रिकाएँ नए और स्थापित दोनों प्रकार के लेखकों को अपनी रचनाएँ प्रकाशित करने का अवसर प्रदान करती हैं। उदाहरण के रूप में **'प्रतिलिपि', 'हिंदी समय' और 'समालोचन'** जैसी ऑनलाइन पत्रिकाएँ हिंदी साहित्य के महत्वपूर्ण मंच बनकर उभरी हैं। इन मंचों पर कविता, कहानी, लेख, आलोचना और अनुवाद जैसी विविध साहित्यिक विधाओं का प्रकाशन किया जाता है।

उदीयमान भारत और सांस्कृतिक पुनर्जागरण :- उदीयमान भारत की अवधारणा केवल आर्थिक और तकनीकी विकास तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक **सांस्कृतिक पुनर्जागरण** की प्रक्रिया को भी अभिव्यक्त करती है। वर्तमान समय में भारत अपनी प्राचीन सांस्कृतिक परंपराओं, लोक विरासत और भाषाई विविधता को पुनः पहचानने और वैश्विक स्तर पर स्थापित करने की दिशा में अग्रसर है। इस संदर्भ में समकालीन हिंदी साहित्य भारतीय संस्कृति की पुनर्पहचान, लोक परंपराओं के पुनरुत्थान और भाषाई चेतना के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। भारतीय संस्कृति की विशेषता उसकी बहुलता, सहिष्णुता और विविधता में निहित है। वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, भक्ति साहित्य और लोक परंपराओं ने भारतीय समाज के सांस्कृतिक जीवन को गहराई से प्रभावित किया है। समकालीन हिंदी साहित्य इन सांस्कृतिक परंपराओं को नए संदर्भों में पुनर्परिभाषित करते हुए आधुनिक समाज के सामने प्रस्तुत करता है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

1. भारतीय संस्कृति की पुनर्पहचान : उदीयमान भारत के संदर्भ में भारतीय संस्कृति की पुनर्पहचान एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। वैश्वीकरण के दौर में जहाँ पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव बढ़ा है, वहीं भारतीय समाज ने अपनी सांस्कृतिक जड़ों को भी पुनः खोजने का प्रयास किया है। समकालीन हिंदी साहित्य में भारतीय परंपराओं, सांस्कृतिक मूल्यों और ऐतिहासिक विरासत को नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। साहित्यकारों ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि आधुनिकता और परंपरा के बीच संतुलन स्थापित करना भारतीय समाज के लिए अत्यंत आवश्यक है। कई साहित्यकारों ने भारतीय संस्कृति की आध्यात्मिकता, नैतिक मूल्यों और सामाजिक परंपराओं को आधुनिक संदर्भों में पुनर्व्याख्यायित किया है। इससे भारतीय सांस्कृतिक पहचान को सुदृढ़ बनाने में सहायता मिली है।

2. लोक साहित्य और सांस्कृतिक परंपरा : भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण आधार **लोक साहित्य** है। लोकगीत, लोककथाएँ, लोकनाटक और लोक परंपराएँ भारतीय समाज की सांस्कृतिक चेतना का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। समकालीन हिंदी साहित्य में लोक साहित्य की परंपरा को पुनर्जीवित करने का प्रयास दिखाई देता है। अनेक साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में लोक जीवन, ग्रामीण संस्कृति और पारंपरिक जीवन मूल्यों का चित्रण किया है। लोक साहित्य के माध्यम से भारतीय समाज की सामूहिक स्मृति, सांस्कृतिक अनुभव और सामाजिक जीवन की विविधता को अभिव्यक्ति मिलती है। इस प्रकार लोक साहित्य भारतीय सांस्कृतिक पुनर्जागरण का एक महत्वपूर्ण आधार बनता है।

3. भारतीय भाषाओं का पुनरुत्थान : उदीयमान भारत के सांस्कृतिक विकास में **भारतीय भाषाओं का पुनरुत्थान** भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाएँ भारत की सांस्कृतिक पहचान और ज्ञान परंपरा की वाहक हैं। समकालीन समय में हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में साहित्यिक सृजन और प्रकाशन की गतिविधियाँ तेजी से बढ़ी हैं। डिजिटल माध्यमों और नई तकनीकों ने भारतीय भाषाओं के प्रसार को भी नई गति प्रदान की है। ऑनलाइन मंचों, ब्लॉगों और डिजिटल प्रकाशन के माध्यम से हिंदी साहित्य की पहुँच देश और विदेश दोनों स्तरों पर बढ़ी है। इससे भारतीय भाषाओं के विकास और संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान मिला है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

4. सांस्कृतिक वैश्वीकरण और भारतीय पहचान : वैश्वीकरण के दौर में विभिन्न संस्कृतियों के बीच संपर्क और संवाद बढ़ा है। इसे **सांस्कृतिक वैश्वीकरण** कहा जाता है। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप विभिन्न संस्कृतियाँ एक-दूसरे को प्रभावित करती हैं और नए सांस्कृतिक रूपों का विकास होता है। समकालीन हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक वैश्वीकरण के प्रभावों का भी गहन चित्रण मिलता है। साहित्यकारों ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि वैश्वीकरण के बीच भी भारतीय समाज अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने का प्रयास कर रहा है। इस संदर्भ में समकालीन हिंदी साहित्य भारतीय संस्कृति की विशिष्टता को वैश्विक संदर्भ में प्रस्तुत करने का कार्य कर रहा है। साहित्य के माध्यम से भारतीय समाज की सांस्कृतिक विविधता, परंपराएँ और जीवन मूल्य विश्व स्तर पर परिचित हो रहे हैं।

निष्कर्ष :- समकालीन हिंदी साहित्य और उदीयमान भारत के संबंध का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि साहित्य केवल समाज का प्रतिबिंब ही नहीं होता, बल्कि वह समाज की दिशा और विकास की संभावनाओं को भी अभिव्यक्त करता है। आधुनिक भारत में हो रहे सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, तकनीकी और सांस्कृतिक परिवर्तनों का प्रभाव समकालीन हिंदी साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। साहित्यकारों ने अपने लेखन के माध्यम से बदलते भारत की चुनौतियों, संघर्षों और संभावनाओं को संवेदनात्मक और वैचारिक रूप में प्रस्तुत किया है। उदीयमान भारत की अवधारणा आर्थिक विकास, तकनीकी नवाचार, लोकतांत्रिक संस्थाओं की सुदृढ़ता, सामाजिक न्याय और सांस्कृतिक पुनर्जागरण जैसे अनेक आयामों से जुड़ी हुई है। समकालीन हिंदी साहित्य ने इन सभी आयामों को अपनी रचनात्मक अभिव्यक्ति का विषय बनाया है। राजनीति, सामाजिक परिवर्तन, आर्थिक उदारीकरण, प्रशासनिक व्यवस्था, डिजिटल युग और सांस्कृतिक पुनर्जागरण जैसे विषयों का साहित्य में व्यापक चित्रण यह दर्शाता है कि साहित्यकार अपने समय की जटिलताओं और वास्तविकताओं के प्रति अत्यंत सजग हैं। समकालीन हिंदी साहित्य में राजनीतिक चेतना, सामाजिक न्याय, स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श और लोकतांत्रिक मूल्यों की अभिव्यक्ति यह संकेत करती है कि साहित्य समाज में जागरूकता और परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त असमानताओं, शोषण और अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाई है तथा मानवाधिकार, समानता और सामाजिक न्याय जैसे मूल्यों को मजबूत करने का प्रयास किया है। इसके साथ ही आर्थिक उदारीकरण, वैश्वीकरण और डिजिटल तकनीक के विकास ने साहित्य के स्वरूप और प्रसार को भी प्रभावित किया है। डिजिटल माध्यमों ने साहित्य को नए पाठक और नए मंच प्रदान किए हैं, जिससे हिंदी साहित्य की पहुँच राष्ट्रीय ही नहीं बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी बढ़ी है। भविष्य

की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि समकालीन हिंदी साहित्य उदीयमान भारत की सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहेगा। बदलते वैश्विक परिवेश, तकनीकी नवाचार और सामाजिक परिवर्तनों के साथ साहित्य के विषय और अभिव्यक्ति के स्वरूप भी विकसित होते रहेंगे।

अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि समकालीन हिंदी साहित्य उदीयमान भारत की बहुआयामी प्रक्रिया का एक सशक्त सांस्कृतिक दस्तावेज है। यह साहित्य न केवल वर्तमान समाज की वास्तविकताओं को अभिव्यक्त करता है, बल्कि भविष्य के भारत की संभावनाओं और चुनौतियों की ओर भी संकेत करता है। इस प्रकार समकालीन हिंदी साहित्य और उदीयमान भारत के बीच गहरा और परस्पर संबंध स्थापित होता है, जो भारतीय समाज के विकास और सांस्कृतिक चेतना को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सिंह, नामवर - आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2012, पृ. 45 ।
2. शर्मा, रामविलास. हिंदी साहित्य और समाज. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2001, पृ. 78।
3. शुक्ल, रामचंद्र. हिंदी साहित्य का इतिहास. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन, 2010, पृ. 30।
4. त्रिपाठी, विश्वनाथ. हिंदी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2014, पृ. 8।
5. लिंबाले, शरणकुमार. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2005, पृ. 55।
6. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. जूठन. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 2014, पृ. 60।
7. तुलसीराम. मुर्दहिया. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2010, पृ. 75।
8. शुक्ल, श्रीलाल. राग दरबारी. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2016, पृ. 145।
9. प्रकाश, उदय. पीली छतरी वाली लड़की. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2001, पृ. 65।
10. सहाय, रघुवीर. आत्महत्या के विरुद्ध. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2009, पृ. 70।

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

सांस्कृतिक अस्मिता,संघर्ष और समायोजन- एक अध्ययन

शोधकर्ता

अनमोलए.भालेराव

राज्यशास्त्र विभाग नागपुर विद्यापीठ,नागपुर

एम.डी.महाविद्यालय गोंदिया

शोध निर्देशक

प्रा. डॉ. किशोर बी. वासनिक

सहयोगी प्राध्यापक(राजयशास्त्र विभाग)

शोध परिचय :-

भारत एक बहुलतावादी सभ्यता है, जहाँ हजारों वर्षों से विविध संस्कृतियाँ, भाषाएँ, धर्म और सामाजिक संरचनाएँ सह-अस्तित्व में रही हैं। भारतीय समाज की विशेषता इसकी विविधता है|यह विविधता ही उसकी शक्ति भी है और चुनौती भी है। आधुनिक भारत के निर्माण के साथ सांस्कृतिक पहचान का प्रश्न राजनीतिक विमर्श का केंद्रीय विषय बन गया।

सांस्कृतिक अस्मिता (Cultural Assertion) का अर्थ केवल अपनी परंपराओं या रीति-रिवाजों पर गर्व करना नहीं है, बल्कि यह सामाजिक मान्यता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और आर्थिक संसाधनों में भागीदारी की मांग से जुड़ा हुआ है। जब कोई समुदाय अपनी पहचान को राजनीतिक रूप से स्थापित करने का प्रयास करता है, तो वह सांस्कृतिक अस्मिता की अभिव्यक्ति कहलाती है। भारतीय लोकतंत्र में यह प्रक्रिया स्वाभाविक भी है और जटिल भी। यह लेख भारत में सांस्कृतिक अस्मिता के विभिन्न आयामों, उसके कारणों, उससे उत्पन्न संघर्षों तथा राज्य द्वारा किए गए समायोजन का व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

सांस्कृतिक अस्मिता की अवधारणा एवं सैद्धांतिक पृष्ठभूमि:आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत में सांस्कृतिक अस्मिता का प्रश्न "मान्यता की राजनीति" से जुड़ा है। चार्ल्स टेलर - के अनुसार आधुनिक समाज में व्यक्तियों और समुदायों की पहचान को मान्यता देना लोकतंत्र की अनिवार्य शर्त है। यदि किसी समुदाय की सांस्कृतिक पहचान को सम्मान नहीं मिलता, तो वह संघर्ष का रूप ले सकती है। बेनेडिकट एंडरसन ने राष्ट्र को "कल्पित समुदाय" बताया, जहाँ सांस्कृतिक प्रतीकों, भाषा और ऐतिहासिक

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

स्मृतियों के माध्यम से राष्ट्रीय पहचान निर्मित होती है। विल कैमलिका ने 'बहुसांस्कृतिक नागरिकता' का सिद्धांत दिया, जिसके अनुसार अल्पसंख्यक समुदायों को विशेष अधिकार दिए जाने चाहिए। भारत की सांस्कृतिक संरचना :भारत में २२ अनुसूचित भाषाएँ, सैकड़ों बोलियाँ, अनेक धार्मिक परंपराएँ और विविध जातीय समुदाय हैं। भारतीय संविधान ने इस विविधता को मान्यता दी है और सांस्कृतिक अधिकारों को संरक्षित किया है। अनुच्छेद २९ और ३० अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति को सुरक्षित रखने का अधिकार देते हैं।

भारत में सांस्कृतिक अस्मिता के प्रमुख आयाम:(१) भाषायी अस्मिता :स्वतंत्रता के बाद भाषा का प्रश्न अत्यंत संवेदनशील बन गया। हिंदी को राजभाषा घोषित करने के प्रयासों के विरुद्ध दक्षिण भारत, विशेषकर तमिलनाडु में व्यापक आंदोलन हुए।सन १९५६ के राज्य पुनर्गठन अधिनियम ने भाषाई आधार पर राज्यों का निर्माण किया। यह सांस्कृतिक अस्मिता को संवैधानिक मान्यता देने का महत्वपूर्ण कदम था। उदाहरण: तमिल भाषा आंदोलन,मराठी अस्मिता आंदोलन असमिया भाषा आंदोलन |भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक गौरव और पहचान का प्रतीक है। (२) जातीय एवं सामाजिक अस्मिता:भारतीय समाज में जाति एक ऐतिहासिक सामाजिक संस्था रही है। लंबे समय तक दलित और पिछड़े वर्ग सामाजिक एवं आर्थिक रूप से वंचित रहे। बी.आर . आंबेडकर ने सामाजिक न्याय और समानता को संवैधानिक रूप दिया। मंडल आयोग की सिफारिशों के लागू होने (सं१९९०) के बाद सामाजिक न्याय बनाम मेरिट का प्रश्न राष्ट्रीय बहस का विषय बना। यह सांस्कृतिक और सामाजिक पहचान की राजनीतिक अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण उदाहरण है। (३) धार्मिक अस्मिता:- भारत एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है, किंतु धार्मिक पहचानें राजनीतिक प्रक्रिया में प्रभावशाली भूमिका निभाती रही हैं। धार्मिक अस्मिता कई बार सामाजिक ध्रुवीकरण और संघर्ष का कारण बनी है। हालाँकि संविधान सभी धर्मों को समान अधिकार देता है, परंतु व्यवहार में धार्मिक पहचानें राजनीतिक लामबंदी का आधार बनती रही हैं।(४) क्षेत्रीय अस्मिता:भारत के विभिन्न राज्यों में क्षेत्रीय पहचान के आधार पर आंदोलन हुए।पंजाब में खालिस्तान आंदोलन ,आसाम में विदेशी नागरिकों के विरुद्ध आंदोलन , जम्मु और कश्मीर में विशेष संवैधानिक दर्जे की मांग,ये सभी उदाहरण दर्शाते हैं कि क्षेत्रीय संस्कृति और पहचान राजनीतिक शक्ति का आधार बन सकती है (५) आदिवासी अस्मिता:आदिवासी समुदायों ने अपनी सांस्कृतिक परंपराओं, भूमि अधिकारों और स्वायत्तता की रक्षा के लिए आंदोलन किए। झारखंड, छत्तीसगढ़ और उत्तराखंड जैसे राज्यों का निर्माण क्षेत्रीय एवं आदिवासी अस्मिता की राजनीतिक अभिव्यक्ति का परिणाम था। सांस्कृतिक अस्मिता के कारण: ऐतिहासिक अन्याय, सामाजिक भेदभाव

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

, संसाधनों का असमान वितरण , राजनीतिक प्रतिनिधित्व की कमी , वैश्वीकरण के कारण स्थानीय संस्कृति पर संकट मंडराता है |सांस्कृतिक अस्मिता से उत्पन्न संघर्ष:जैसे भाषायी संघर्ष , साम्प्रदायिक दंगे , जातीय संघर्ष ,अलगाववादी आंदोलन इन संघर्षों के मूल में पहचान, सम्मान और शक्ति का प्रश्न निहित रहता है।

भारत में सांस्कृतिक संघर्ष (Cultural Conflicts) बहुत जटिल और बहुआयामी हैं। भारत की विविधता—धर्म, भाषा, जाति, क्षेत्र, जातीयता—एक ताकत है, लेकिन कभी-कभी ये संघर्ष का कारण भी बन जाती है। ये संघर्ष अक्सर सांस्कृतिक असर्शन के उलटे रूप में दिखते हैं, जहाँ एक समूह की पहचान दूसरों पर हावी होने की कोशिश करती है या संसाधनों/शक्ति के लिए टकराव होता है। भारत में हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जनजातीय आदि कई समुदाय हैं। विविधता अच्छी है, लेकिन राजनीति, ऐतिहासिक संघर्ष और आर्थिक असमानता इसे संघर्ष में बदल देती है।बहुसंख्यकवाद विरोध एवं अल्पसंख्यक असुरक्षा की भावना को बढ़ावा मिलता है ,हिंदुत्व या क्षेत्रीय राष्ट्रवाद से कुछ समूहों को लगता है कि उनकी संस्कृति खतरे में है, जबकि अल्पसंख्यक समुदायों को लगता है कि उनकी पहचान दबाई जा रही है।क्षेत्रीय/जातीय अस्मिता के कारन जैसे भाषा, भूमि, आरक्षण, प्रवास जैसे मुद्दों से राजनीतिक ध्रुवीकरण होता है | चुनावों में धार्मिक/सांस्कृतिक मुद्दों का इस्तेमाल, सोशल मीडिया पर अफवाहें, और नफरत फैलाना के लिए होता है। ऐतिहासिक उपनिवेशवाद, आक्रमण, विभाजन, और हाल के नीतिगत फैसले (जैसे अनुच्छेद ३७० हटाना, वक्फ बिल)।संसाधन और भूमि विवादों के मुद्दे खासकर पूर्वोत्तर में। वैश्वीकरण और आधुनिकीकरण, ऐतिहासिक हिंदू-मुस्लिम तनाव ,गौ-रक्षा, लव जिहाद, धर्मांतरण विरोधी कानून से जुड़े हमले ।धार्मिक जुलूसों के दौरान झड़पें (जैसे हरियाणा के नूह २०२३ , या २०२४-२०२५ में रामनवमी/होली/रमजान के दौरान कई जगह)।बुलडोजर एक्शन (मुस्लिम घरों पर), जो "collective punishment" माना जाता है। २०२५ में भी कई राज्यों (बिहार, गुजरात, एमपी, यूपी आदि) में रामजान-होली के दौरान हिंसा की घटनाएँ, जहां जुलूसों में भड़काऊ नारे और फिर दुकानें/मस्जिदें तोड़ी गईं।मणिपुर जातीय संघर्ष (२०२३-२०२५ तक जारी):मेइती (बहुसंख्यक, हिंदू/वैष्णव) विरोध में कुकी-ज़ो (जनजातीय, ईसाई)।कारण: एसटी दर्जा, भूमि अधिकार, म्यांमार से प्रवास, राजनीतिक हेरफेर। अनेको मौतें, हजारों विस्थापित, चर्च/घर जलाए गए। राज्य अनौपचारिक रूप से बँट गया है (बफर जोन)। २०२६ तक भी तनाव जारी है | मिलिशिया सक्रिय।कश्मीर और हिंदू-मुस्लिम/क्षेत्रीय मुद्दे:२०१९ आर्टिकल ३७० हटाने के बाद तनाव।२०२५ में पहलगाम हमला (२५ मौतें), फिर भारत-पाकिस्तान मिसाइल हमले (ऑपरेशन सिन्दूर) — ड्रोन युद्ध

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

तक पहुँचा, लेकिन युद्धविराम हो गया।कश्मीर में हिंदुओं पर लक्षित हमले, जिससे पलायन बढ़ा।पूर्वोत्तर और अन्य जातीय संघर्ष:असम, नागालैंड आदि में जनजातीय विरुद्ध गैर-जनजातीय।बांग्लादेश में हिंदुओं पर हमले (२०२५ में एक हिंदू की हत्या से भारत में विरोध)।ईसाई और अन्य अल्पसंख्यक:छत्तीसगढ़, एमपी आदि में असंवैधानिक धर्मान्तरण (illegal conversion) आरोप पर हमले, चर्च तोड़े गए। कुल मिलाकर भारत में सांस्कृतिक संघर्ष अक्सर सांस्कृतिक असर्शन का उग्र रूप ले लेते हैं|एक तरफ गर्व और पुनरुत्थान (राम मंदिर, काशी कॉरिडोर आदि से सकारात्मक बदलाव), दूसरी तरफ बहिष्कार और हिंसा। ये संघर्ष राजनीतिक हैं|बीजेपी जैसे दल हिंदुत्व बढ़ाने पर बल देते हैं, जबकि विपक्ष इसे विभाजनकारी कहता है। मणिपुर ठंडा नहीं हुआ, हिंदू-मुस्लिम तनाव चुनावों में भड़कता है, और भारत-पाकिस्तान जैसे बाहरी संघर्ष सांस्कृतिक/धार्मिक अस्मिता तथा प्रभाव बढ़ाने का प्रयास करते है। पुणे में (महाराष्ट्र) तो कभी-कभी मराठी विरोध उत्तर भारतीय या धार्मिक जुलूसों में छोटे बड़े तनाव देखने को मिलते है |

भारत में सांस्कृतिक असर्शन (Cultural Assertion in India) के बारे में।सांस्कृतिक असर्शन का मतलब है अपनी सांस्कृतिक पहचान को सक्रिय रूप से दोबारा हासिल करना, बढ़ावा देना और उसकी रक्षा करना। ये तब होता है जब कोई समूह (राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, जातीय, धार्मिक या भाषाई) को लगता है कि उनकी संस्कृति पर खतरा है—चाहे वो वैश्वीकरण से हो, ऐतिहासिक दमन से, उपनिवेशवाद से या किसी प्रमुख विचारधारा से।भारत में ये बहुत अलग-अलग रूपों में दिखता है, क्योंकि हमारा देश इतना विविध है।राष्ट्रीय स्तर पर पूरे भारत की भारतीयता आजकल युवा पीढ़ी जेन Z और मिलेनियल्स में एक बड़ा ट्रेंड है—पश्चिमी /ग्लोबल संस्कृति के प्रभाव से दूर हटकर अपनी जड़ों की ओर लौटना । ये पुरानी पीढ़ी की "माफी मांगने वाली" या "पश्चिमी बनने की कोशिश" के खिलाफ है।युवा कहते हैं—हम भारतीय हैं और गर्व से हैं, बिना किसी को न्यायोचित किए। ये रूढ़िवादिता नहीं, बल्कि अपनी पहचान को बल दिया है।

ये आर्थिक विकास और वैश्विक दृश्यता से भी जुड़ा है।क्षेत्रीय और भाषाई असर्शन हाल ही में केरल को केरलम नाम देने की बात—ये मलयालम उच्चारण के साथ नाम को जोड़ने का सांस्कृतिक गर्व है।तमिलनाडु में द्रविड़ आंदोलन, महाराष्ट्र में मराठी अस्मिता, पंजाब में पंजाबी/सिख पहचान—ये सब क्षेत्रीय भाषा, परंपरा और इतिहास पर जोर देते हैं।कभी-कभी ये अलगाववाद या क्षेत्रवाद की तरफ भी ले जाता है। पूर्वोत्तर भारत में बोड़ो, विभिन्न जनजातियाँ—अपनी भाषा, रीति-रिवाज और भूमि की रक्षा।ये लोग अपनी अलग पहचान बनाते हैं, बिना पूरी तरह संस्कृतिकरण या धर्मांतरण

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

के।हिंदू/सांस्कृतिक राष्ट्रवाद (हिंदुत्व के संदर्भ में)ये सबसे प्रमुख और राजनीतिक रूप से प्रभावशाली है।भारत को हिंदू सभ्यता के रूप में देखना, प्रतीकों (मंदिर, त्योहार, नाम बदलना) का प्रचार।समर्थक इसे सदियों के आक्रमण और उपनिवेश के बाद गौरव की वापसी मानते हैं।

आलोचक इसे बहुसंख्यकवाद और अल्पसंख्यकों के लिए खतरनाक बताते हैं।कुल मिलाकर भारत की विविधता की वजह से सांस्कृतिक असर्शन कई तरह का होता है—कभी एकजुट करने वाला (राष्ट्रीय गर्व), कभी बाँटने वाला (क्षेत्रीय/जातीय मांगें), और कभी विवादास्पद (बहुसंख्यक विरुद्ध अल्पसंख्यक)| सांस्कृतिक संघर्ष के कारण (वर्णनात्मक विवरण)सांस्कृतिक संघर्ष तब उत्पन्न होता है जब विभिन्न सांस्कृतिक समूहों के मूल्य, विश्वास, रीति-रिवाज, जीवनशैली या पहचान में गहरे अंतर आ जाते हैं, और ये अंतर सह-अस्तित्व के बजाय टकराव में बदल जाते हैं। यह संघर्ष व्यक्तिगत स्तर से लेकर सामाजिक, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर तक फैल सकता है। भारत जैसे बहुसांस्कृतिक समाज में यह विशेष रूप से जटिल और बार-बार देखा जाता है।

सांस्कृतिक संघर्ष के प्रमुख कारण :मूल्यों और विश्वासों में मूलभूत अंतर :विभिन्न संस्कृतियों में नैतिकता, परिवार, धर्म, लिंग भूमिका, सम्मान की अवधारणा आदि पर अलग-अलग दृष्टिकोण होते हैं। उदाहरण स्वरूप, एक संस्कृति में व्यक्तिवाद को महत्व दिया जाता है, जबकि दूसरी में सामूहिकता और परिवार की प्रधानता। जब ये मूल्य टकराते हैं, तो समझौता कठिन हो जाता है।

भारत में हिंदू-मुस्लिम संघर्ष का एक कारण धार्मिक विश्वासों (जैसे मंदिर-मस्जिद विवाद, त्योहारों की ध्वनि, पशु बलि आदि) में अंतर रहा है। इसी प्रकार, पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव से पारंपरिक भारतीय मूल्यों (जैसे संयुक्त परिवार, वस्त्र, भोजन) में बदलाव आने पर पीढ़ीगत या सांस्कृतिक टकराव बढ़ता है।सांस्कृतिक श्रेष्ठता की भावना (एथनोसेंट्रिस्म) :अपनी संस्कृति को सर्वश्रेष्ठ मानना और दूसरी को निम्न या गलत ठहराना संघर्ष का बड़ा कारण है। यह "हम बनाम वे" की सोच पैदा करता है!भारत में उत्तर-पूर्वी राज्यों के लोगों को "चाइनीज" या "विदेशी" कहकर देखना, या दक्षिण भारतीयों को "मद्रासी" कहकर सामान्यीकरण करना इसी का उदाहरण है। वैश्विक स्तर पर भी पश्चिमी संस्कृति का "सभ्यता का मानक" बनना अन्य संस्कृतियों के साथ टकराव पैदा करता है।सांस्कृतिक पहचान का राजनीतिकरण राजनीतिक दलों द्वारा किया जाता है !राजनीतिक दल या नेता सांस्कृतिक अस्मिता को वोट बैंक बनाने के लिए इस्तेमाल करते हैं। "हमारी संस्कृति खतरे में है" का भावनात्मक कथा बनाकर भावनाओं को भड़काया जाता है। भारत में हिंदुत्व, द्रविड़ अस्मिता, सिख अलगाववाद या आदिवासी पहचान की राजनीति इसी से जुड़ी है। राजनीतिक लाभ के लिए इतिहास को तोड़-मरोड़कर पेश करना

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

(जैसे मध्यकालीन इतिहास की व्याख्या) संघर्ष को और गहरा करता है।आर्थिक असमानता और संसाधनों पर प्रतिस्पर्धा की परिस्थिति में जब सांस्कृतिक समूह अलग-अलग आर्थिक स्थिति में होते हैं, तो संसाधन (नौकरी, भूमि, शिक्षा) पर प्रतिस्पर्धा सांस्कृतिक टकराव में बदल जाती है। भारत में आदिवासी समुदायों का विस्थापन खनन या बांध परियोजनाओं से होता है, जिसे वे अपनी सांस्कृतिक पहचान (जंगल, प्रकृति पूजा) पर हमला मानते हैं। इसी तरह, प्रवासी मजदूरों पर स्थानीय संस्कृति के नाम पर हमले होते हैं।

अतीत के संघर्ष, विजय, उत्पीड़न या विभाजन की यादें पीढ़ियों तक बनी रहती हैं। ये स्मृतियां नई पीढ़ी में भी पूर्वाग्रह पैदा करती हैं। भारत-पाकिस्तान विभाजन, बाबरी मस्जिद विध्वंस, १९८४ के सिख विरोधी दंगे, गुजरात दंगे आदि की स्मृतियां आज भी सांस्कृतिक संघर्ष को भड़काती हैं।

संचार और मीडिया का प्रभाव से तथा सोशल मीडिया और समाचार चैनल फेक न्यूज, अफवाहें और अतिरंजित खबरें फैलाकर सांस्कृतिक तनाव बढ़ाते हैं। छोटी घटना को "सांस्कृतिक हमला" बताकर बड़ा रूप दिया जाता है। उदाहरण: "लव जिहाद" या "घर वापसी" जैसे नैरेटिव मीडिया के माध्यम से फैलते हैं और समुदायों के बीच अविश्वास पैदा करते हैं।वैश्वीकरण और सांस्कृतिक आक्रमण की आशंका से पश्चिमी संस्कृति (फिल्में, फैशन, जीवनशैली) का प्रसार होता है, जिसे कुछ समूह अपनी परंपराओं पर खतरा मानते हैं। इससे प्रतिक्रिया में कट्टरता बढ़ती है।भारत में "सांस्कृतिक राष्ट्रवाद" इसी आशंका से उपजा है, जहां अंग्रेजी, वेस्टर्न ड्रेस या वैलेंटाइन डे जैसे प्रतीकों पर विरोध होता है। सांस्कृतिक संघर्ष के ये कारण अक्सर एक-दूसरे से जुड़े होते हैं। कोई एक कारण अकेला नहीं होता, बल्कि ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक कारक मिलकर इसे जन्म देते हैं। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में सांस्कृतिक संघर्ष को रोकने के लिए शिक्षा, संवाद, समावेशी नीतियां और सांस्कृतिक समझदारी आवश्यक है। यदि इन कारणों को समझकर संबोधित किया जाए, तो विविधता संघर्ष का कारण नहीं, बल्कि शक्ति का स्रोत बन सकती है।(यह वर्णनात्मक विवरण सामान्य सिद्धांतों और भारतीय संदर्भ पर आधारित है।)

सांस्कृतिक समायोजन (Cultural Accommodation) की। ये वो प्रक्रिया है जिसमें अलग-अलग संस्कृतियाँ एक-दूसरे के साथ सह-अस्तित्व में रहते हुए समझौता करती हैं, एक-दूसरे की परंपराओं, मूल्यों और पहचान को सम्मान देती हैं, बिना किसी को पूरी तरह अपनी संस्कृति छोड़ने या दूसरी में घुल-मिल जाने आत्मसात करने के लिए मजबूर किए। ये सांस्कृतिक असर्शन (assertion) से अलग है, जहाँ कोई अपनी संस्कृति को जोर-शोर से आगे बढ़ाता है, और सांस्कृतिक संघर्ष (conflicts) से

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भी अलग, जहाँ टकराव होता है। समायोजन में सहिष्णुता, संवाद और सह-अस्तित्व पर जोर होता है—जैसे" विविधता में एकता" का भारतीय दर्शन। भारत जैसे बहुसांस्कृतिक देश में ये बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि विविधता को बनाए रखते हुए एकता की जरूरत है।भारत में सांस्कृतिक समायोजन के मुख्य उदाहरण संवैधानिक और कानूनी ढांचा भारतीय संविधान में अनुच्छेद २५-२८ (धार्मिक स्वतंत्रता), अनुच्छेद २९-३० (अल्पसंख्यकों की संस्कृति और शिक्षा का अधिकार), और अनुच्छेद ३७१ (विशेष प्रावधान पूर्वोत्तर राज्यों के लिए)।ये अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा, संस्कृति और रीति-रिवाज बनाए रखने की अनुमति देते हैं, बिना मुख्यधारा में पूरी तरह घुलने के।व्यक्तिगत कानून (पर्सनल लॉ) — हिंदू, मुस्लिम, ईसाई आदि के अलग-अलग विवाह /वरसाहक्क कानून—ये समायोजन का बड़ा उदाहरण है।त्योहारों और परंपराओं का आपसी सम्मान पूरे देश में दिवाली, ईद, क्रिसमस, गुरु नानक जयंती, ओणम, पोंगल आदि सब जगह मनाए जाते हैं।स्कूलों/ऑफिसों में छुट्टियाँ, या पड़ोस में एक-दूसरे को बधाई देना—ये रोजमर्रा का समायोजन है।मुस्लिम बहुल इलाकों में रामनवमी जुलूस, या हिंदू बहुल में ईद मिलाद—शांतिपूर्ण तरीके से।भाषाई और क्षेत्रीय समायोजन :८ वीं अनुसूची में २२ भाषाएँ—हर भाषा को आधिकारिक दर्जा।राज्य भाषाओं को शिक्षा/प्रशासन में जगह (जैसे तमिल, मलयालम, बंगाली आदि)।पूर्वोत्तर में जनजातीय संस्कृतियों को संरक्षण—जैसे नागालैंड में अलग कानून, या मिजोरम/मेघालय में छठी अनुसूची।सामाजिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान होमस्टे/हेरिटेज होटल — जहां पर्यटक लोकल परिवारों के साथ रहकर उनकी संस्कृति सीखते हैं (केरल के बैकवाटर्स, राजस्थान के हवेली, असम के बांस के कॉटेज)।बॉलीवुड /साउथ इंडियन फिल्में—हिंदू-मुस्लिम-ईसाई किरदार एक साथ मिश्रित कल्चर दिखाते हैं।लंगर (सिख गुरुद्वारों में)—सबको बराबर खाना, जाति-धर्म भेदभाव के बिना। ये समायोजन का जीवंत प्रतीक है।ऐतिहासिक उदाहरण मुगल काल में हिंदू-इस्लामी वास्तुकला का मिश्रण (ताजमहल, फतेहपुर सीकरी)।भक्ति-सूफी आंदोलन—कबीर, नानक, मीरा—जो हिंदू-मुस्लिम एकता को बढ़ावा देते थे।आज के समय में कुंभ मेला या गंगा आरती में सभी समुदायों की भागीदारी। पुणे में तो महाराष्ट्र की मराठी संस्कृति के साथ उत्तर भारतीय, गुजराती, दक्षिण भारतीय सब मिल-जुलकर रहते हैं—गणेश उत्सव में सब शामिल होते हैं, ये सामाजिक स्तर पर समायोजन का अच्छा उदाहरण है!

भारतीय संविधान द्वारा सांस्कृतिक समायोजन (Cultural Accommodation by the Constitution) की। भारतीय संविधान दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में विविधता को संभालने के लिए एक मॉडल है। ये सेक्युलर, बहुलतावादी और समावेशी ढांचा देता है, जहाँ अलग-अलग धर्म,

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भाषा, संस्कृति, जातीयता वाले लोग बिना किसी को दबाए या पूरी तरह घुल-मिलने के लिए मजबूर किए, साथ रह सकें। संविधान में सांस्कृतिक समायोजन मुख्य रूप से धार्मिक स्वतंत्रता, सांस्कृतिक/भाषाई अधिकार, अल्पसंख्यक संरक्षण और विशेष प्रावधानों के जरिए होता है। ये प्रावधान मुलभुत अधिकार (भाग III) और कुछ अन्य हिस्सों में हैं। मुख्य संवैधानिक प्रावधान (अनुछेद २५-३० और अन्य)संविधान अल्पसंख्यकों (धार्मिक और भाषाई) को विशेष सुरक्षा देता है, ताकि उनकी संस्कृति बनी रहे और वे मुख्यधारा में शामिल हों।

अनुच्छेद २५ : धर्म की स्वतंत्रता:हर व्यक्ति को अपने विवेक की स्वतंत्रता और धर्म को मानने, अभ्यास करने और प्रचार करने का अधिकार है ।ये सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य के अधीन है।राज्य धार्मिक प्रथाओं से जुड़ी आर्थिक/सांसारिक गतिविधियों को नियंत्रित कर सकता है।सिखों को किरपान रखने का स्पष्ट अधिकार है ।ये समायोजन का आधार है—धर्म व्यक्तिगत है, लेकिन राज्य सामाजिक सुधार के लिए हस्तक्षेप कर सकता है। अनुच्छेद २६ : धार्मिक संस्थाओं का प्रबंधन हर धार्मिक संप्रदाय को अपनी धार्मिक संस्थाएँ बनाने, प्रबंधन करने और संपत्ति संभालने का अधिकार।ये सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य के अधीन है ।इससे मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारा, चर्च आदि अपनी परंपराएँ बनाए रख सकते हैं।

अनुच्छेद २७ : धर्म के प्रचार के लिए कर न देना: किसी को किसी खास धर्म के प्रचार के लिए टैक्स नहीं देना पड़ता।राज्य किसी धर्म को विशेष रूप से बढ़ावा नहीं दे सकता। अनुच्छेद २८ : शिक्षा में धार्मिक निर्देश की स्वतंत्रता राज्य द्वारा संचालित/सहायता प्राप्त संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या पूजा में भाग लेने की मजबूरी नहीं।इससे अल्पसंख्यक बच्चों को अपनी संस्कृति से दूर नहीं होना पड़ता।

अनुच्छेद २९ : अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा: किसी भी वर्ग (जो अलग भाषा, लिपि या संस्कृति रखता है) को अपनी संस्कृति संरक्षित करने का अधिकार:राज्य/सहायता प्राप्त संस्थाओं में प्रवेश में धर्म, जाति, भाषा आदि के आधार पर भेदभाव नहीं।ये सांस्कृतिक समायोजन का कोर है—संस्कृति को बचाने का अधिकार सबको है| अनुच्छेद ३० : अल्पसंख्यकों का शिक्षा संस्थान स्थापित करने का अधिकार: सभी धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों को अपनी पसंद के शिक्षा संस्थान बनाने और प्रशासित करने का अधिकार।राज्य सहायता में भेदभाव नहीं कर सकता।ये सबसे मजबूत प्रावधान है—अल्पसंख्यक अपनी संस्कृति, भाषा, मूल्यों को शिक्षा के जरिए अगली पीढ़ी तक पहुँचा सकते हैं (जैसे मदरसा, ईसाई स्कूल, गुरुद्वारा स्कूल, भाषाई कॉलेज)।अन्य महत्वपूर्ण प्रावधान है (भाषाई और क्षेत्रीय समायोजन)अनुच्छेद ३४३-३५१ और ८वीं अनुसूची: २२ भाषाओं को आधिकारिक दर्जा, हिंदी को

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

संघ की भाषा लेकिन राज्यों को अपनी भाषा चुनने की आजादी है।अनुच्छेद 350A: प्राथमिक शिक्षा में मातृभाषा में पढ़ाई की सुविधा है ।अनुच्छेद ३५०बी : भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए विशेष अधिकारी।अनुच्छेद ३७१ (Aसे H): पूर्वोत्तर राज्यों (नागालैंड, असम, मणिपुर आदि) और कुछ अन्य के लिए विशेष प्रावधान—जनजातीय संस्कृति, रीति-रिवाज, भूमि अधिकारों की रक्षा।६ वीं अनुसूची: आदिवासी क्षेत्रों में स्वायत्त परिषदें—संस्कृति और प्रशासन में स्थानीय नियंत्रण।कुल मिलाकर भारतीय संविधान "विविधता में एकता" को बढ़ावा देता है। ये "common domain" (सबके लिए समान अधिकार—जैसे अनुच्छेद १४ , १५ , १६) और "separate domain" (अल्पसंख्यकों के विशेष अधिकार—२९-३०) में बैलेंस बनाता है।राज्य किसी धर्म/संस्कृति को बढ़ावा नहीं देता, लेकिन सबकी रक्षा करता है।ये reasonable accommodation का विचार है—जैसे सिखों को किरपान, जनजातियों को विशेष दर्जा, अल्पसंख्यकों को संस्थान।हालांकि, लागू करने में चुनौतियाँ हैं (जैसे मणिपुर संघर्ष, धर्मांतरण कानून, या कुछ मामलों में बहुसंख्यकवाद), लेकिन संविधान का ढांचा समायोजन को मजबूत बनाता है।पुणे में (महाराष्ट्र) ये रोज दिखता है—मराठी, हिंदी, गुजराती, दक्षिण भारतीय संस्कृतियाँ साथ चलती हैं, और संविधान की वजह से कोई एक दूसरे पर हावी नहीं हो पाता।

निष्कर्ष :

राज्य द्वारा अपनाई गई "सांस्कृतिक समायोजन (Cultural Accommodation)" की नीति का मतलब है कि राज्य अलग-अलग धर्म, भाषा, जाति और परंपराओं वाले समूहों को अपनी पहचान बनाए रखने की कानूनी और सामाजिक जगह देता है, ताकि समाज में टकराव कम हो और सहअस्तित्व संभव हो| यह नीति सामाजिक शांति बनाए रखने में मदद होती है |जब राज्य अलग-अलग सांस्कृतिक समूहों को अधिकार देता है, तो संघर्ष कम होते हैं। अल्पसंख्यकों की सुरक्षा:भाषा, धर्म और संस्कृति को बचाने के लिए संवैधानिक अधिकार मिलते हैं।लोकतांत्रिक समावेश किया जाता है |विभिन्न समूहों को शासन में भागीदारी का अवसर मिलता है।उदाहरण के लिए भारत में संविधान में भाषायी और धार्मिक स्वतंत्रता की व्यवस्था है।पर इसकी कुछ सीमाएँ और समस्याएँ भी होती है जैसे :समूह पहचान का स्थायीकरण कभी-कभी यह नीति जाति, धर्म या समुदाय की पहचान को और मजबूत कर देती है। राजनीतिक दल सांस्कृतिक पहचान का उपयोग वोट बैंक बनाने के लिए करते हैं। समान नागरिकता का सवाल किया जाता है|अलग-अलग समूहों के लिए अलग व्यवस्था होने से "समान कानून" का प्रश्न उठता है।

भारत के संदर्भ में भारत ने "सांस्कृतिक समायोजन + धर्मनिरपेक्षता" का मॉडल अपनाया है, जो संविधान से जुड़ा है। यह व्यवस्था सीधे तौर पर Constitution of India के मूल सिद्धांतों से निकलती है।इसका परिणाम यह हुआ कि भारत जैसे विविध समाज में कई संस्कृतियाँ साथ-साथ रह पा रही हैं, लेकिन जाति और सामुदायिक राजनीति जैसी समस्याएँ अभी भी बनी हुई हैं।सांस्कृतिक समायोजन की नीति पूरी तरह समाधान नहीं है, लेकिन बहुसांस्कृतिक समाज में टकराव कम करने का एक व्यावहारिक तरीका है।यदि इसके साथ समान नागरिक अधिकार, शिक्षा और आर्थिक न्याय जोड़े जाएँ, तो यह नीति ज्यादा प्रभावी बन सकती है।

भारत में सांस्कृतिक अस्मिता एक गतिशील प्रक्रिया है। यह केवल परंपराओं की रक्षा का प्रश्न नहीं, बल्कि राजनीतिक शक्ति, सामाजिक सम्मान और समान अवसर की मांग से जुड़ा हुआ है। भारतीय लोकतंत्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह विविध पहचानों को संघर्ष की बजाय संवैधानिक समायोजन, संवाद और समावेशन के माध्यम से संतुलित करे। यदि समावेशी नीतियाँ अपनाई जाती हैं, तो सांस्कृतिक विविधता राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ कर सकती है। अन्यथा, यह विभाजन और अस्थिरता का कारण बन सकती है। सांस्कृतिक अस्मिता लोकतंत्र का स्वाभाविक भाग है। जब पहचान को मान्यता नहीं मिलती, तो संघर्ष उत्पन्न होता है। भारत ने बहुलवादी मॉडल अपनाकर विविधताओं को समाहित करने का प्रयास किया है। संघवाद और सकारात्मक कार्रवाई स्थिरता के प्रमुख आधार हैं। संवाद और सहिष्णुता के बिना सांस्कृतिक संतुलन संभव नहीं।

संदर्भ सूची :-

1.रामनाथ. (2017). स्वदेशी आतंकवाद किसका और क्यों. कानपुर: बहुजन साहित्य प्रसार केंद्र।
2.भदंत आनंद कौसल्यायन. (2014). धम्मपद. नागपुर: बुद्धभूमि प्रकाशन।
3.भीमराव रामजी आंबेडकर. (2021). हिन्दूधर्म का दर्शन (अनुवाद: सुरेंद्र अज्ञात). नई दिल्ली: सम्यक प्रकाशन।
4.सत्यनारायण गोयंका. (2018). भगवान बुद्ध की साम्प्रदायिकता-विहीन शिक्षा. इगतपुरी: विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरि।
5.दुबे, अभय कुमार., & यादव, योगेंद्र. (2018). विच बहस में सेक्युलरवाद. दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
6.भारत सरकार. (2014). भारतीय संविधान. महाराष्ट्र शासन द्वारा मुद्रित।

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

7.विजयशंकर चौबे. (1998). धर्मनिरपेक्षता एवं राष्ट्रीय एकता. सारनाथ, वाराणसी: केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान।

8.शरण शंकर. (2022). भारत में प्रचलित सेक्युलरवाद. नई दिल्ली: अक्षय प्रकाशन।

9.सत्यनारायण गोयंका. (n.d.). सम्प्रदाय ना धर्म है. इगतपुरी: विपश्यना विशोधन विन्यास (VRI Series No. 102)

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

चुनाव सुधार के संदर्भ में एक राष्ट्र एक चुनाव

डॉ अर्चना ज्ञानदेव पाटिल

सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग

डॉ. ह. आ. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सावनेर

विषय प्रवेश

भारत एक लोकतांत्रिक देश है लोकतंत्र की सबसे अच्छी विशेषता यह होती है कि वहां पर हर एक निर्णय जनता के द्वारा लिया जाता है या हर निर्णय में जनता के हस्तक्षेप एवं भूमिका को प्रमुख स्थान दिया जाता है ।लोकतंत्र के अंदर शक्ति का केंद्रीकरण न होकर विकेंद्रीकरण के प्रक्रिया पर ज्यादा जोर दिया जाता है लोकतंत्र में सहमति एवं असहमति का भी स्थान निर्धारित है। इसलिए चुनाव की प्रक्रिया भी संभव है क्योंकि सभी लोग एक ही मत के होंगे यह आवश्यक नहीं ।तो असहमत पक्ष को भी या विपक्ष को भी सुनना एवं जानना आवश्यक है और मौका देना अनिवार्य है।किसी मुद्दे या सवाल पर पक्ष विपक्ष को जानने का सही तरीका है कि चुनाव कराया जाए और और बहुमत के निर्णय को स्वीकार किया जाए ।हो सकता है कि बहुमत का हर निर्णय सही हो या नो हो यह एक अलग विषय है, फिर भी जनमत को नकारना लोकतंत्र के लिए उचित नहीं है ।यदि सही मायने में जनतंत्र को चलना है तो लोगों का एकच्छिक सहयोग और सहकार्य अनिवार्य है। भारत का लोकतंत्र दुनिया में लोकतांत्रिक देश के लिए उदाहरण बन रहा है तो इसके पीछे उसकी बहूलवादी संस्कृति ,अनेकता में एकता की विशेषता और सत्य निष्ठा इमानदारी महत्वपूर्ण है। दूसरा लोकतंत्र को सुचारु तरीके से संचालित करने के लिए एक निश्चित अवधि मे चुनाव की प्रक्रिया भी मायने रखती है भारत आजादी के दिनों से ही संसदीय व्यवस्था को मुख्य मानते हुए संवैधानिक संस्थाओं का ना केवल निर्माण किया है बल्कि उनकी हम भूमिका भी कारी भी तय किया है।जब भारत के संविधान का अध्यन करते हैं तो पाते हैं कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया से देश चलाने के लिए संविधान में एक चुनाव आयोग की व्यवस्था की है जिसका मुख्य कार्य है निष्पक्ष सुचारु रुप से चुनाव कराना ।जिसे चुनाव आयोग बखूबी निभाता आ रहा है। इतने बड़े देश आम चुनाव का एक साथ होना ,विधानसभा ,ग्राम पंचायत जैसे चुनाव का अलग अलग समय एवं परिस्थितियों में निष्पक्ष सुचारु होना चुनाव आयोग की निष्पक्षता एवं परिपक्वता को दिखाता है ।कहीं कहीं छिटपुट घटनाएं होना स्वाभाविक है परंतु यह भी एक प्रकार से लोगों के सहमति एवं असमहती को महत्त्व देने के कारण ही संभव है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

वर्तमान समय में यह देखने में आने लगा हे कि हर कुछ महीने मे कहीं न कहीं चुनाव होते जा रहे ।हालांकि आजादी से लेकर 1990 तक और आज की परिस्थितियों में अंतर आया है वह अंतर कई तरह का है जिसमें जन जागरुकता तो बढी हे साथ ही साथ क्षेत्र भी व्यापक हुए है एवं यांत्रिक व्यवस्था में भी बदलाव आया है, राजनैतिक दल बढे हैं नये सोच के नेता निकल रहे अधिकारों के प्रति लोगों का लगाव बढ़े हैं साथ में संसदीय व्यवस्था में कई ऐसी त्रासदी पूर्ण परिस्थितियां उत्पन्न हुई है जो चुनाव आयोग एवं उसके निष्पक्ष होने पर सवाल उठाई है। इससे यह मांग उठने लगा हे कि यदि चुनाव सही एवं निष्पक्ष एवं खर्च विहिन बनाना हे तो एक राष्ट्र एक चुनाव होना समय की मांग है दूसरे पक्ष का मानना है कि इससे छोटे राजनीतिक दलों के शक्ति का ह्रास होगा, एक साथ सभी चुनाव नहीं लड़ सकते, उनके अधिकारों का हनन होगा इसलिए दोनों मतों को जानना आवश्य है। भारत में चुनावी इतिहास यह भी कहता है कि 1972 के पूर्व भारत में सभी चुनाव एक साथ होते रहे हैं , परंतु आज परिस्थितियां बदली है इसको ध्यान में रखना होगा।।

उद्देश्य

चुनाव सुधार के संदर्भ में एक राष्ट्र एक चुनाव के विविध मत के परिवेश में चुनाव सुधार के रास्ते में आने वाली बाधाओं का अध्यन शामिल हैं साथ ही संपूर्ण भारतवर्ष में एक साथ सभी चुनाव होंगे तो उसका प्रभाव कितना अनुकूल होगा , छोटे-छोटे राजनैतिक दलो और चुनावी संसाधनों पर क्या असर होगा , साथ ही मतों में बढ़ोतरी के अध्यन भी शामिल है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत लेख के प्रमाणिक निष्कर्ष तथा आंकड़ों के संग्रहण के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के श्रोतों का सहारा लिया जा सकता है एक राष्ट्र एक चुनाव जनता के लिए के लिए किस तरह कारगर है उसके लिए जनमत प्राप्त कर तथ्यात्मक विश्लेषण किया जा सकता है।।

विषय विश्लेषण

एक राष्ट्र एक चुनाव की जो चर्चा आज सरकार द्वारा लाई गई है या जिस पर तेजी से चर्चा हो रही है खुद प्रधानमंत्री जी भी सार्वजनिक स्थानों पर इसकी चर्चा कर रहे हैं यह एक तरह से चुनाव सुधार की प्रक्रिया का ही अंग है अक्सर यह देखा जा रहा है कि भारत में आए दिन कोई ना कोई चुनाव होता जा रहा है मानने वालों का उत्तर किया है कि इससे धन एवं देश का समय तो नुकसान होता ही है इसके साथ-साथ लोगों के काम में भी लंबे दिनों तक रुकावटें आती है क्योंकि पहला आचार संहिता लग जाती है। जिसमें सभी सरकारी कामों पर प्रतिबंध लगा दिए जाते हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

दूसरा सरकारी कर्मचारी चुनावी गतिविधियों में लग जाते हैं। वह अपने कार्यालय से लंबे दिनों तक दूर रहते हैं।

बार-बार चुनाव होने से चुनावी प्रक्रिया और तंत्र भी प्रभावित हो रहे हैं इस बात को लेकर चुनाव आयोग भी सक्रिय और चिंतित दिखने लगा है एवं जनप्रतिनिधित्व कानून मे सुधार के लिए सरकार के पास कुछ सुझाव भी भेजा है जिससे उल्लेख है कि एक व्यक्ति दो जगह से चुनाव ना लड़े, देश में सांसद एवं विधानसभा के चुनाव एक साथ कराई जाए।

चुनाव में सुधार की यह बात कोई पहली बार चुनाव आयोग द्वारा नहीं उठाया गया है यदि 1974 के जयप्रकाश नारायण का संपूर्ण क्रांति आंदोलन देखा जाए तो उसके प्रमुख मांगों में एक चुनाव सुधार भी था।

परंतु हाल ही में चुनाव आयोग जो एक संवैधानिक संस्था है के तरफ से यह प्रस्ताव भेजा गया है इसलिए उसका महत्व अधिक बढ़ जाता है

चुनाव के अंदर जो भ्रष्टाचार या विसंगतियां आई है यदि उनका अध्ययन किया जाए पहला- चुनावी खर्च बहुत ज्यादा हो रहा है और चुनाव आयोग द्वारा जो राशि तय की गई है चुनाव लड़ने की वह भी आमजन के क्षमता से बाहर हो गई है।

दूसरा - कई नेता दो-दो जगह से चुनाव लड़ते हैं दोनों जगह जीतने के बाद एक जगह खाली कर देते हैं जहां दूसरी बार चुनाव कराना पड़ता है और वह ज्यादा खर्चीला होता है।

तीसरा - कॉर्पोरेट जगत द्वारा पैसे लगाकर चुनाव को प्रभावित किया जा रहा है एवं सत्ता को अपने पक्ष में करने के लिए करोड़ अरबो रुपए का चंदा दिया जा रहा है जिससे विधायक खरीदे जा रहे हैं, स्थापित सत्ता को प्रभावित किया जा रहा है। कारपोरेटीकरण भारतीय लोकतंत्र का हिस्सा बन गया है जिससे लोकतंत्र का यह ढांचा की जनता का, जनता के द्वारा, जनता के लिए, टूटता जा रहा है राजनीति में अपराधी प्रवृत्तियों की संख्या बढ़ती जा रही है इन तमाम कार्यों के बदौलत देश का एक बहुत बड़ा तबका यह चाह रहा है की संपूर्ण चुनाव एक साथ हो ,जबकि दूसरा वर्ग यह कह रहा है की संपूर्ण चुनाव एक साथ होना बेमानी है इससे पैसे वाले ही चुनाव लड़ पाएंगे, गरीब एवं कमजोर, छोटे राजनीतिक दल चुनाव नहीं लड़ पाएंगे क्योंकि इतने संसाधन एवं पैसे कहां से जुटा पाएंगे।

जो लोग कहते हैं कि एक राष्ट्र एक चुनाव होना चाहिए उनका तर्क है कि जो लोग इस बात का विरोध कर रहे हैं और कह रहे हैं कि एक राष्ट्र एक चुनाव उचित नहीं है उनका कहना केवल राजनीतिक है क्योंकि यदि च भारत के चुनावी इतिहास को देखा जाए तो 1967 तक भारत में लोकसभा एवं

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

विधानसभा के चुनाव एक साथ होते आए हैं यह तो 1969 में जब कांग्रेस पार्टी का बंटवारा सिंडिकेट और इंडिकेट में हुआ जिसमें एक कांग्रेस तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी का कांग्रेस बनी जिसे कांग्रेस आई कहा गया और दूसरा गुट कांग्रेस संगठन का था के बाद पहली बार देश में अलग-अलग चुनाव की प्रथम प्रारंभ हुई। इस्मत को मानने वालों का कहना है कि एक देश एक चुनाव हर तरह से उचित संवैधानिक एवं व्यवहारिक है क्योंकि आज चुनाव बहुत खर्चीले हो गए हैं जैसे संसदीय स्थाई समिति के अनुमानों से पता चलता है कि लोकसभा एवं विधानसभा चुनाव 2015-16 के दौरान चुनाव का कुल खर्च 4500 करोड़ था जो कल केंद्रीय बजट का लगभग 0.25 प्रतिशत और जीडीपी का 0.03% था 2024 के लोकसभा चुनाव में जो खर्च हुआ मीडिया रिपोर्ट के अनुसार वह लगभग 6000 करोड रुपए तक पहुंच गया जबकि जो राजनीतिक दल एवं प्रत्याशी अपना खर्च करते हैं वह अभी अलग है।

उनका कहना है कि एक देश एक चुनाव की प्रक्रिया चुनाव सुधार की प्रक्रिया है इससे चुनाव खर्च तो कम होंगे ही साथ ही चुनावी चंदे के नाम पर जो राजनीतिक भ्रष्टाचार हो रहा है यदि वह समाप्त नहीं होगा तो वह सिकुड़ जरूर जाएगा।

एक देश एक चुनाव वालों का सुझाव है कि

1- एक ऐसा कानून बने जिससे एक व्यक्ति एक जगह से चुनाव लड़े।
2- एक व्यक्ति 5 वर्ष तक एक ही पद पर चुनाव लड़े दूसरे पद के लिए नहीं चाहे वह हारे या जीते।
3- अगर दल बदल या मृत्यु के कारण स्थान रिक्त होता है तो जिस दल का प्रत्याशी उस क्षेत्र में चुनाव जीता है उस दल से नाम लेकर उसे नामित किया जाए ताकि मध्यावधि चुनाव ना हो।
4- सरकार गिरने के स्थिति में राज्यपाल या राष्ट्रपति शेष अवधि के लिए दलीय प्रतिनिधित्व के आधार पर राष्ट्रीय मंत्रिमंडल का गठन करें।
5- समूचे चुनाव का खर्च चुनाव आयोग द्वारा उठाया जाना चाहिए सभी प्रत्याशियों को बराबर के मात्रा में प्रचार सामग्री उपलब्ध कराया जाए।
6- ई- वेटिंग कराया जाए जिससे मत संख्या भी बढेगी और चुनाव भी आसान होंगे।

हालांकि एक प्रकार से देखा जाए तो यह सुझाव जमीन पर उतारने में या उतारने के लिए बहुत त्याग और संकल्प की जरूरत है जो अभी भारतीय राजनीति ,सत्ता और भारत के नेताओं में नहीं दिखाई दे रही है।

वही दूसरा पक्ष जो जो कह रहा है कि सभी चुनाव एक साथ नहीं होने चाहिए इससे अधिकारों का हनन होगा उनका मानना है कि राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद जी के अध्यक्षता में बनी समिति ने जो 139

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

संविधान संशोधन बिल 2024 लाई है वह कानूनी रूप ले रही है साथी चुनाव आयोग को यह अधिकार देता है कि अगर एक साथ चुनाव करना संभव नहीं हो रहा है तो राज्य चुनाव को टालने की कोशिश कर सकता है। आर्टिकल 83 172, 327, मे बदलाव का जो प्रस्ताव दिया गया है वह गंभीर संवैधानिक चिंताएं पैदा कर रहे हैं।।

संविधान सभा में डॉ अंबेडकर ने कहे है कि भारत ने जो जिम्मेदारी चुनी है उसमें राज्य सिर्फ प्रशासनिक इकाई नहीं बल्कि उनकी एक स्वतंत्र संवैधानिक पहचान है

इसके विपरीत संसद, राज्य विधानसभा, और स्थानीय निकायों के लिए अलग-अलग चुनाव एक लगातार फीडबैक मेकैनिज्म के समान है जिसमें सरकारें आम जान की संवेदनाओं पर ध्यान देती है।

संसदीय अस्थाई समिति के अनुमानों से पता चलता है कि लोकसभा राज्य विधानसभा चुनाव का कुल खर्च केंद्रीय बजट का लगभग 0.35 प्रतिशत और जीडीपी का 0.05 प्रतिशत है पी आर एस डेटा से पता चला है कि लोकसभा चुनाव का खर्च पहले जीडीपी का 0.02 प्रतिशत से 0.05 प्रतिशत (1957 से 2014)तक था। एक देश एक चुनाव के विपक्ष वालों का तर्क है कि

1- चुनाव चरणों में होता है तो वीवीपेट, इवीएम और सुरक्षा बल रोटेट करने की सुविधा होती है ,
2- एक साथ चुनाव कराने से लचीलापन समाप्त हो जाएगा।
3- महंगे एवं नये नये संसाधनों की जरूरत होगी
4- प्रशासनिक लाभ कमजोर हो जाएंगे।

इनका मानना है कि क्या जीडीपी का 1% बचाने के लिए संविधान में बदलाव करना और संघीय व्यवस्था को कमजोर करना उचित है।

एक प्रकार से एक देश एक चुनाव के विपक्ष में जो लोग हैं उनका मानना है कि एक साथ चुनाव होने से संघीय ढांचा कमजोर होगा।

निष्कर्ष

एक देश एक चुनाव और इसके विपरीत पक्ष को मानने वाले तथा इसके पक्ष को मानने वाले यदि दोनों के विचारों पर ध्यान दिया जाए तो अपने-अपने जगह पर दोनों के मत उचित है।परंतु वर्तमान चुनावी खर्च , चुनावी भ्रष्टाचार को रोकने के लिए देश में आम जनता के कामों को तेजी से करने के लिए, आम जनता के अधिकारों को समय से एवं समुचित उपलब्ध कराने के लिए, बार-बार जो चुनाव हो रहा है यह बाधा है

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

इस बाधा से बचने के लिए एक उचित मार्ग अपनाना चाहिए चुनाव आयोग को निष्पक्ष होकर भय मुक्त पक्षपात रहित होकर कार्य करना चाहिए। सर्वोच्च न्यायालय को चाहिए की शक्ति के साथ यह आदेश करें कि चुनावी खर्च सीमा के अंदर हो , कोई भी प्रत्याशी दो जगह से चुनाव नहीं लड़ेगा साथ ही कॉर्पोरेटी जगत को भारतीय लोकतंत्र से दूर रखना ही उचित होगा।

संदर्भ ग्रंथ

1.रघु ठाकुर ,स्वप्न विकल्प और मार्ग ,प्रलेख प्रकाशन, नई दिल्ली, 2024, पेज 417
2.नवभारत, नागपुर ,11 मार्च 2026, पेज -२
३.राम बहादुर राय, रहबरी के सवाल, राजकमल पेपर बैक्स, दिल्ली 2025 ,पृष्ठ 169
४.जनसत्ता, दिल्ली, 26 मई 2024, पेज 6

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

हाशिये का स्वर और किसान

शोधार्थी: स्नेहा वानखेडे

शोध निर्देशक: डॉ. गजानन पोलेनवार

शोध सारांश:

भारतीय समाज में 'हाशिये का समाज स्वतन्त्रता के बाद से एक महत्वपूर्ण अंग हो गया है। हाशिये का यह समाज केन्द्र में जाने के लिए लगातार संघर्ष कर रहा है। वर्तमान में हाशिये का समाज दो प्रकार तरह से हाशिये पर अपना जीवन यापन कर रहा है। इसमें एक वर्ग जैसे स्त्री समाज, कृषक, मजदूर, दलित, दिव्यांग एवं अल्पसंख्यक ऐसा है जो केन्द्र की मुख्यधारा से जुडा हुआ है। वहीं दूसरा वर्ग ऐसा है जो केन्द्र से बहुत दूर है जैसे आदिवासी एवं जनजातियों हैं। इनमें भी दिव्यांग, दलित और दलित स्त्रियों का जीवन और भी कठिन एवं दयनीय है। साहित्य में हाशिये के समाज के लिए जो कार्य कबीर रैदास, रामानन्द एवं हीरा डोम ने किया, उसी कड़ी में स्वामी अछूतानन्द मील का पत्थर साबित हुए हैं। इन्हें वर्तमान दलित साहित्य का पिता माना जाता है।

बिज शब्द: हाशिए का समाज, गणतन्त्र जनतन्त्र, समाजशास्त्रीय अवधारणा, स्वरूप एवं परम्परा।

हाशिए का समाज, समाज की मुख्यधारा का एक महत्वपूर्ण अंग है जो तत्कालीन परिस्थितियों के कारण हाशिए पे चला गया है। 'हाशिया' शब्द आज हमारे वर्तमान परिवेश में सामने आया, तब हमें अपने बचपन का दिन याद आया। जब हम स्कूल के शुरूआती दिनों में प्राथमिक पाठशाला में पढ़ने जाते थे तो एक लकड़ी की पट्टी पर हम लिखते थे। उस पट्टी पर मास्टर साहब हाशिए खिंचवाते थे और कहते थे कि हाशिए के बाँयी तरफ कुछ नहीं लिखना है। हाशिये के दाँयी तरफ से लिखना हम शुरू करते थे अर्थात् बाँयी तरफ का हिस्सा भी उसी पट्टी का हिस्सा है जैसे दाँयी तरफ का है किन्तु बाँयी तरफ वाला उपेक्षित है इसी प्रकार समाज में किसी कारण से समाज में जो लोग अलग या पीछे रह गये उन्हें हाशिए पर भेज दिया गया।

'हाशिए का समाज' का स्वरूप भी एक समाजशास्त्रीय अवधारणा है। समाजशास्त्र के विद्वानों ने 'हाशिए का समाज' की अवधारणाओं में जिन समस्याओं और प्रवृत्तियों का उल्लेख किया है वह महत्त्वपूर्ण है। किसी भी समाज के उन समूहों के सम्मलित समाज को हाशिये का समाज कहा गया है जो सामाजिक आर्थिक, भौगोलिक, राजनैतिक, शारीरिक, धार्मिक आदि कारणों से पीछे रह गये हैं और नये परिवेश में अपने आपको स्थापित नहीं कर पाते इसी कारण यह समाज अपने आपको हाशिये पर महसूस करता

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

है 'हाशिये का समाज' स्वतन्त्रता के बाद से भारतीय समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है। ये लोग केन्द्र में जाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। भारतीय समाज में दो प्रकार के लोग हाशिये पर अपना जीवन यापन कर रहे हैं। एक वर्ग ऐसा है जो केन्द्र के इर्द-गिर्द रह रहा है। जैसे स्त्री समाज, कृषक, मजदूर, दलित, दिव्यांग अल्पसंख्यक आदि दुसरा वर्ग ऐसा है जो केन्द्र से बहुत दूर है जैसे आदिवासी, जनजातियाँ हैं। इनमें भी दिव्यांग, दलित और दलित स्त्रीयों का जीवन और भी कठिन एवं दैयनीय है। जन्म से ही मानव का समाज में स्थान निर्धारण उसके कुल, वर्ग, लिंग के आधार पर कर दिया जाता है। इस कारण से भारतीय लोगों का "सामाजिक उत्पीड़न इतना अमानवीय हो गया था कि निम्नतम स्तर के कुछ लोगों को अछूत तथा निकृष्ट मान लिया गया था। उन पर दृष्टिपात होने भर से लोग अपवित्र हो जाते थे और जो अछूत जाने-अनजाने किसी ब्राह्मण को दिखलाई पड़ जाता था तो उसे बड़ी कड़ी सजा मिलती थी" दक्षिण भारत में तियान और पुलायन को स्पष्टतः निर्दश था कि वे नम्बुदरी ब्राह्मणों से छत्तीस और छियानबे कदम की दूरी बनाकर चलें। यहाँ तक कि अस्पृश्य जाति के लोगों को अपना घर, सवर्णों के घर से दूर और गाँव से एकदम बाहर बनाने का निर्देशा था तथा मन्दिर और गाँव की एक निश्चित सीमा के अन्दर उन्हें प्रवेश करने का अधिकार नहीं था। इस प्रकार गाँव की पूरी जाति व्यवस्था में हरिजन और दलित लोग हाशिये पर जीवन बिताने के लिए बाध्य थे यहाँ तक कि उन्हें सवर्णों के कुओं और तालाबों से पानी लेने का भी अधिकार नहीं था। इस तरह से देखा जाय तो ये लोग गाँव की इस व्यवस्था मैं हाशिए का जीवन जीने में बाध्य थे।

चौथीराम यादव -ने एक पत्रिका को दिये गये साक्षात्कार में कहते हैं कि "हाशिये के समाज से प्रायः तात्पर्य दलित समाज है, पिछड़ा समाज है, आदिवासी समाज है, किसान, मजदूर यही सब तो है हाशिये का समाज। मुझे लगता है कि जिन्हें हाशिये का समाज कहा जाता है, वे बहुसंख्यक समाज है और आबादी का हिसाब से बहुसंख्यक समाज होने के नाते मुध्यधारा का समाज है। लेकिन तमाम आर्थिक संसाधानों और शिक्षा से वंचित करके उन्हें हाशिये पर ढ़केल दिया गया है और जो हाशिये के लोग है, कम आबादी वाले लोग है, वे वर्चस्व बनाये हुए हैं और वहीं मुख्यधारा के केन्द्र में है। जिसे आज हाशिये का समाज कहा जाता है, उसे हाशिये का समाज नहीं कहा जाना चाहिए। यह मुध्य धारा का समाज है क्योंकि बहुसंख्यक समाज है और उसकी आबादी भी बहुत ज्यादा है, देश की बहुसंख्यक आबादी को हाशिये का समाज नहीं कहा जा सकता। लेकिन स्थिति यह है कि बहुत दिनों से जो शिक्षा है, आर्थिक संसाधन है, उससे वंचित करके उन्हें एक प्रकार सक हाशिये पर ढकेल दिया गया है। उस पर पढ़े-लिखे सर्चस्वशाली लोग आधिपत्य जमा चुके हैं, तो हाशिये के समाज को नए ढंग से सोचने की जरूरत है।"

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

हाशिऐ का समाज किसे कहा जाता हैं? सीधे शब्दों में कहे तो जिसे केंद्र में से बाहर निकाल दिया गया हो। हाशिए के समाज से तात्पर्य समाज में रहने वाले उस समूह या वर्ग से है जो उपेक्षित हैं या जिसे अपने अधिकारों से वंचित रखा जाता है। इस समाज में दलित, आदिवासी, स्त्री, बुजुर्ग, मजदूर, किसान को सम्मिलित किया जाता है। दलित साहित्य में, अनुमान, कल्पना तथा ईश्वरोपासना नहीं मिलेगी। दलित साहित्य को आत्मकथा, उपन्यास, कहानी, कविता, आलोचना आदि के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। जिनमें वर्ण-व्यवस्था केन्द्रित समाज की आलोचना व जातीय शोषण एवं दमन के खिलाफ आक्रोश व्यक्त किया गया है। लेखक ने निम्न विधाओं में हाशिये के समाज की बदहाल स्थिति, दमन, शोषण, संघर्ष तथा पीड़ा का यथार्थ चित्रण किया है। इसी क्रम में गीत का विकास हुआ प्रारंभ में नवगीतकारों ने जो गीत लिखे उनको प्रकृति-वर्णन, तीज-त्यौहार, प्रेम-गीत, ऋतुवर्णन आदि से जोड़ा किन्तु जब हाशिये के समाज से सम्बन्ध रखने वाले नवगीतकारों की पीढी गीत लेखन के क्षेत्र में सक्रिय हई तो नवगीत के स्वर में हाशिये के समाज से जुड़ी हुई जीवन सच्चाइयों का भी विवरण मिलना प्रारम्भ हो गया।

इस बात की गवाही खुद इतिहास देता है, जहाँ समाज का यह हाशिया केंद्र में आने के लिए संघर्ष करता रहा है। योगेन्द्र जी की पंक्तियाँ इसका जीता-जागता उदाहरण प्रस्तुत करती हैं-

"कभी गाँव में
कभी शहर में
भटक रही लाचारी
श्रम के हिस्से
रोज पसीना
लाल हुई हैं आँखें
कटी हमेशा ही नभ में
उड़ती चिड़ियों की पाँखें।"

दलित वर्ग जो सदियों से सामाजिक, आर्थिक शोषण का शिकार रहा है, इस सूची में सबसे आसानी से नज़र आने वाला वर्ग है। किंतु यह सूची यहीं खत्म नहीं हो जाती। गाँवों और शहरों की मुख्यधारा के जीवन से कटे हुए आदिवासी, न केवल भौगोलिक निवास की दृष्टि से, बल्कि सामाजिक, आर्थिक दृष्टि से सबसे अधिक वंचित वर्गों में से एक होने से समाज के भी हाशिये पर स्थित हैं। दुनिया की आधी आबादी महिलाओं की स्थिति, परिवार के पुरुष सदस्यों के साथ एक ही घर में रहते हुए भी समाज,

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

परिवार, और उसकी अपने आप से, अपने जीवन से संबंधित महत्त्वपूर्ण अधिकारों के बारे में भी हाशिये पर ही है। परिवार की संपत्ति में उसकी भागीदारी का तो सवाल ही कहाँ उठता है; जबकि वह खुद परिवार की संपत्ति की तरह समझी जाती हैं, बरती जाती हैं। प्रकृति के दुर्योग से कुछ शारीरिक कमी, अक्षमता के साथ जन्मे जुझारू, सक्षम 'डिफरेंटली एबल्ड' व्यक्तियों को शेष सधार्मिक, सांस्कृतिक दृष्टि से देश का ऐसा वर्ग जो समाज के बहुमत के कथित प्रवक्ताओं की धौंस से, किसी वास्तविक या काल्पनिक ख़तरे से, अपने जान-माल की असुरक्षा महसूस करता है या भेदभाव का शिकार होता है, वह भी समाज के हाशिये पर है। बंधुआ मजदूर, सीमांत एवं छोटे किसान, अन्य वंचित ग्रामीण पिछड़े वर्ग भी इसी श्रेणी में हैं, जिनका ज़िक्र आज न तो कोर्पोरेटीकृत आर्थिक विकास करता है और न ही राजनीतिक दृष्टि से उनकी आवाज़ सुनी जाती है। ऊपर गिनाए गए दलित, आदिवासी, बंधुआ मजदूर, विकलांग, अन्य वंचित ग्रामीण पिछड़े वर्ग, भाषायी, सांस्कृतिक और अन्य प्रकार से अल्पसंख्यक वर्ग और महिलाएँ समाज के हाशिये पर रहने वाले उस व्यापक जनसमूह के कुछ उदाहरण मात्र हैं। वास्तव में हर वह वर्ग, वे सभी व्यक्ति, जो समाज में किसी न किसी संस्थागत प्रकार के शोषण और भेदभाव के शिकार हैं, 'हाशिये के लोगों' में गिने जाने चाहिए।

भारत के संदर्भ में कुल जनसंख्या से यदि इनके प्रतिशत की गणना करें तो आप सब भी आश्चर्यचकित हो जायेंगे। विद्वानों ने इन्हें भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 85 प्रतिशत माना है। आश्चर्यजनक बात है कि जो लोग हमारे समाज की तीन चौथाई से भी कहीं अधिक जनता है, वह हाशिये पर कैसे हो सकती है ? क्या हाशिया पेज़ से भी बड़ा होता है ? सच्चाई यही है कि भारत में मात्र 15 प्रतिशत से भी कम संख्या वाले अभिजात्य वर्ग के पास पूरे देश के भाग्य का निर्णय करने की शक्ति है। देश के आर्थिक संसाधनों पर उनका कब्ज़ा है, समाज का नेतृत्व वे कर रहे हैं और राजनीतिक सत्ता और शक्ति उनके हाथों में केन्द्रित है। समाज, हाशिये पर ही रखता है।

मुट्ठी भर लोगों के इस साधनसम्पन्न वर्ग के विपरीत, समाज के हाशिये पर स्थित लोग वे लोग हैं, ऐसे सामाजिक समूह हैं जो विकास के लाभों से वंचित हैं और बहुधा विकसित लोगों के विकास की कीमत चुकाने वाले हैं। जो समाज के समांग ताने-बाने का हिस्सा नहीं बन पाए हैं, जो किसी न किसी प्रकार के भेदभाव के शिकार हैं या जो किसी न किसी प्रकार से समाज के वंचित लोग हैं। यह भेदभाव या वंचना सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, नस्लीय, सांस्कृतिक या अन्य प्रकार की हो सकती है।

भारत के इतिहास में तीन बड़ी क्रांतियाँ हुई हैं-पहली बौद्ध धर्म का उदय, दूसरी भक्ति-आंदोलन और तीसरी – भारतीय स्वाधीनता आंदोलन। यह सिर्फ संयोग नहीं, सच्चाई है कि ये तीनों क्रांतियाँ हाशिये

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

के लोगों द्वारा अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने, धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक महत्ता प्राप्त करने के लिए संघर्ष से जुड़ी हुई हैं। ये क्रांतियाँ सफल इसीलिए हुईं क्योंकि समाज के दलित-वंचित वर्गों, अल्पसंख्यकों और महिलाओं ने इसमें बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। समाज के 85 प्रतिशत लोगों की हिस्सेदारी के बिना कोई क्रांति सफल हो भी कैसे सकती है ? भेदभावकारी वर्णव्यवस्था पर पहली बड़ी चोट बौद्ध धर्म ने की, दूसरी भक्ति-आंदोलन ने और सरी और अंतिम चोट भारतीय स्वाधीनता आंदोलन ने। हज़ारों वर्षों के इसी संघर्ष का परिणाम है कि आज छुआछूत न सिर्फ कानून दंडनीय अपराध है, बल्कि इस भेदभाव के विरुद्ध व्यक्ति के अधिकार को संविधान के सर्वाधिक संरक्षणीय हिस्से 'मूल अधिकारों' में स्थान मिला है।

हाशिये के समाज की सबसे बड़ी पहचान हमेशा संकट में रहने की स्थिति में होता है। कहा जा सकता है कि यह एक ऐसी स्थिति है, जिसका अनुभव 'हाशिये के लोग' बराबर करते हैं। अपनी मूल संस्कृति और समाज के कट जाने के बाद उन्हें हमेशा इस बात का डर बना रहता है कि पता नहीं उनके ऊपर कब कौन-सा संकट आ जाए। आर्थिक और विपरित भौगोलिक परिवेश के कारण व्यक्ति स्थान परिवर्तन करता है तथा अपने आपको एक नई जगह पर व्यवस्थित करने की कोशिश, करता है, जो एक तरह से अस्थायी होता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था का यह हाशिए पर जाना नीति निर्माताओं के संगठित भाग-यानी अर्थव्यवस्था के आधुनिक भाग-पर ध्यान केंद्रित करने का परिणाम है। अर्थव्यवस्था के आधुनिकरण को पश्चिमी आधुनिकता की नकल मान लिया गया है। भारत ने ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले अधिकांश लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप अपनी आधुनिकता विकसित करने का प्रयास नहीं किया है। यही कारण है कि कृषि क्षेत्र, जो उपभोग की सबसे महत्वपूर्ण वस्तु-भोजन-प्रदान करता है, हाशिए पर चला गया है।

आजादी के बाद से नीतियां ट्रिकल-डाउन सिद्धांत पर आधारित रही हैं। यानी, आधुनिक क्षेत्र का विकास होगा और विकास के लाभ हाशिए पर पड़े वर्गों तक पहुंचेंगे। यह भी उम्मीद थी कि आधुनिक क्षेत्र का विकास पिछड़े क्षेत्र को समाहित कर लेगा पूरी अर्थव्यवस्था आधुनिक हो जाएगी। दुर्भाग्य से, ऐसा नहीं हो पाया क्योंकि आधुनिक क्षेत्र में पूंजी का बहुत अधिक उपयोग होता है, जिससे रोजगार के अवसर कम पैदा होते हैं। इस प्रकार, पिछड़े क्षेत्र के लोग वहीं फंसे रह गए हैं। साथ ही, अधिकांश आय विकसित क्षेत्रों के लोगों द्वारा अर्जित की गई है, जिससे बाकी लोगों के लिए बहुत कम लाभ बचा है। दुर्भाग्यवश, असंगठित क्षेत्र के अधिकांश हिस्से के आंकड़े स्वतंत्र रूप से उपलब्ध नहीं हैं, इसलिए इसके प्रदर्शन का आकलन संगठित क्षेत्र के प्रदर्शन के आधार पर किया जाता है। इससे आर्थिक आंकड़ों में

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

सकारात्मक रुझान दिखाई देता है, क्योंकि असंगठित क्षेत्र में स्पष्ट रूप से गिरावट आ रही है जबकि संगठित क्षेत्र में वृद्धि हो रही है। वास्तव में, भारत के आर्थिक प्रदर्शन का आकलन करने की यह विधि त्रुटिपूर्ण है और वास्तविक आर्थिक विकास का पता लगाने के लिए इसमें बदलाव की आवश्कता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था की कठिनाइयों को दूर करने के लिए विशिष्ट नीतियों की आवश्यकता नहीं है। केवल राहत के उपाय किए जाते हैं, संकट का समाधान नहीं किया जाता। संक्षेप में, ग्रामीण क्षेत्र आंकड़ों और नीतियों दोनों में अदृश्य है।

1991 में नई आर्थिक नीतियों (एनईपी) के लागू होने के साथ ही हाशिए पर धकेलने और उपनिवेशीकरण की प्रवृत्ति और भी मजबूत हो गई। ये नीतियां आधुनिकतावादी क्षेत्रों और बड़े उद्योगों के प्रति और भी अधिक झुकाव रखती हैं। 1947 से लागू पूर्व की नीतियों के विपरीत, एनईपी हाशिए पर पड़े वर्गों के लिए नाममात्र की भी सहानुभूति नहीं रखती। यहां तक कि कृषि और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए भी, वे आधुनिकरण और मशीनीकरण का प्रस्ताव करती हैं, जो ग्रामीण आबादी के विशाल बहुमत की जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता। कृषि की रोजगार लोच शून्य हो गई है और पर्याप्त गैर-कृषि रोजगारों की कमी के कारण लोग कृषि क्षेत्र में ही फंसे हुए हैं, जिसके परिणामस्वरूप व्यापक 'प्रत्यक्ष बेरोजगारी' उत्पन्न हो रही है। इससे गरीबी और बढ़ जाती है क्योंकि 'निर्भरता अनुपात' बढ़ जाता है। स्वतंत्रता के बाद से, कृषि से प्राप्त अधिशेष को कृषि स्तर पर व्यापार की प्रतिकूल शर्तों के कारण शहरीकरण और औद्योगीकरण की ओर मोड़ दिया गया है। चूंकि ये दोनों क्षेत्र महंगे हैं, इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों के लिए बहुत कम संसाधन बचते हैं, जिससे उन्हें नुकसान उठाना पड़ता है।

असंगठित क्षेत्र 94 प्रतिशत कार्यबल को रोजगार प्रदान करता है और अर्थव्यवस्था के कुल उत्पादन में 45 प्रतिशत का योगदान देता है, जिसमें से 14 प्रतिशत कृषि से आता है। इसकी उपेक्षा व्यापक अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुंचाती है। इसके परिणामस्वरूप मांग में कमी आती है, जिससे अर्थव्यवस्था की वृद्धि धीमी हो जाती है। नोटबंदी के बाद, अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर तिमाही दर तिमाही लगातार गिरती रही, जो 8 प्रतिशत से घटकर 2019-20 की चौथी तिमाही में 3.1 प्रतिशत हो गई, जो भारत में महामारी के आने से ठीक पहले की तिमाही थी। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। यदि अर्थव्यवस्था का इतना बड़ा हिस्सा हाशिए पर है, तो क्रय शक्ति कम होगी और अर्थव्यवस्था के गैर-ग्रामीण हिस्से की वृद्धि भी घटेगी। यदि संपन्नों की तुलना में गरीबों की आय बढ़ती है, तो उपभोग बढ़ेगा। गरीबों की मूलभूत आवश्यकताएं पूरी नहीं होतीं, इसलिए वे अतिरिक्त आय का उपयोग उन्हें खरीदने के लिए करेंगे जैसे कपड़े और भोजन। संपन्नों के हाथों में अतिरिक्त आय का अधिकांश भाग बचत में ही रहेगा।

जब तक इसे किसी नए उद्योग/व्यवसाय में निवेश नहीं किया जाता, तब तक इससे अतिरिक्त मांग उत्पन्न नहीं होगी।

'किसानों का स्थान पहला है चाहे वे भूमिहीन मजदूर हों या मेहनत करने वाले जमीन मालिक हों। उनके परिश्रम से ही पृथ्वी फलप्रसू और समृद्ध हुई है। मुझे इसमें सन्देह नहीं कि यदि हमें लोकतान्त्रिक स्वराज्य हासिल होता है और यदि हमने अपनी स्वतन्त्रता अहिंसा से पाई तो जरूर ऐसा ही होगा – तो उसमें किसानों के पास राजनीतिक सत्ता के साथ हर किस्म की सत्ता होनी चाहिए। किसानों को उनकी योग्य स्थिति मिलनी ही चाहिए और देश में उनकी आवाज ही सबसे ऊपर होनी चाहिए'।- महात्मा गाँधी

यह नहीं कि स्वतन्त्रता के बाद जिनके हाथों देश का नेतृत्व आया उनके मन में गाँवों के प्रति विद्वेष था या वे कृषि के महत्व को नहीं समझते थे, किन्तु भारत की पुनर्रचना की नीतियाँ बनाने में भूलें अवश्य हुईं। उनका इरादा कृषि को नजरअन्दाज करने का नहीं था किन्तु विकास का जो ढाँचा विकसित हुआ उसका स्वरूप ऐसा था जिसमें धीरे-धीरे कृषि, किसान और गाँव को हाशिये पर जाना ही था। महात्मा गाँधी के ये वाक्य आजादी के पूर्व के हैं। इससे पता चलता है कि स्वतन्त्रता संघर्ष के मुख्य नायक की स्वातंत्र्योत्तर भारत की जो कल्पना थी उसमें किसानों का क्या स्थान था। गाँधीजी ही नहीं ऐसे दूसरे मनुष्यों के कथन या लेखन को देखें तो यह समझते देर नहीं लगेगी कि राष्ट्र निर्माण की इनकी कल्पना में कृषि, किसान और गाँव की भूमिका रीढ़ की थी। जाहिर है, उनकी कल्पनाओं के अनुसार यदि भारत निर्माण की नीतियाँ बनतीं तो इस समय का आर्थिक-सामाजिक परिदृश्य बिल्कुल अलग होता। इसे देश का दुर्भाग्य कहना होगा कि विकास की हमारी नीतियों में कृषि, किसान और गाँव धीरे-धीरे हाशिये पर चले गए और उद्योग-व्यापार प्रमुख हो गए।

कहने का अर्थ यह नहीं कि स्वतन्त्रता के बाद जिनके हाथों देश का नेतृत्व आया उनके मन में गाँवों के प्रति विद्वेष था या वे कृषि के महत्व को नहीं समझते थे, किन्तु भारत की पुनर्रचना की नीतियाँ बनाने में भूलें अवश्य हुईं। उनका इरादा कृषि को नजरअन्दाज करने का नहीं था किन्तु विकास का जो ढाँचा विकसित हुआ उसका स्वरूप ऐसा था जिसमें धीरे-धीरे कृषि, किसान और गाँव को हाशिये पर जाना ही था। यहाँ तक कि कृषि की आधारभूत संरचना के लिए जो नीतियाँ बनीं और उनके अनुसार जो ढाँचे खड़े हुए उनसे भी कृषि की दुर्दशा हुई। ये ढाँचे विकास की उन नीतियों के अनुरूप थीं इसलिए कृषि का वर्चस्व बनाने की प्रकृति इनकी हो ही नहीं सकती थी। वस्तुतः ये ढाँचे प्रमुख हो गए और उनको बनाए रखने पर सरकारी महकमे का ध्यान ज्यादा केन्द्रित हुआ और जिस कृषि के लिए वे विकसित हुए वह ओझल हो गई।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

देश के आर्थिक परिदृश्य पर नजर दौड़ाएँ तो पाएँगे कि आज भी करीब 65-70 प्रतिशत आबादी कृषि पर ही निर्भर है, लेकिन अगर नीतियों के स्तर पर देखें तो यह शासन की प्राथमिकता में नहीं है। अगर 65-70 प्रतिशत आबादी इस पर निर्भर है तो नीतियों का, संसाधनों का कम से कम 65-70 प्रतिशत फोकस कृषि पर होना चाहिए। लेकिन मुख्य फोकस उद्योग है, सेवा क्षेत्र है, शेयर बाजार है, निर्यात है या इसके अलावा अन्य बड़े कारोबार हैं। यह विकास नीतियों की निरन्तरता की परिणति है। 1991 में आरम्भ उदारीकरण को कुछ लोग भारतीय कृषि के लिए मुख्य खलनायक मानते हैं। यह आंशिक रूप से ही सच हो सकता है। बेशक, आर्थिक सुधार के तीनों अंगों उदारीकरण, निजीकरण और भूमण्डलीकरण ने भारतीय कृषि को ज्यादा धक्का पहुँचाया है किन्तु यह तो उसकी स्वाभाविक परिणति है। हमारी विकास नीति में उस कृषि को लगातार नजरअन्दाज किया गया है जो भारत की परम्पराओं, यहाँ के स्वभाव, आवश्यकताओं के अनुसार लम्बे काल खण्ड में सुदृढ़ हुई थीं तथा जिसके लिए किसी दूसरे पर निर्भर रहने की कतई आवश्यकता नहीं थी।

सन्दर्भ सूची:

1. हंस, 1993 अगस्त, पाण्डेय, डॉ० मैनेजर तितली, क्या अपने 'बज्रसूची' का नाम सुना है? पृष्ठ-19
2. हंस, 1993 अगस्त, पाण्डेय, डॉ० मैनेजर तितली, क्या अपने 'बज्रसूची' का नाम सुना है? पृष्ठ-19
3. देसाई, ए०आर० भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, दिल्ली प्रगति प्रिन्टर्स, दिल्ली, 1976, पृष्ठ-196
4. Indian Society: SC. Dubey, National Book Trust, India New Delhi… Second Edition 1992, Page-57
5. 21. कुमार दीपक सं० चौबे देवेन्द्र हाशिये का वृत्तांत- आधार प्रकाशन, पंचकुला , हरियाणा, 2018, पृष्ठ-59
6. अपनी माटी पत्रिका, दलित आदिवासी विशेषांक, अंक 19 सितंबर- नवंबर 2015
7. https://eng.rurvoice.in
8. https://hindi.indiawaterportal.org/agriculture
9. मौर्य, योगेन्द्र प्रताप, चुप्पियों को तोड़ते हैं, बोधि प्रकाशन, गाजियाबाद, प्रथम संस्करण-2019.

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

हाशिये का स्वर और आदिवासी काव्य : निर्मला पुतुल के संदर्भ में

मोनिका भामकर

शोधार्थी, राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज नागपुर विद्यापीठ, नागपुर

डॉ.गजानन पोलेनवार

शोध निर्देशक, सहायक प्राध्यापक, विभाग अध्यक्ष, हिंदी विभाग,तायवाडे महाविद्यालय कोराड़ी, नागपुर, महाराष्ट्र

सारांश –

निर्मला पुतुल समकालीन हिंदी कविता के परिदृश्य में एक अत्यंत प्रभावशाली और मौलिक स्वर के रूप में उभरती हैं, जिनकी रचनाएँ अपनी विशिष्टता के कारण अलग से पहचानी जाती हैं। उनके प्रमुख काव्य संग्रह, **'नगाड़े की तरह बजते शब्द'** और **'बेघर सपने'**, उनकी गहरी आदिवासी अस्मिता और जुझारू तेवर के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इन कविताओं के केंद्र में केवल एक आदिवासी का अनुभव ही नहीं, बल्कि एक आदिवासी स्त्री की वह दोहरी पीड़ा है, जो पितृसत्तात्मक समाज और बाहरी दुनिया के शोषण के बीच पिस रही है। पुतुल की लेखनी आज के क्रूर यथार्थ को पूरी नग्नता के साथ उजागर करती है, जहाँ वे भूमंडलीकरण और पश्चिमी संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के बीच हाशिए पर धकेले गए आदिवासी समाज की व्यथा को एक नई पहचान और आवाज़ प्रदान करती हैं।

बीज शब्द – आदिवासी अस्मिता, पितृ सत्तात्मक, भूमंडलीकरण , पश्चिमी संस्कृति

वैश्वीकरण के वर्तमान युग में, सभ्यता में मशीनीकरण का स्तर अत्यधिक उन्नत है, लेकिन आदिवासी समाज का एक तबका आज भी शक्ति, सामर्थ्य और लोकमान्यताओं के कारण पिछड़ा दिखाई देता है, जबकि इन्हीं लोकमान्यताओं ने इसे बल दिया हैल लोगों ने उनकी सहजता और सरलता का फायदा उठाया और अपने जीवन की संवेदनशील परतों को खोलास आदिवासी स्त्रियाँ, एक स्त्री के रूप में अपने ही घर में दोयम दर्जे का व्यव्हार सहने को विवश हैं। उन्हें न सिर्फ लोकव्यवहार के कारण बल्कि अपनी स्त्री होने के कारण भी दंडित करना पड़ा है। उन्हें अपनी अस्मिता विद्रोही बनाती है, यह विद्रोह कहीं 'बाहामुनी' तो कहीं 'सजोनी किस्कू के रूप में सामने आता है। आदिवासी महिलाएं मार दी जाती हैं या बेच दी जाती हैं, वह अपना स्थान खोजती है। वह इसे करते हुए बेचैन हो जाती है। वह अपनी पहचान खोजने में लगी रहती है-

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

"अपनी कल्पना में हर रोज
एक ही समय में स्वयं को
हर बेचैन स्त्री तलाशती है
घर प्रेम और जाति से अलग
अपनी एक ऐसी जमीन
जो सिर्फ उसकी अपनी हो"

निर्मला पुतुल की कविताओं में स्त्री मन की अंतरात्मा और उसकी अस्मिता की खोज एक केंद्रीय विषय के रूप में उभरती है। वे अपनी रचनाओं में स्त्री होने की उस मर्मभेदी पीड़ा को रेखांकित करती हैं, जहाँ एक ओर अपनी पहचान खोने का भय है, तो दूसरी ओर एक ऐसे मुक्त आकाश की अभिलाषा है जो शब्दों की सीमाओं से परे हो। उनकी कविताएँ स्त्री के उस व्यग्र मन की उपस्थिति दर्ज कराती हैं जो अपनी सत्ता को पहचानने के लिए व्याकुल है। पुतुल यह कड़वा सच साझा करती हैं कि पारंपरिक संस्कारों के दबाव में स्त्रियाँ चुपचाप सब कुछ सहती हैं और विद्रोह को अपनी मर्यादा के विरुद्ध मानती हैं। वह एक ऐसी विवशता का वर्णन करती हैं जहाँ पुरुष प्रधान व्यवस्था में स्वयं को मात्र एक अमानत या 'धरोहर' मानकर वह अपने होंठों को सी लेती है, हालांकि आधुनिक दौर में यह सोच अब धीरे-धीरे बदल रही है और स्त्रियाँ इस जड़ता के विरुद्ध मुखर हो रही हैं।

अपनी कविताओं के माध्यम से कवयित्री उन विसंगतियों पर कड़ा प्रहार करती हैं जहाँ आदिवासी संस्कृति और प्रकृति का अभाव है। वे स्पष्ट करती हैं कि उन्हें वह शहरी चकाचौंध, मोटरगाड़ियाँ और बड़े स्टोर नहीं चाहिए जहाँ सुबह की शुरुआत मुर्गे की बांग से नहीं होती और न ही जहाँ खुला आँगन और हरियाली नसीब होती है। वे एक ऐसे जीवनसाथी या परिवेश का चुनाव करने के प्रति सचेत हैं जो 'हड़िया' और नशे में डूबा रहता हो, क्योंकि वे मानती हैं कि जीवनसाथी कोई वस्तु नहीं जिसे खराब होने पर बदला जा सके। उनकी मांग एक कर्मठ और संवेदनशील व्यक्ति की है—ऐसा व्यक्ति जिसने कभी धरती पर पेड़ न लगाए हों या श्रम न किया हो, वह उनके साथ जीवन साझा करने के योग्य नहीं है। अंततः, वे अपने पिता से प्रार्थना करती हैं कि उनका विवाह किसी दैवीय कल्पना वाले स्थान पर नहीं, बल्कि उस मानवीय धरातल पर हो जहाँ वास्तविक इंसान रहते हों और जहाँ जीवन श्रम, प्रेम और संघर्ष की स्वाभाविक लय में चलता हो।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

"उस देश में ब्याहना
जहाँ ईश्वर कम आदमी ज्यादा रहते हों
बकरी और शेर
एक घाट पानी पीते हों जहाँ
वहीं ब्याहना मुझे !"

कवयित्री निर्मला पुतुल का यह स्पष्ट मानना है कि जब एक स्त्री समाज द्वारा थोपे गए नजरिए को त्यागकर स्वयं की दृष्टि से अपना मूल्यांकन करना शुरू कर देती है, तब वह बाहरी आडंबरों और सामाजिक बेड़ियों के मानसिक दबाव से मुक्त होने की दिशा में पहला कदम बढ़ाती है। उनके अनुसार, वास्तविक स्त्री सशक्तिकरण का अर्थ केवल बाहरी स्वतंत्रता नहीं, बल्कि स्वयं को नए सिरे से गढ़ने और अपनी पहचान को पुनर्जीवित करने के अटूट आत्मविश्वास में निहित है। जो स्त्रियाँ अन्याय के विरुद्ध मुखर होती हैं और समाज की रूढ़िवादी परंपराओं को चुनौती देने का साहस रखती हैं, वही वैचारिक स्तर पर समाज में बड़े बदलाव लाने की क्षमता रखती हैं। इस परिवर्तनकारी यात्रा के लिए वे बौद्धिक चेतना, जागरूकता और ज्ञान को अनिवार्य मानती हैं। इसी वैचारिक क्रांति का आह्वान वे अपनी 'बिटिया मुर्मू' के माध्यम से करती हैं, ताकि आने वाली पीढ़ी शिक्षा और आत्म-सम्मान के बल पर अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर सके।

"उठो कि अपने अँधेरे के खिलाफ उठो
उठो अपने पीछे चल रही साजिश के खिलाफ
उठो, कि तुम जहाँ हो वहाँ से उठो
जैसे तूफान से बवण्डर उठता है
उठती है जैसी राख में दबी चिनगारी"

निर्मला पुतुल ने अपनी रचनाओं के माध्यम से कामकाजी महिलाओं, विशेषकर आदिवासी युवतियों की पहचान और उनके अस्तित्व के संकट को प्रमुखता से उभारा है। वे अपनी कविताओं में अखबार और गजरा बेचने वाली लड़कियों का चित्रण कर जीवन की कड़वी सच्चाइयों को सामने लाती हैं। उनकी दृष्टि में, जो स्त्री दुनिया को सुंदरता (गजरे) बेचती है, उसके स्वयं के सपनों में अन्य गजरा बेचने वाली स्त्रियाँ उपहास करती प्रतीत होती हैं, और अंततः वही कोमल फूल उसके हृदय में काँटों की तरह चुभने लगते हैं-

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

"गजरा बेचने वाली स्त्री
गजरा बेच रही है
वह खुद बदसूरत है
लेकिन दूसरे को सुन्दर बनाने के लिए
सुन्दरता बेच रही है
गजरा बेचने वाली स्त्री का दिल कोमल है
लेकिन पैर में बिवाइयाँ फटी हैं
उसने गजरे में पिरो रखे हैं अरमान
उसके अरमान जो फूलों में गजरे की तरह पिरोए हैं"

कवयित्री ने **'अखबार बेचती लड़की'** के माध्यम से समाज पर तीखा प्रहार किया है। उनका मानना है कि वह लड़की केवल कागज के पन्ने नहीं, बल्कि अपनी अस्मिता और अपनी आवाज़ को रोटी की खातिर नीलाम कर रही है। समाज की गिद्ध दृष्टि अखबार की खबरों में उन लड़कियों की ही तस्वीरें ढूँढती है। पुतुल इसे एक 'भद्दा मजाक' मानती हैं, क्योंकि यही दृष्टिकोण महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराधों—जैसे बलात्कार, गैंगरेप, छेड़खानी और एसिड अटैक—की जड़ है, जो उनकी गरिमा को खंडित करते हैं-

"वह नहीं जानती है कि आज की अख़बार की
ताजा खबर क्या है
वह जानती है तो वह सिर्फ यह कि
कल एक पुलिस वाले ने
भद्दा मजाक करते हुए धमकाया था
वह इस बात से अनजान है कि वह अख़बार नहीं
अपने आप को बेच रही है
क्योंकि अखबार में उस जैसी
कई लड़कियों की तस्वीर छपी है
जिससे उसका चेहरा मिलता है "

कवयित्री अब केवल सहने या मौन विरोध की पक्षधर नहीं हैं। वे चाहती हैं कि स्त्रियाँ अब अपनी सुरक्षा के लिए **'रणचंडी'** और **'दुर्गा'** का रूप धारण करना होगा l अब हाथों में चूड़ियों के स्थान पर भाला,

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

फरसा और कुल्हाड़ी जैसे हथियार होने चाहिए। महिलाओं को अपना इतिहास स्वयं रचने के लिए तैयार होना होगा।

निर्मला पुतुल का विद्रोह एकाकी नहीं है। वे **'और तुम बाँसुरी बजाते रहे'** कविता के जरिए पुरुष सत्ता और समाज की संवेदनहीनता पर सवाल उठाती हैं। जब समाज आग या संकट की चपेट में था, तब पुरुष अपनी बाँसुरी बजाने (उदासीनता) में मग्न था। अब आदिवासी महिला चेतावनी देती है कि वह इस खामोशी को स्वीकार नहीं करेगी। यदि समाज और उसका सहगामी उसकी गरिमा पर होते हमलों के विरुद्ध खड़ा नहीं होता, तो वह उस 'बाँसुरी' (प्रतीकात्मक चुप्पी या निष्क्रियता) को तोड़कर स्वयं अपनी रक्षा और न्याय के लिए खड़ी हो जाएगी।

"बस्ती में आग लगी
सब बचाने दौड़े
एक तुम थे कि
बाँसुरी बजाते रहे
बावजूद मैं चुप रही
घर के सामने से जुलूस गुजरी
जुलूस के शोर में तुम्हारी
बाँसुरी की आवाज गुम हो गई
फिर भी तुम बाँसुरी बजाते रहे
और मैं चुपचाप तुम्हें देखती रही
इस बार मैं चुप नहीं रहूँगी
छीनकर तोड़ दूंगी तुम्हारी बाँसुरी
कि देखो कि इस बार
वो मुझे उठाने आ रहे हैं।"

शोध का उद्देश्य -

इस अध्ययन का केंद्रीय उद्देश्य निर्मला पुतुल के काव्य संग्रहों के माध्यम से आदिवासी महिलाओं की अस्मिता और उनके अस्तित्व के संघर्ष को रेखांकित करना है। यह शोध भारतीय परिवेश में स्त्रियों के बहुआयामी शोषण की वास्तविक तस्वीर पेश करता है। जैसे-जैसे आदिवासी समुदायों की सामाजिक-

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

आर्थिक स्थिति जर्जर होती गई, वैसे-वैसे वहाँ की महिलाओं ने अपने चारों ओर व्याप्त प्रताड़ना की गाथा को स्वर दिया है।

यह विश्लेषण एक स्त्री के घर की बंदिशों से लेकर यौन हिंसा की भयावहता तक के सफर को दर्शाता है। विपरीत परिस्थितियों में वह अपनी जड़ों की तलाश करती है और अभावों के कारण स्वयं को विवश पाती है। बावजूद इसके, वह व्यसनों से मुक्त रहकर खेती-बाड़ी से लेकर शस्त्र संचालन (धनुष-बाण) जैसे श्रमसाध्य कार्यों में अपनी कुशलता सिद्ध करती है। जब उसके स्वाभिमान पर आंच आती है, तो वह हार मानने के बजाय 'रणचंडी' का रूप धरकर अन्यायी तत्वों का संहार करने को तत्पर हो जाती है। कवयित्री का यह विद्रोही स्वर पुरुषवादी समाज की संकीर्णता और नैतिकता पर कड़े सवाल खड़े करता है, जो आदिवासी जीवन के संघर्षों की गहराई को उजागर करने का प्रयास है।

निर्मला पुतुल के काव्य में आदिवासी स्त्री का स्वरूप

सामान्यतः आदिवासी महिलाओं को अत्यंत साहसी, कर्मठ और स्वतंत्र माना जाता है। यह धारणा प्रचलित है कि पितृसत्तात्मक समाज में उन्हें गैर-आदिवासी या दलित महिलाओं की तुलना में अधिक स्वायत्तता प्राप्त है। किंतु निर्मला पुतुल अपनी रचनाओं के माध्यम से इस मिथक को चुनौती देती हैं। वे स्पष्ट करती हैं कि 'स्त्री' होने के नाते वे भी समान रूप से उत्पीड़न और दोयम दर्जे के व्यवहार का शिकार हैं।

पुतुल के अनुसार, आदिवासी स्त्रियों का संसार घर की चारदिवारी से लेकर सुदूर क्षितिज तक विस्तृत है, जहाँ शांति के नाम पर केवल वनस्पतियों की वीरानी और दुखों का अंबार है। उनकी कविताओं की सबसे बड़ी विशेषता संथाल महिलाओं की पीड़ा, छटपटाहट और उनके कठिन संघर्षों का सजीव एवं यथार्थवादी चित्रण है। वे केवल बाहरी शोषण का ही विरोध नहीं करतीं, बल्कि आदिवासी संस्कृति के उन भीतर के नियमों और प्रथाओं पर भी प्रहार करती हैं जो संस्थागत रूप से महिलाओं के दमन को बढ़ावा देते हैं।

निष्कर्ष

अंततः यह कहा जा सकता है कि निर्मला पुतुल का काव्य आदिवासी स्त्रियों की अस्मिता का एक जीवंत दस्तावेज है। उनकी रचनाओं में इन महिलाओं के जीवन का हर पहलू—उनकी पीड़ा, छटपटाहट, संघर्ष, आशा-निराशा और अनूठी सांस्कृतिक विरासत—सहजता से मुखर हुआ है। कवयित्री उस व्यवस्था का कड़ा विरोध करती हैं जो आदिवासी महिलाओं को वस्तु बनाकर बेचने

(व्यापारीकरण) का दुस्साहस करती है और उन्हें श्रम के पारंपरिक दायरों (जैसे हल या धनुष चलाना) से दूर रखने का प्रयास करती है।

पुतुल अपनी ही बिरादरी की महिलाओं की दयनीय स्थिति को देखकर गहराई से आहत होती हैं। वे उस सामाजिक अन्याय के प्रति भी संवेदनशील हैं जहाँ चटाई बुनने वाली या झाड़ू बनाने जैसी उपयोगी कार्य करने वाली महिलाओं को समाज में दोयम दर्जे का स्थान दिया जाता है और उन्हें जमीन पर बैठने के लिए विवश किया जाता है। संक्षेप में, उनकी कविताएँ आदिवासी स्त्री के प्रति समाज के भेदभावपूर्ण और शोषक दृष्टिकोण को आईना दिखाती हैं और उनके गौरवपूर्ण अस्तित्व को पुनर्स्थापित करने का आह्वान करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

१) निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजाते हैं शब्द, भारतीय ज्ञानपीठ, 2012, पृष्ठ- 9
२) वही, पृष्ठ -51
३) वही, पृष्ठ -14
४) निर्मला पुतुल, बेघर सपने, आधार प्रकाशन, पंचकूला ,हरियाणा ,2014, पृष्ठ 33
५) वही, पृष्ठ -34
६) वही, पृष्ठ -21

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भारत के स्वतंत्रता संग्राम और राष्ट्र निर्माण में गांधी का योगदान

डॉ. गणेश ढोबळे

गांधी विचारधारा विभाग, रा.तू.म. नागपूर विद्यापीठ नागपूर

Email: ganeshdhobale14@gmail.com

सारांश :

महात्मा गांधी आधुनिक भारत के इतिहास में एक ऐसे महान नेता के रूप में प्रतिष्ठित हैं जिन्होंने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को एक नई दिशा, नई रणनीति और नैतिक आधार प्रदान किया। सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह के सिद्धांतों को राजनीतिक संघर्ष का आधार बनाकर गांधी ने औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध एक व्यापक और जनसहभागी आंदोलन का निर्माण किया। उनके नेतृत्व में असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन, नमक सत्याग्रह तथा भारत छोड़ो आंदोलन जैसे ऐतिहासिक आंदोलनों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को नई गति प्रदान की।

गांधी का योगदान केवल राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने तक सीमित नहीं था, बल्कि उन्होंने राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया को भी सामाजिक, आर्थिक और नैतिक मूल्यों से जोड़ा। ग्राम स्वराज, स्वदेशी, खादी, अस्पृश्यता उन्मूलन और साम्प्रदायिक सद्भाव जैसे उनके विचार स्वतंत्र भारत के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण आधार सिद्ध हुए। प्रस्तुत शोधपत्र भारत के स्वतंत्रता संग्राम में गांधी के योगदान तथा राष्ट्र निर्माण के संदर्भ में उनके विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द :

महात्मा गांधी, स्वतंत्रता संग्राम, सत्याग्रह, अहिंसा, राष्ट्र निर्माण, स्वदेशी, ग्राम स्वराज ।

प्रस्तावना :

भारत का स्वतंत्रता संग्राम केवल औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध राजनीतिक संघर्ष नहीं था, बल्कि यह सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन की एक व्यापक प्रक्रिया भी था। इस संघर्ष में अनेक महान नेताओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, किंतु महात्मा गांधी का स्थान विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

1915 में दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने के बाद गांधी ने भारतीय समाज की परिस्थितियों का गहन अध्ययन किया और यह अनुभव किया कि स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए केवल राजनीतिक नेतृत्व पर्याप्त नहीं है, बल्कि समाज के सभी वर्गों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है।[1] गांधी ने सत्य, अहिंसा

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

और सत्याग्रह के सिद्धांतों को संघर्ष का आधार बनाते हुए भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को व्यापक जनआंदोलन में परिवर्तित किया।

गांधी का दृष्टिकोण समग्र था। उनके लिए स्वतंत्रता केवल राजनीतिक सत्ता परिवर्तन नहीं थी, बल्कि सामाजिक समानता, आर्थिक न्याय और नैतिक मूल्यों पर आधारित राष्ट्र का निर्माण भी उतना ही आवश्यक था। इसी कारण उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन के साथ-साथ सामाजिक सुधार और आर्थिक स्वावलंबन के कार्यक्रमों को भी बढ़ावा दिया।

शोध के उद्देश्य :

1. भारत के स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गांधी की भूमिका का अध्ययन करना।
2. गांधी द्वारा संचालित प्रमुख आंदोलनों के ऐतिहासिक महत्व का विश्लेषण करना।
3. राष्ट्र निर्माण के संदर्भ में गांधी के सामाजिक और आर्थिक विचारों का अध्ययन करना।
4. वर्तमान समय में गांधीवादी विचारों की प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

परिकल्पना :

1. महात्मा गांधी के नेतृत्व ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को व्यापक जनआंदोलन का स्वरूप प्रदान किया।
2. सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों ने स्वतंत्रता संग्राम को नैतिक वैधता प्रदान की।
3. गांधी के सामाजिक और आर्थिक विचार राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण आधार सिद्ध हुए।

शोध पद्धति :

यह शोध मुख्यतः ऐतिहासिक तथा विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। अध्ययन के लिए गांधी के मूल लेखन, ऐतिहासिक दस्तावेज, शोध पुस्तकों और अकादमिक जर्नल लेखों का प्राथमिक स्त्रोत के रुप में उपयोग किया गया है।

इस शोध में द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम से गांधी के विचारों, आंदोलनों और राष्ट्र निर्माण संबंधी दृष्टिकोण का विश्लेषण किया गया है।

मुख्य विवेचन :

महात्मा गांधी के राजनीतिक दर्शन का मूल आधार सत्य और अहिंसा का सिद्धांत था। गांधी के अनुसार सत्य केवल नैतिक मूल्य नहीं बल्कि जीवन का सर्वोच्च सिद्धांत है, और अहिंसा सत्य की प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन है। उन्होंने "सत्याग्रह" को अन्याय और दमन के विरुद्ध नैतिक प्रतिरोध की

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

एक ऐसी पद्धति के रूप में विकसित किया जिसमें हिंसा का स्थान नहीं होता। गांधी का विश्वास था कि यदि संघर्ष सत्य और नैतिकता पर आधारित हो तो वह अंततः अन्यायपूर्ण सत्ता को पराजित कर सकता है।[1]

गांधी ने सत्याग्रह को केवल राजनीतिक हथियार के रूप में नहीं देखा, बल्कि इसे सामाजिक परिवर्तन की एक प्रभावी पद्धति माना। उनके अनुसार सत्याग्रह का उद्देश्य विरोधी को पराजित करना नहीं बल्कि उसके हृदय परिवर्तन के माध्यम से न्याय की स्थापना करना है। यही कारण है कि गांधी का आंदोलन नैतिक शक्ति पर आधारित था और उसने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को विश्व स्तर पर नैतिक वैधता प्रदान की।[2]

भारत में गांधी के नेतृत्व में पहला महत्वपूर्ण आंदोलन 1917 का चंपारण सत्याग्रह था। बिहार के चंपारण जिले में अंग्रेजी नीलहे किसानों पर अत्यधिक शोषण और अन्यायपूर्ण कर प्रणाली थोपते थे। गांधी ने किसानों की समस्याओं का प्रत्यक्ष अध्ययन किया और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए सत्याग्रह का मार्ग अपनाया। इस आंदोलन के परिणामस्वरूप ब्रिटिश सरकार को किसानों की मांगों को स्वीकार करना पड़ा।[3]

चंपारण सत्याग्रह ने भारतीय राजनीति में एक नई दिशा प्रदान की क्योंकि यह पहली बार था जब किसी राष्ट्रीय नेता ने ग्रामीण किसानों की समस्याओं को राष्ट्रीय आंदोलन के केंद्र में रखा। इसके बाद 1918 में खेड़ा सत्याग्रह हुआ जिसमें गुजरात के किसानों ने अकाल और आर्थिक संकट के कारण कर माफी की मांग की। गांधी के नेतृत्व में किसानों ने शांतिपूर्ण प्रतिरोध किया और अंततः सरकार को कर वसूली स्थगित करनी पड़ी। इन आंदोलनों ने गांधी को भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के एक प्रभावशाली नेता के रूप में स्थापित किया।[4]

1920 में गांधी ने असहयोग आंदोलन का प्रारंभ किया जो भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का एक महत्वपूर्ण चरण था। इस आंदोलन का उद्देश्य ब्रिटिश शासन के साथ सहयोग समाप्त करके औपनिवेशिक सत्ता को कमजोर करना था। गांधी ने भारतीयों से विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करने, सरकारी विद्यालयों और अदालतों से त्यागपत्र देने तथा स्वदेशी संस्थाओं को अपनाने का आह्वान किया।[5]

असहयोग आंदोलन की विशेषता यह थी कि इसमें समाज के विभिन्न वर्गों—किसानों, मजदूरों, छात्रों और महिलाओं—की व्यापक भागीदारी हुई। इस आंदोलन ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

अभूतपूर्व जनसमर्थन प्रदान किया और ब्रिटिश शासन की वैधता को गंभीर चुनौती दी। यद्यपि चौरी-चौरा की घटना के बाद गांधी ने आंदोलन को स्थगित कर दिया, फिर भी इस आंदोलन ने भारतीय जनता में राष्ट्रीय चेतना को सुदृढ़ किया।[6]

1930 में गांधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन की शुरुआत की जिसका सबसे प्रसिद्ध चरण नमक सत्याग्रह था। ब्रिटिश सरकार द्वारा लगाए गए नमक कर का विरोध करने के लिए गांधी ने साबरमती आश्रम से दांडी तक लगभग 240 मील की ऐतिहासिक यात्रा की। इस यात्रा के माध्यम से उन्होंने नमक कानून का उल्लंघन किया और यह संदेश दिया कि औपनिवेशिक कानून अन्यायपूर्ण हैं और उनका शांतिपूर्ण प्रतिरोध आवश्यक है।[7]

नमक सत्याग्रह ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर व्यापक ध्यान दिलाया। यह आंदोलन प्रतीकात्मक होने के बावजूद अत्यंत प्रभावशाली था क्योंकि इसने आम जनता को औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध सक्रिय प्रतिरोध के लिए प्रेरित किया। इस आंदोलन के परिणामस्वरूप हजारों लोगों को गिरफ्तार किया गया, किंतु इससे राष्ट्रीय आंदोलन की गति और अधिक तेज हो गई।[8]

1942 में गांधी ने भारत छोड़ो आंदोलन का आह्वान किया जो भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का अंतिम और निर्णायक चरण माना जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध की परिस्थितियों में गांधी और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने ब्रिटिश शासन से तत्काल भारत छोड़ने की मांग की। इस आंदोलन के दौरान गांधी ने प्रसिद्ध नारा दिया—"करो या मरो।"[9]

हालाँकि आंदोलन की शुरुआत में ही गांधी और अन्य प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया, फिर भी पूरे देश में व्यापक जनआंदोलन शुरू हो गया। छात्रों, मजदूरों और किसानों ने इस आंदोलन में सक्रिय भागीदारी की। भारत छोड़ो आंदोलन ने ब्रिटिश शासन को यह स्पष्ट संदेश दिया कि अब भारत में औपनिवेशिक शासन को बनाए रखना संभव नहीं है।[10]

महात्मा गांधी का दृष्टिकोण केवल स्वतंत्रता प्राप्ति तक सीमित नहीं था, बल्कि वे स्वतंत्र भारत के नैतिक और सामाजिक पुनर्निर्माण के पक्षधर थे। उन्होंने अस्पृश्यता के उन्मूलन, महिला सशक्तिकरण और सामाजिक समानता के लिए अनेक अभियान चलाए। गांधी का मानना था कि जब तक भारतीय समाज सामाजिक भेदभाव और असमानता से मुक्त नहीं होगा तब तक वास्तविक स्वतंत्रता संभव नहीं है।[11]

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

गांधी ने आर्थिक क्षेत्र में स्वदेशी और खादी के सिद्धांत को बढ़ावा दिया। उनका विश्वास था कि भारत की आर्थिक समस्याओं का समाधान स्थानीय उद्योगों और ग्राम आधारित अर्थव्यवस्था के विकास में निहित है। इसी कारण उन्होंने चरखा और खादी को आत्मनिर्भरता तथा स्वाभिमान का प्रतीक बनाया।

राष्ट्र निर्माण के संदर्भ में खादी का महत्व केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका सामाजिक और नैतिक पक्ष भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। खादी ने समाज में समानता और सादगी के मूल्यों को बढ़ावा दिया। गांधीजी के अनुसार खादी पहनना केवल कपड़े पहनना नहीं, बल्कि श्रम का सम्मान करना और समाज के कमजोर वर्गों के साथ एकात्मता प्रकट करना है। इस प्रकार खादी ने सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने में योगदान दिया।

खादी भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में अत्यंत महत्वपूर्ण प्रतीक रही है। महात्मा गांधी ने खादी को केवल वस्त्र के रूप में नहीं, बल्कि आर्थिक, सामाजिक और नैतिक पुनर्निर्माण के साधन के रूप में देखा। उनके अनुसार भारत की अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती थी और वहां बेरोजगारी तथा गरीबी व्यापक थी। ऐसे में खादी उत्पादन एक ऐसा माध्यम बन सकता था, जो ग्रामीण लोगों को रोजगार प्रदान कर सके और उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बना सके। इसलिए गांधीजी ने चरखा चलाने और खादी पहनने को एक राष्ट्रीय कर्तव्य के रूप में प्रस्तुत किया।
इसके अतिरिक्त गांधी की ग्राम स्वराज की अवधारणा राष्ट्र निर्माण का एक महत्वपूर्ण आधार थी। उनके अनुसार भारत की वास्तविक शक्ति उसके गांवों में निहित है, इसलिए ग्रामीण समाज को आत्मनिर्भर और सशक्त बनाना आवश्यक है। इस प्रकार गांधी का राष्ट्र निर्माण संबंधी दृष्टिकोण राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक—तीनों स्तरों पर व्यापक और समग्र था।[12]

वर्तमान समय में भी खादी की प्रासंगिकता बनी हुई है। भारत सरकार और खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग द्वारा खादी उद्योग को प्रोत्साहित किया जा रहा है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ रहे हैं। इसके साथ ही खादी पर्यावरण के अनुकूल और टिकाऊ वस्त्र होने के कारण आज के शाश्वत विकास के संदर्भ में भी महत्वपूर्ण बन गई है। खादी केवल एक वस्त्र नहीं है, बल्कि यह स्वदेशी, आत्मनिर्भरता, सामाजिक समानता और ग्रामीण विकास का प्रतीक है। महात्मा गांधीं के विचारों के अनुसार खादी आज भी राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में एक प्रभावी और प्रेरणादायक माध्यम के रूप में कार्य कर रही है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

निष्कर्ष :

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि महात्मा गांधी ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को केवल राजनीतिक आंदोलन के रूप में नहीं, बल्कि एक व्यापक सामाजिक, आर्थिक और नैतिक परिवर्तन के रूप में रूपांतरित किया। उनके द्वारा प्रतिपादित सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह के सिद्धांतों ने न केवल स्वतंत्रता संघर्ष को एक नई दिशा दी, बल्कि उसे नैतिक वैधता भी प्रदान की। गांधी के नेतृत्व में चलाए गए विभिन्न आंदोलनों—जैसे चंपारण सत्याग्रह, असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन और भारत छोड़ो आंदोलन ने भारतीय जनता को एकजुट किया और स्वतंत्रता प्राप्ति की प्रक्रिया को तीव्र किया।

गांधी का योगदान स्वतंत्रता प्राप्ति तक सीमित नहीं था, बल्कि उन्होंने राष्ट्र निर्माण के लिए भी एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। ग्राम स्वराज, स्वदेशी, खादी, सामाजिक समानता और साम्प्रदायिक सद्भाव जैसे उनके विचार आज भी प्रासंगिक हैं। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि वास्तविक स्वतंत्रता तभी संभव है जब समाज के सभी वर्गों को समान अवसर मिले और आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा दिया जाए।

वर्तमान संदर्भ में भी गांधीवादी विचारों की उपयोगिता बनी हुई है, विशेषकर सतत विकास, सामाजिक समरसता और नैतिक राजनीति के क्षेत्र में। खादी और ग्रामोद्योग जैसे माध्यम आज भी आत्मनिर्भरता और रोजगार सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि महात्मा गांधी के विचार और कार्य न केवल इतिहास का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, बल्कि वे आज और भविष्य के भारत के लिए भी मार्गदर्शक सिद्ध होते रहेंगे।

संदर्भ सूची :

1.गांधी, मोहनदास करमचंद.,*सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा*, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 2019, पृ. 112–115.

2.गांधी, मोहनदास करमचंद., *हिंद स्वराज*, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 2018, पृ. 54–60.

3.तेंदुलकर, डी. जी., *महात्मा: जीवन और कार्य* (खंड 2), प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2016, पृ. 45–52.

4.चंद्र, बिपिन., *भारत का स्वतंत्रता संग्राम*, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली

विश्वविद्यालय, 2017, पृ. 98–105.

5.चंद्र, बिपिन., *आधुनिक भारत का इतिहास*, ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली, 2018, पृ. 210–215.

6.स्पीयर, पर्सिवल., *भारत का इतिहास* (हिंदी अनुवाद), पेंगुइन बुक्स, नई दिल्ली, 2015, पृ. 332–336.

7.Brown, Judith M., *Gandhi: Prisoner of Hope*, Yale University Press, 1991, pp. 210–218.

8.Fischer, Louis., *The Life of Mahatma Gandhi* , HarperCollins, 2001, pp. 278–285.

9.Chandra, Bipan., *India's Struggle for Independence*, Penguin Books, New Delhi, 1989, pp. 450–455.

10.Sarkar, Sumit., *Modern India 1885–1947*, Macmillan, New Delhi, 2019, pp. 410–420.

11.Gandhi, M. K., *Constructive Programme: Its Meaning and Place*, Navajivan Publishing House, Ahmedabad, 2018, pp. 35–40.

12.कुमारप्पा, जे. सी,. *गांधीवादी अर्थशास्त्र* (हिंदी अनुवाद), सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 2016, पृ. 67–75.

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

मालती जोशी के कथा साहित्य में स्त्री विमर्श

सुश्री नम्रता जोसफ

सहायक प्राध्यापक , (हिंदी विभाग), हिस्लॉप कॉलेज, नागपुर

namrata.joseph1980@gmail.com

सारांश

वैश्विक संरचना में स्त्री को ईश्वर की बनायी हुई सर्वश्रेष्ठ और अत्यंत महत्त्वपूर्ण रचना माना गया है। सृष्टि के क्रम में नारी का स्थान अत्यंत विशिष्ट और गरिमामय है, क्योंकि वह केवल जीवन की जननी ही नहीं, बल्कि परिवार, समाज और राष्ट्र के निर्माण की आधारशिला भी है। मानव सभ्यता के विकास में नारी की भूमिका अनिवार्य रही है। चाहे वह अबला के रूप में त्याग, सहनशीलता और ममता का प्रतीक हो या सबला के रूप में साहस, संघर्ष और नेतृत्व का उदाहरण—दोनों ही रूपों में नारी का अस्तित्व समाज के लिए अत्यंत आवश्यक है।

वास्तव में विधाता ने स्त्री को अनेक दिव्य गुणों से विभूषित किया है। श्रद्धा, निष्ठा, व्रतपालन, करुणा, संवेदनशीलता, हृदय की दृढ़ता और कोमलता—ये सभी गुण उसमें स्वाभाविक रूप से विद्यमान होते हैं। समय आने पर वही नारी अत्यंत कठोर और साहसी भी बन जाती है। इसी कारण वह परिवार की धुरी मानी जाती है। परमात्मा ने नारी को तीव्र बुद्धि, अपार सहृदयता और असीम सौहार्द की गरिमामयी प्रतिमा बनाकर संसार में भेजा है, ताकि वह प्रेम, समर्पण और संतुलन के माध्यम से जीवन को सार्थक बना सके।

निस्संदेह परिवार, समाज और राष्ट्र के उत्थान के लिए नारी का सर्वांगीण योगदान अत्यंत आवश्यक है। जिस प्रकार बिना सुनियोजित संविधान के राजनीति सफल नहीं हो सकती, बिना उद्देश्य के धन व्यर्थ सिद्ध होता है, बिना आत्मिक स्थिरता के सुख फीका पड़ जाता है, बिना ज्ञान के चरित्र अपरिपक्व रह जाता है, बिना धैर्य के व्यापार असफल हो जाता है, बिना मानवता के विज्ञान विनाशकारी बन जाता है और बिना भावना के पूजा अर्थहीन हो जाती है—उसी प्रकार नारी के सहयोग और सहभागिता के बिना किसी भी समाज या राष्ट्र की उन्नति स्थायी और संतुलित नहीं हो सकती। इसलिए नारी को सम्मान, अधिकार और अवसर प्रदान करना मानव समाज की उन्नति के लिए अत्यंत आवश्यक है।

शब्द – स्त्री, नारी, सहयोग, परिवार, समाज , साहस

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

भूमिका

हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श एक महत्त्वपूर्ण विमर्श के रूप में स्थापित हो चुका है। यह केवल स्त्री की पीड़ा या संघर्ष का वर्णन मात्र नहीं है, बल्कि उसके आत्मसम्मान, अधिकार, स्वायत्तता और सामाजिक पहचान की स्थापना का प्रयास भी है। आधुनिक हिंदी कथा-साहित्य में अनेक साहित्यकारों ने स्त्री जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और आकांक्षाओं को अपनी रचनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। इन्हीं साहित्यकारों में मालती जोशी का नाम अत्यंत सम्मान के साथ लिया जाता है। उन्होंने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से भारतीय मध्यवर्गीय स्त्री के जीवन, उसकी संवेदनाओं, सामाजिक बंधनों तथा उसके आत्मसंघर्ष को अत्यंत सहज और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है।

मालती जोशी का कथा-साहित्य मुख्यतः परिवार, संबंधों और मानवीय संवेदनाओं के इर्द-गिर्द घूमता है। उनकी रचनाओं में स्त्री-जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है, जिसमें परंपरा और आधुनिकता के बीच संघर्ष करती हुई स्त्री का व्यक्तित्व उभरकर सामने आता है। इस प्रकार उनके कथा-साहित्य में स्त्री-विमर्श एक सशक्त रूप में प्रकट होता है।

स्त्री-विमर्श की अवधारणा

स्त्री-विमर्श का आशय स्त्री के अस्तित्व, अधिकारों, स्वतंत्रता और समानता से जुड़ी समस्याओं तथा संभावनाओं पर विचार करना है। मृणाल पण्डे के अनुसार "विचार करना है तो स्त्री के सन्दर्भ में नहीं उसकी शक्ति के सन्दर्भ में भी विचार करना होगा क्यूंकि मूलतः जो पीड़ा है वह शक्ति के असंतुलन वितरण से उपजीविभिन्न प्रकार की विसंगतियों एवं कष्टों को लेकर है |"1 हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श का उद्देश्य स्त्री को पुरुष के समकक्ष स्थापित करना तथा उसके अनुभवों और संवेदनाओं को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्रदान करना है। उसके दोयम दर्जे की भूमिका को हटाकर परिवार में समाज में उसे वह सम्मान दिया जाना चाहिए जिसकी वो हक़दार है |

मालती जोशी का कथा-साहित्य इसी स्त्री-अस्मिता और आत्मसम्मान की स्थापना का साहित्यिक दस्तावेज कहा जा सकता है। नारी समाज की आधारभूत संरचना का अत्यंत महत्वपूर्ण घटक है । जिस प्रकार पुरुष समाज के संचालन के लिए अनिवार्य है, उसी प्रकार स्त्री का अस्तित्व भी उतना ही आवश्यक और सार्थक है। वास्तव में, सृष्टि के उद्भव और निरंतरता के केंद्र में नारी की भूमिका निहित है। पुरुष और स्त्री दोनों ही सामाजिक संरचना के ऐसे दो स्तंभ हैं, जिनके संतुलन और सामंजस्य पर ही समाज की स्थिरता निर्भर करती है। इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि दोनों का संबंध रथ

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

के दो पहियों के समान है—यदि इनमें से एक भी कमजोर या असंतुलित हो जाए, तो संपूर्ण व्यवस्था प्रभावित हो जाती है और अंततः उसका अस्तित्व संकट में पड़ जाता है।

भारतीय सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो पारिवारिक और सामाजिक व्यवस्थाओं ने नारी को लंबे समय तक परंपराओं और बंधनों में जकड़कर रखा है। डॉ. संदीप रणभिरकर के अनुसार –"स्त्री विमर्श स्त्री के स्वयं की स्थिति के बारे में सोचने और निर्णय करने का विमर्श है | सदियों से होते आये शोषण और दमन के प्रति स्त्री चेतन ने ही स्त्री विमर्श को जन्म दिया है |"2 उसे अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं से अधिक दूसरों की अपेक्षाओं को पूर्ण करने के लिए प्रेरित किया गया। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने नारी की इस पीड़ादायक स्थिति को अत्यंत मार्मिक शब्दों में अभिव्यक्त किया है, जहाँ उन्होंने नारी के जीवन को त्याग, करुणा और सहनशीलता का प्रतीक बताया है। यह चित्रण इस बात को रेखांकित करता है कि नारी ने अपने भीतर की संवेदनाओं और संघर्षों को सदैव दबाकर रखा है।

इतिहास साक्षी है कि भारतीय नारी को अक्सर केवल पुरुष की आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन समझा गया। उसकी पहचान को उसके बाह्य रूप-सौंदर्य तक सीमित कर दिया गया, जबकि उसके आंतरिक व्यक्तित्व, भावनात्मक गहराई और बौद्धिक क्षमताओं को पर्याप्त महत्व नहीं दिया गया। नारी के मनोविश्व को समझने और उसकी समस्याओं को पहचानने का प्रयास बहुत कम हुआ। परिणामस्वरूप, उसके जीवन में अनेक प्रकार की जटिलताएँ और चुनौतियाँ उत्पन्न हुईं, जिन्होंने उसे मानसिक और सामाजिक रूप से पीड़ित किया।

यह भी उल्लेखनीय है कि नारी के समक्ष उपस्थित अनेक समस्याएँ नयी नहीं हैं, बल्कि उनका अस्तित्व प्राचीन काल से ही बना हुआ है। अंतर केवल इतना है कि पूर्वकाल में इन समस्याओं को सामाजिक मर्यादा और नारी धर्म के रूप में स्वीकार कर लिया जाता था, जबकि आज की जागरूक नारी उन्हें प्रश्नांकित कर रही है और अपने अधिकारों के प्रति सजग हो रही है। इस प्रकार, वर्तमान समय में नारी विमर्श का उद्देश्य केवल उसकी समस्याओं का निरूपण करना नहीं, बल्कि उसके अस्तित्व, अस्मिता और समान अधिकारों की स्थापना करना भी है।

मालती जोशी का कथा-साहित्य में नारियों का चित्रण

मालती जोशी हिंदी कथा-साहित्य की लोकप्रिय और संवेदनशील लेखिका हैं। उन्होंने मुख्यतः कहानियों और उपन्यासों के माध्यम से भारतीय मध्यवर्गीय समाज का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। उनकी भाषा सरल, सहज और संवादप्रधान है, जिसके कारण उनकी रचनाएँ पाठकों के हृदय तक सीधे

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

पहुँचती हैं। उनकी कहानियों में पारिवारिक संबंध, स्त्री-पुरुष संबंध, सामाजिक मूल्य, नैतिकता तथा मानवीय संवेदनाएँ प्रमुख विषय के रूप में उपस्थित हैं। मालती जोशी की विशेषता यह है कि वे स्त्री के संघर्ष को अत्यधिक उग्र या विद्रोही रूप में प्रस्तुत करने के बजाय संवेदनात्मक और संतुलित दृष्टि से चित्रित करती हैं।

मालती जोशी के कथा-साहित्य में स्त्री की पारिवारिक भूमिका

मालती जोशी की कहानियों में स्त्री को परिवार की धुरी के रूप में चित्रित किया गया है। भारतीय समाज में स्त्री को परंपरागत रूप से परिवार की संरक्षक और संबंधों को जोड़ने वाली शक्ति माना जाता है। उनकी कहानियों में यह सत्य स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उनकी नायिकाएँ परिवार के प्रति समर्पित होते हुए भी अपने आत्मसम्मान और स्वाभिमान को बनाए रखती हैं। वे परिवार के सुख-दुख में सहभागी होती हैं और अपने धैर्य, त्याग तथा समझदारी के माध्यम से परिवार को एकजुट रखने का प्रयास करती हैं। मालती जोशी की स्त्री पात्रों में सहनशीलता और संवेदनशीलता के साथ-साथ आत्मगौरव की भावना भी विद्यमान रहती है। यही कारण है कि वे अन्याय और अपमान को चुपचाप सहने के बजाय उचित समय पर उसका प्रतिरोध भी करती हैं।

आजकल हम देखते है कि परिवार के सदस्यों में अधिक तर स्वार्थी भाव निर्माण हो रहा है। विषम परिस्थिती का परिणाम व्यक्ति की मानसिकता पर पड़ रहा है। इसका परिणाम व्यक्ति स्वार्थी बनता जा रहा है। पारिवारिक रिश्तेदारों में स्वार्थी भाव निर्माण हो रहा है। व्यक्ति आत्मकेंद्रित बनता जा रहा है। 'मैं' और 'मेरा' के इर्द-गिर्द वह घूम रहा है। इसी स्वाभाविकता के कारण रिश्तों में भी दरार पड़ रही है। आर्थिक दबाव तथा स्वार्थ ने रिश्तों की आत्मीयता समाप्त कर दी है। पारिवारिक परिजनों की बढ़ती हुई इसी स्वार्थ वृत्ति की समस्याओं को मालती जोशीजी ने स्वयंवर,सती, शुभकामना, दंभ के घेरे, आखिरी सौगात, बोल री कठपुतली, कोउ न जाननहार, मोरी रंग दी चुनरिया, यातनाचक्र, अनब्याही पीर, गणित, रेतमहल आदि कहानियों में चित्रित किया है। 'स्वयंवर' कहानी की 'प्रभा' अपने परिवार के लिए इतना समर्पण करती है, फिर भी पारिवारिक स्वार्थता के हेतु उसके साथ आर्थिक शोषण ही होता है। छोटी बहन और भाई को पढ़ाती है। कम उम्र में परिवार का बोझ उठाने के बावजूद प्रभा को अपना जीवन ही बोझ लगने लगता है। 'सती' कहानी की 'कांता' भी आर्थिक दृष्टि से शोषित नारी है। पति की मृत्यु के बाद तुरंत नौकरी लग जाने पर पहली तनख्वाह उसे अपने ससुर के हाथ थमानी पड़ती है। पुत्र वियोग का दुख भूलकर उसकी सास कांता के हाथ से तनख्वाह का लिफाफा छीनकर नोट गिनने बैठ जाती है। जो सुबह में विधवा बहू का मुँह देखना अशुभ मानती है, लेकिन हर महिने बहु की हाथ से

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

उसकी तनख्वाह झपट लेते समय उसे कोई झिझक नहीं होती। इस तरह से विधवा कांता का उसके ही पारिवारिक सदस्यों द्वारा आर्थिक शोषण होता है |

स्त्री की अस्मिता और आत्मसम्मान

मालती जोशी के कथा-साहित्य में स्त्री-अस्मिता का प्रश्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण रूप में उभरता है। उनकी कहानियों में स्त्री केवल गृहस्थी तक सीमित रहने वाली प्राणी नहीं है, बल्कि वह अपनी पहचान और आत्मसम्मान के प्रति भी सजग है। उनकी कई कहानियों में यह स्पष्ट दिखाई देता है कि स्त्री अपने अधिकारों और स्वाभिमान की रक्षा के लिए संघर्ष करती है। वह परिस्थितियों से समझौता तो करती है, परंतु अपने आत्मसम्मान को कभी भी तिलांजलि नहीं देती।

आलोचक डॉ. रामचंद्र तिवारी के अनुसार – मालती जोशी की कहानियों में स्त्री पात्र अपनी गरिमा और आत्मसम्मान को कभी भी तिलांजलि नहीं देती |

"रानियाँ" कहानी की नायिका मन से शरीर से इतनी टूट गयी है कि वह सुन्दर नारी नहीं बन सकती इसी वजह से कुमारजी का इस तरह का बर्ताव देखकर वंदना का मन आक्रोश से लबालब हो गया था | उसने तय कर लिया था कि कुमार का सामना होते ही वह उसे कहेगी कि " जनाब, हम बीसवी सदी के अंतिम छोर पर खड़े है | तुम कोई मध्ययुगीन सामंत नहीं हो की रानियों की एक फ़ौज पाल लोगे | एक जो तुम्हारे लिए वारिस पैदा करे, एक जो तुम्हारा मनोरंजन करे और एक जो तुम्हे राजकाज में मदद दे | और आज की नारी तो इतनी सक्षम है कि वह एक साथ ये साड़ी भूमिकाएं निभा सकती है | वह एक ही समय तुम्हारी गृहिणी भी हो सकती है, सखी भी और सचिव भी | पर उसे मौका तो दो |"3

मध्यवर्गीय स्त्री का यथार्थ चित्रण

मालती जोशी की अधिकांश कहानियाँ मध्यवर्गीय समाज की पृष्ठभूमि में लिखी गई हैं। मध्यवर्गीय स्त्री के जीवन में आर्थिक सीमाएँ, सामाजिक मर्यादाएँ और पारिवारिक दायित्व अत्यधिक होते हैं। लेखिका ने इन परिस्थितियों में जी रही स्त्री की मनोवैज्ञानिक स्थिति का अत्यंत सूक्ष्म चित्रण किया है। उनकी नायिकाएँ एक ओर परिवार की जिम्मेदारियों को निभाती हैं, तो दूसरी ओर अपने सपनों और आकांक्षाओं को भी संजोकर रखती हैं। यह यथार्थ चित्रण ही मालती जोशी की कहानियों को विशेष महत्त्व प्रदान करता है। उनके कथा-साहित्य में स्त्री के जीवन का ऐसा सजीव और प्रामाणिक चित्र मिलता है जो पाठकों को अपनी वास्तविकता से जुड़ा हुआ प्रतीत होता है।

छोटी बेटी का भाग्य इस कहानी की नायिका मध्यम वर्गीय परिवार की आर्थिक विषमता एवं दहेज़ के आभाव में मजबूरन एक टाइप राइटर लड़के से उम्र के सत्ताईसवें वसंत में शादी करनी पड़ती है

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

| उस व्यक्ति की गाड़ी खींचते खींचते वह अक्सर हांफ उठती थी | " धुआंती रसोई में खाना बनाते समय, फटे कपड़ों को रफू करते हुए या जले बर्तनों को रगड़ते हुए उसे अक्सर प्रोफेसर शर्मा की जमी-जमायी गृहस्थी याद आती है |"4

परंपरा और आधुनिकता का द्वंद्व

मालती जोशी के कथा-साहित्य में स्त्री जीवन का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष परंपरा और आधुनिकता के बीच संघर्ष का भी है। भारतीय समाज में स्त्री परंपरागत मूल्यों और सामाजिक मर्यादाओं से बंधी रहती है, जबकि आधुनिक शिक्षा और परिवेश उसे स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय की ओर प्रेरित करते हैं। लेखिका ने इस द्वंद्व को अत्यंत संतुलित और यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। उनकी नायिकाएँ न तो पूर्णतः परंपरावादी हैं और न ही अत्यधिक आधुनिकतावादी। वे दोनों के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करती हैं।

कोख का दर्प कहानी में आधुनिक बहू के कारण बाबूजी परेशान थे | उसके कटे बाल, लाल होठ, बढे हुए नाख़ून, खुले ब्लाउज, ऊँचे जूते, पति को नाम से पुकारना इसी वजह से बाबूजी का खून जलता था | किशोर ने भी पैसे भेजने का वादा किया और ऐसा चला गया की उसे न तो माँ – बाप से कुछ लेना-देना है न टूटते घर से | उसकी दुनिया अब अलग ही थी | आखिरी शर्त कहानी में परंपरा और आधुनिकता के बीच के द्वन्द को बताया गया है 'मम्मी पापा के संबोधन के अतिरिक्त कुछ बदलाव नहीं हुआ | उस समय अम्मा बब्ज्जी कहा करते थे की लड़की को बी. ए. लड़का कहाँ से लायेंगे | कुसुम को जब पता चला कि दीदी अपनी बेटी मधु की शादी करने जा रही है तब उसने टोका की लड़की प्रीलियम की परीक्षा दे रही है | हो सकता है आई.ए.एस. में निकल जाए | उसकी शादी करने में क्या तुक है! वह स्कॉलर है | उसे अपना कैरियर बनाने दो | तब आधुनिक युग की माँ ने भी वही कहा जो पुराने ज़माने की माँ ने कहा था – उस कलेक्टरनी के लिए हम कमिश्नर दूल्हा कहाँ से लायेंगे यह भी सोचा है ?"5

स्त्री की संवेदनशीलता और मानवीयता

मालती जोशी की कहानियों में स्त्री पात्र अत्यंत संवेदनशील और मानवीय गुणों से संपन्न दिखाई देते हैं। वे केवल अपने हितों के बारे में नहीं सोचतीं, बल्कि परिवार और समाज के अन्य सदस्यों के सुख-दुख के प्रति भी संवेदनशील रहती हैं। उनकी नायिकाएँ करुणा, प्रेम, त्याग और सहानुभूति जैसी मानवीय भावनाओं की प्रतीक हैं। यही गुण उन्हें परिवार और समाज में एक विशिष्ट स्थान प्रदान करते हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

"संदर्भहीन कहानी की नायिका शोभा को उसका पति उसे सीडी के रूप में प्रयोग में लाना चाहता है | किन्तु पति के निंद्य प्रस्ताव का विरोध करने पर शोभा दोहरी सजा को पाती है | उसका पति उसके बच्चों के मन में माँ की चरित्र हीनता का जहर घोल देता है | इसीलिए शोभा कहती है कि "मुझे तो वे अजनबी लोग ही रास आते है जिनकी भीड़ मै अपने आस पास इकट्ठा करती हूँ | वे सब मेरी ही तरह होते है | अपने परिवेश से कटे हुए, ऊबे हुए | अपने भीतर के सूनेपन को बाहर के शोर में डुबोने की व्यर्थ कोशिश करते हुए ये लोग ही मेरे बंधु, सखा बन गए है |"6

स्त्री-शक्ति और आत्मनिर्भरता

यद्यपि मालती जोशी की स्त्रियाँ पारंपरिक परिवेश में जीती हैं, फिर भी वे कमजोर या असहाय नहीं हैं। उनमें आत्मनिर्भरता और आत्मबल की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

वे जीवन की कठिन परिस्थितियों का साहसपूर्वक सामना करती हैं और अपने धैर्य तथा विवेक के बल पर समस्याओं का समाधान खोजने का प्रयास करती हैं। वे आत्मनिर्भर बन न केवल अपना वरन अपने पूरे परिवार जिसमे पति की भी जिम्मेदारी उठाने में सक्षम है | इस प्रकार उनकी कहानियाँ स्त्री-शक्ति की सकारात्मक छवि प्रस्तुत करती हैं। मालती जोशी की सन्नाटा कहानी का नायक गिरीश जॉब सिकनेस का मारा है वह पारिवारिक जिम्मेदारियों से भागता है | चाहे बिजली का बिल भरना हो या बच्चों का एडमिशन करवाना हो इन कामों को सोचकर ही उसे बुखार आने लगता है | सिर्फ घर वालों की सहानुभूति प्राप्त कर अपने दिन गुजरता रहता है | बेटी की सगाई तक में वो अस्पताल में ही भर्ती था | उसकी बेटी कहती है कि "कुछ नहीं मम्मी यह सब जॉब सिकनेस है | जिम्मेदारियों से भागने के बहाने है | इन्हें सारी झंझटो से मुक्ति दे दीजिए | फिर देखिए इन्हें कुछ नहीं होगा |"7

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि मालती जोशी का कथा-साहित्य हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उनकी रचनाओं में स्त्री जीवन का यथार्थ, उसकी संवेदनाएँ, संघर्ष, आत्मसम्मान और सामाजिक भूमिका का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण मिलता है। मालती जोशी की विशेषता यह है कि उन्होंने स्त्री-विमर्श को अत्यधिक उग्र या विद्रोही स्वर देने के बजाय उसे संवेदनात्मक और मानवीय दृष्टि से प्रस्तुत किया है। उनकी नायिकाएँ परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन स्थापित करते हुए अपने अस्तित्व और आत्मसम्मान की रक्षा करती हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

इस प्रकार कहा जा सकता है कि मालती जोशी का कथा-साहित्य भारतीय स्त्री के विभिन्न रूपों का प्रामाणिक दस्तावेज है, जो स्त्री-अस्मिता और मानवीय मूल्यों की स्थापना में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. खेमानी कुसुम (संपा.) , वागार्थ , मृणाल पण्डे के लेख से दिसंबर २००३, पृ. 28
2. पंचशील शोध समीक्षा पृष्ठ 87
3. बोल री कठपुतली – रानियाँ – मालती जोशी पृ. 93
4. मालती जोशी की कहानियां – छोटी बेटी का भाग्य – मालती जोशी पृ.120
5. आखिरी शर्त – मालती जोशी पृ.99
6. मध्यांतर – सन्दर्भहीन – मालती जोशी -पृ.87
7. बोल री कठपुतली – सन्नाटा – मालती जोशी पृ.34

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

आधुनिक प्रौद्योगिकी के माध्यम से भारतीय कृषि क्षेत्र का सशक्तिकरण

डॉ. शमापरवीन खान

सहयोगी प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग प्रमुख

अंजुमन गल्स डिग्री कॉलेज ऑफ आर्ट्स, सदर, नागपूर

प्रस्तावना (Introduction) :

आज विश्व में सबसे गंभीर समस्या खाद्य आपूर्ति है। पिछले 35 वर्षों में जनसंख्या वृद्धि की दर से दोगुने से भी अधिक दर से भोजन की मांग बढ़ी है। वास्तव में, खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) की एक रिपोर्ट के अनुसार, वैश्विक जनसंख्या का लगभग 10%, यानी 81.5 करोड़ लोग कुपोषण के शिकार हैं और उनके पास सक्रिय एवं स्वस्थ जीवन जीने के लिए पर्याप्त भोजन नहीं है। कृषि क्षेत्र में आधुनिक प्रौद्योगिकी का व्यापक उपयोग हो रहा है। इसने किसानों को कई तरह से लाभ पहुंचाया है। नई और उन्नत तकनीकों को अपनाने से फसलों का उत्पादन और उत्पादकता बढ़ी है। इससे उत्पादन लागत कम करने में भी मदद मिली है। प्रौद्योगिकी के उपयोग से खेती की प्रक्रिया सरल और अधिक कुशल हो गई है।

कृषि विकास पद्धतियों को प्राकृतिक संसाधनों का दोहन उनकी पुनर्जनन क्षमता से कहीं अधिक तेज़ी से करनेवाला माना जाता रहा है। मानव जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के कारण भोजन और आवास की मांग बढ़ी है, जिसे पूरा करने के लिए भूमि की "प्राकृतिक" वहन क्षमता पर दबाव पड़ रहा है।

यह मानना उचित है कि मानव जनसंख्या वृद्धि जारी रहेगी और इससे भारत के कृषि पारिस्थितिकी तंत्र पर अधिक दबाव पड़ेगा। इसलिए, कृषि और सतत विकास में प्रौद्योगिकी की भूमिका हमेशा से रही है और आगे भी रहेगी। कृषि विकास में आधुनिक प्रौद्योगिकी की भूमिका महत्वपूर्ण है, और डिजिटल प्रौद्योगिकी के आगमन से इसका दायरा और भी विस्तृत हो गया है। नवाचार कृषि पद्धतियों में बदलाव ला रहा है, जिससे नुकसान कम हो रहा है और दक्षता बढ़ रही है। कृषि में प्रौद्योगिकी का प्रभाव कृषि के कई क्षेत्रों पर पड़ता है, जैसे उर्वरक, कीटनाशक, बीज प्रौद्योगिकी आदि। जैव प्रौद्योगिकी और आनुवंशिक अभियांत्रिकी के परिणामस्वरूप कीट प्रतिरोधकता और फसल पैदावार में वृद्धि हुई है। भारत में कृषि क्षेत्र के समक्ष विद्यमान दोहरे संकट-जलवायु परिवर्तन और आर्थिक अस्थिरता का विश्लेषण करता है। पत्र इस बात की जांच करता है कि कैसे डिजिटल कृषि मिशन और AI संचालित समाधान पारंपरिक खेती को लाभकारी व्यवसाय में बदल रहे हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

1960 में, हरितक्रांति के दौरान, भारत ने रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, उच्च गुणवत्तावाले बीजों और उचित सिंचाई जैसी आधुनिक कृषि पद्धतियों का लाभ उठाकर खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल करने में कामयाबी हासिल की।

ट्रैक्टरों के आगमन के बाद जुताई और कटाई के नए उपकरण, सिंचाई के तरीके और हवाई बीज बोने की तकनीक का विकास हुआ, जिससे भोजन और रेशे की गुणवत्ता में सुधार हुआ।

किसान वैज्ञानिक आंकड़ों और प्रौद्योगिकी का लाभ उठाकर फसलों की पैदावार बढ़ा सकते हैं और खेती के अत्याधुनिक तरीकों से खुद को अवगत रख सकते है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान लगभग 18-20% है, लेकिन क्षेत्र ''निम्न उत्पादकता के जाल'' में फंसा है। वर्तमान शोध का उद्देश्य आधुनिक तकनीकी हस्तक्षेपों (जैसे ड्रोन, एग्रीस्टैक, और IoT) के माध्यम से किसानों की आय दोगुनी करने की संभावनाओं को तलाशना है।

कृषि संकट के प्रमुख कारक (Key Challenges) :

- **संसाधन क्षरण:** मिट्टी की उर्वरता में कमी और गिरता भू-जल स्तर।
- **बाजार की विफलता:** बिचैलियों के कारण किसानों को मूल्य का उचित हिस्सा न मिलना।
- **डाटा का अभाव:** फसल खराब होने या कीटों के हमले के समय सटीक और समय पर जानकारी न मिल पाना।

शोध पद्धति :

कृषि संकट और तकनीकी समाधानों के विश्लेषण के लिए मिश्रित शोध पद्धति (Mixed Method Research) सबसे उपयुक्त है, जो मात्रात्मक सरकारी आंकड़ों और गुणात्मक किसान सर्वेक्षणों को जोड़ती है। इस शोध में स्तरीकृत यादृच्छिक नमूनाकारण (Stratified Random Sampling) के माध्यम से छोटे और बड़े किसानों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

तकनीकी सशक्तिकरण के स्तंभ (Pillars of Empowerment)

- **डिजिटल पब्लिक इंफ्रास्ट्रक्चर (DPI) :** Digital Agriculture Mission के तहत किसानों को डिजिटल पहचान (Farmer ID) प्रदान करना।
- **सटीक खेती (Precision Farming) :** ICAR – Indian Agricultural Research Institute के अनुसार, मिट्टी के पोषक तत्वों और नमी के आधार पर सटीक सिंचाई और उर्वरक प्रबंधन।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

- **रिमोट सेंसिंग और ड्रोन :** फसलों की निगरानी और आपदा मूल्यांकन के लिए। सरकारी पहल और केस स्टडी (Government Initiatives)
- **एग्रीस्टैक (AgriStack) :** ऋण और सब्सिडी के वितरण को पारदर्शी बनाना।
- **ई-नाम (e-NAM) :** किसानों को सीधे बाजार से जोड़नेवाला (National Agriculture Market) पोर्टल।
- नमो ड्रोन दीदी: ग्रामीण महिलाओं को ड्रोन संचालन में प्रशिक्षित कर कृषि सेवाओं का व्यवसायीकरण।

कृषि पर आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रभाव :

प्रौद्योगिकियाँ कृषि क्षेत्र में आधुनिक बदलाव लाने में सहायक हो सकती हैं। कुछ प्रौद्योगिकियों ने हमारे कार्य करने के तरीके को बदल दिया है, लेकिन कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन विज़न जैसी तकनीकी प्रगति को कृषि में व्यापक रूप से फैलाने की आवश्यकता है।

कृषि में आधुनिक प्रौद्योगिकी के उपयोग से लाखों किसानों को वास्तविक समय में कृषि संबंधी जानकारी प्राप्त करने से लाभ मिल सकता है।

किसानों को मौसम संबंधी जानकारी और आपदा संबंधी चेतावनियाँ आसानी से उपलब्ध हो सकती हैं और साथ ही उन्हें कृषि संबंधी डेटा तक तुरंत पहुँच प्राप्त हो सकती है।

मंडी स्वचालन समाधान पारंपरिक खुदरा चैनल को डिजिटल रूप देगा और किसानों को अपनी उपज को बिचैलियों और संस्थागत खरीदारों से जोड़ने में मदद करेगा।

विभिन्न प्रकार की प्रौद्योगिकियों की उपलब्धता से कृषि क्षेत्र में आधुनिक कृषि का परिवर्तन संभव हो पाता है। कृषि में आधुनिक प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में कई आशाजनक रूझान और प्रायोगिक परियोजनाएं चल रही हैं।

वर्षा आधारित और सिंचित क्षेत्रों में छोटे किसानों के साथ मिलकर उन्नत कृषि पद्धतियों को अपनाने में सहायता करती है, जिनमें मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, फसल उत्पादन प्रबंधन, इनपुट उपयोग दक्षता, छोटे खेतों का मशीनीकरण, जल-कुशल सिंचाई तकनीकें, बागवानी विकास, पशुधन प्रबंधन और कृषि में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) का उपयोग शामिल है।

भारत में किसानों को खाद्य सुरक्षा हासिल करने में मदद करने के लिए, कृषि समुदाय के एक बड़े हिस्से की आय बढ़ाकर उनका उत्थान और संवर्धन करना आवश्यक है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

आधुनिक प्रौद्योगिकी और मशीनीकरण के माध्यम से कृषि में हस्तक्षेप करने से भूख और कुपोषण के साथ-साथ गरीबी, जल और ऊर्जा के उपयोग, जलवायु परिवर्तन और अन्य चुनौतियों का समाधान करने की क्षमता है।

भूमि समतलीकरण में आधुनिक तकनीक के उपयोग से अय्याज़ को सिंचाई में लगनेवाले समय और लागत को कम करने में मदद मिली है। अपने खेत के एक एकड़ हिस्से को लेजर से समतल करने के लिए किराए की कुल लागत 2,250 रूपये है, जिसमें से उन्हें परियोजना से 800 रूपये की सहायता मिली, क्योंकि वे पहली बार इस परियोजना को लागू कर रहे थे और यह अन्य किसानों के लिए एक प्रदर्शन होगा।

लेजर लैंड लेवलिंग तकनीक लागू करने के बाद, अय्याज बताते हैं कि इससे सिंचाई की लागत और समय लगभग आधा हो गया है। पहले उन्हें अपने एक एकड़ गेहूं के खेत की एक बार सिंचाई करने में 10-11 घंटे लगते थे, जिसकी लागत 90 रूपये प्रति घंटा थी, और उन्हें ऐसी पांच सिंचाई करनी पड़ती थी, जिसका कुल खर्च 4,500 रूपये आता था। लेजर लेवलिंग के बाद, खेत की सिंचाई करने में उन्हें केवल छह घंटे लगे, जिससे 1,800 रूपये की बचत हुई। इस तकनीक से खेत में पानी और उर्वरकों के समान वितरण के कारण फसल की उत्पादकता में भी सुधार हुआ।

कृषि क्षेत्र में उपयोग की जानेवाली कुछ लोकप्रिय प्रौद्योगिकियाँ इस प्रकार है :

1. **मृदा संवेदक :** मृदा संवेदक का उपयोग मिट्टी में नमी का स्तर, तापमान और फसल की वृद्धि को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों को मापने के लिए किया जाता है। संवदकों द्वारा एकत्रित डेटा वायरलेस तरीके से किसान को भेजा जाता है, जिससे किसान अपनी कृषि पद्धतियों में तद्नुसार समायोजन कर सकता है।
2. **जीपीएस तकनीक :** जीपीएस तकनीक का उपयोग सटीक कृषि में व्यापक रूप से किया जाता है। यह खेत की सीमाओं का पता लगाने और उर्वरकों, कीटनाशकों और खरपतवारनाशकों का सही ढंग से प्रयोग करने में सहायक होती है। इससे अपव्यय कम होता है और दक्षता बढ़ती है।
3. **मौसम की निगरानी :** किसान अब वास्तविक समय में मौसम संबंधी डेटा प्राप्त कर सकते हैं, जिससे उन्हें बुवाई का समय, सिंचाई का तरीका और फसल की किस्म तय करने में मदद मिलेगी। यह जानकारी मौसम संबंधी ऐप्स या वेबसाइटों के माध्यम से या खेत में स्थित विशेष मौसम स्टेशनों के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

4. **स्वचालन :** बुवाई, रोपाई, कटाई आदि जैसी कृषि प्रक्रियाओं में स्वचालन को व्यापक रूप से अपनाया गया है। इससे मैनुअल श्रम पर निर्भरता कम हुई है और दक्षता में वृद्धि हुई है।
5. **ड्रोन :** मानचित्रण, सर्वेक्षण और फसल निगरानी के लिए ड्रोनों का व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है। ये कृषि गतिविधियों की योजना बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने के लिए उपयोगी डेटा एकत्र करने में सहायक होते है।
6. **कृषि रोबोट :** कृषि रोबोटों को खेतों में विभिन्न कार्यों को करने के लिए विकसित किया जा रहा है, जैसे गायों का दूध निकालना, फल और सब्जियां तोड़ना और यहां तक कि घास काटना। ये रोबोट बिना थके लंबे समय तक काम कर सकते हैं और अक्सर मानव श्रमिकों से बेहतर काम कर सकते हैं।
7. **उपग्रह चित्र :** उपग्रह चित्रों का उपयोग मौसम पूर्वानुमान, फसल निगरानी और उपज विश्लेषण के लिए किया जाता है। यह किसानों को सिंचाई, फसल पैटर्न आदि के संबंध में समय पर निर्णय लेने में मदद करता है।

कृषि उत्पाकदता बढ़ाने में प्रौद्योगिकी ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उदाहरण के लिए, मशीनीकरण के उपयोग से शारीरिक श्रम की आवश्यकता कम हुई है, जिससे दक्षता और उत्पादन में वृद्धि हुई है। सिंचाई प्रणालियों की शुरूआत से भी उत्पादन बढ़ाने में मदद मिली है, क्योंकि इससे शुष्क क्षेत्रों में भी फसलें उगाना संभव हो गया है। इसके अलावा, आधुनिक प्रौद्योगिकी ने कीटों और रोगों के प्रति प्रतिरोधी, अधिक उपज देनेवाली फसलों की किस्में विकसित करना संभव बनाया है। कृषि में प्रौद्योगिकी के उपयोग का खाद्य सुरक्षा पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। उत्पादन में वृद्धि से यह सुनिश्चित करने में मदद मिली है कि अधिक से अधिक लोगों को पौष्टिक और किफायती भोजन उपलब्ध हो सके। कृषि में आधुनिक प्रौद्योगिकी ने उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि की है। इससे किसानों की खाद्य सुरक्षा और आय में सुधार हुआ है। इसके अलावा, इसने नए रोजगार सृजित करने और ग्रामीण समुदायों के जीवनस्तर में सुधार करने में भी मदद की है।

कृषि प्रौद्योगिकी का उपभोक्ताओं पर प्रभाव :

कृषि प्रौद्योगिकी ने उपभोक्ताओं को कई तरह से प्रभावित किया है। आधुनिक प्रौद्योगिकी के उपयोग से किसानों को फसलों और पशुधन का उत्पादन बढ़ाने में मदद मिली है। इससे उत्पादों की गुणवत्ता में भी सुधार हुआ है। नई प्रौद्योगिकी के उपयोग से उत्पादन लागत में भी कमी आई है। नई प्रौद्योगिकी को अपनाने से कृषि उत्पादों के विपणन और वितरण के नए तरीके विकसित हुए हैं। इससे

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

किसानों को अपने उत्पादों के लिए व्यापक बाजारतक पहुंचने में मदद मिली है। प्रौद्योगिकी के उपयोग से कृषि क्षेत्र में नए रोजगार सृजित करने में भी मदद मिली है।

कृषि प्रौद्योगिकी का किसानों पर प्रभाव :

हाल के वर्षों में, कृषि प्रौद्योगिकी ने विश्वभर के किसानों पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। प्रौद्योगिकी की सहायता से किसान अब अपनी पैदावार बढ़ा पा रहे हैं और पहले से कहीं अधिक फसलें उगा पा रहे हैं। इसके अलावा, वे कम श्रम और संसाधनों का उपयोग करके अपनी लागत भी कम कर सकते हैं। हालांकि, कृषि में प्रौद्योगिकी के उपयोग के कुछ नुकसान भी हैं। मुख्य समस्याओं में से एक यह है कि इससे मशीनों और रसायनों पर अत्यधिक निर्भरता बढ़ सकती है, जिनका रखरखाव महंगा हो सकता है। इसके अलावा, यदि इसका सही ढंग से उपयोग न किया जाए तो यह पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचा सकता है।

कृषि प्रौद्योगिकी से नए रोजगार सृजित हो सकते हैं:

कृषि क्षेत्र में प्रौद्योगिकी नए रोजगार सृजित करने में भी सहायक हो सकती है। उदाहरण के लिए, मोबाइल फोन और अन्य डिजिटल प्रौद्योगिकियों के उपयोग से किसानों को बाजारों से जुड़ने और अपने उत्पादों को सीधे उपभोक्ताओं को बेचने के नए अवसर मिल रहे हैं। इसके अलावा, कृषि-पर्यटन जैसी मूल्यवर्धित सेवाओं के विकास से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के नए अवसर पैदा हो रहे हैं।

2021 में कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय (MoA & FW) द्वारा इंडिया डिजिटल इकोसिस्टम ऑफ एग्रीकल्चर (IDEA) पर एक परामर्ष पत्र जारी किया गया, जो कृषि क्षेत्र में डिजिटल क्रांति की बात करता है।

आधुनिक तकनीक को अपनाना विभिन्न कारकों जैसे-सामाजिक-आर्थिक स्थिति, भौगोलिक स्थिति, उगाई गई फसल, सिंचाई सुविधाएँ आदि पर निर्भर करता है।

कृषि में प्रौद्योगिकी से का महत्त्व :

- कृषि में प्रौद्योगिकी का उपयोग शाकनाशी, कीटनाशक, उर्वरक और उन्नत बीज का उपयोग जैसे कृषि संबंधी विभिन्न पहलुओं में किया जा सकता है।
- वर्षों से कृषि क्षेत्र में प्रौद्योगिकी अत्यंत उपयोगी साबित हुई है।
- वर्तमान में किसान उन क्षेत्रों में फसल उगानें में सक्षम हैं, जिन क्षेत्रों में पहले वे फसल उगाने में अक्षम थे, लेकिन यह कृषि जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से ही संभव हुआ है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

- उदाहरण के लिये जेनेटिक इंजीनियरिंग ने एक पौधे या जीव को दूसरे पौधे या जीव या इसके विपरीत स्थानांतरित करने में सक्षम बना दिया है।

इस तरह की इंजीनियरिंग फसलों में कीटों (जैसे बीटी कॉटन) और सूखे के प्रतिरोध को बढ़ाती है। प्रौद्योगिकी के माध्यम से किसान दक्षता और बेहतर उत्पादन के लिये प्रत्येक प्रक्रिया का विद्युतीकरण करने की स्थिति में हैं।

प्रौद्योगिकी का उपयोग कृषि में कैसे लाभकारी हो सकता है? :

- यह कृषि उत्पादकता को बढ़ाती है।
- मृदा के क्षरण को रोकती है।
- फसल उत्पादन में रासायनिकों के अनुप्रयोग को कम करती है।
- जल संसाधनों का कुशल उपयोग।
- गुणवत्ता, मात्रा और उत्पादन की कम लागत के लिये आधुनिक कृषि पद्धतियों का प्रसार करती है।
- किसानों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में बदलाव लाती है।

मनो-सामाजिक मुद्दे :

श्रमिकों की कृषि में दिलचस्पी न होना, क्योंकि वे आत्मनिर्भरता के लिये परियोजनाओं (आईपेलेगेंग प्रोजेक्ट) की तुलना में कृषि कार्यों को कम प्राथमिकता देते हैं, साथ ही कृषि कार्य करने के लिये अधिक समय की आवष्यकता होती है।

सरकारद्वारा उठाए गए कदम:

- **एग्रीस्टैक :** कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने 'एग्रीस्टैक' के निर्माण की योजना बनाई है, जो कि कृषि में प्रौद्योगिकी आधारित हस्तक्षेपों का संग्रह है। यह किसानों को कृषि खाद्य मूल्य श्रृंखला में एंड टू एंड सेवाएँ प्रदान करने हेतु एक एकीकृत मंच का निर्माण करेगा।
- **डिजिटल कृषि मिशन:** कृषि क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, ब्लॉकचेन, रिमोट सेंसिंग और GIS तकनीक, ड्रोन व रोबोट के उपयोग जैसी नई तकनीकों पर आधारित परियोजनाओं को बढ़ावा देने हेतु सरकारद्वारा वर्ष 2021 से वर्ष 2025 तक के लिये यह पहल शुरू की गई है।
- **एकीकृत किसान सेवा मंच (UFSP) :** यह कोर इंफ्रास्ट्रक्चर, डेटा, एप्लीकेशन और टूल्स का एक संयोजन है जो देशभर में कृषि परिस्थितिकी तंत्र में विभिन्न सार्वजनिक व निजी आईटी

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

प्रणालियों की निर्बाध अंतः क्रियाशीलता को सक्षम बनाता है। UFSP निम्नलिखित भूमिका निभाता है।

- **कृषि में राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना (NeGP-A) :** यह एक केंद्र प्रायोजित योजना है, इस योजना को वर्ष 2010-11 में 7 राज्यों में प्रायोगिक तौर पर शुरू किया गया था। इसका उद्देश्य किसानों तक समयपर कृषि संबंधी जानकारी पहुँचाने के लिये सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) का उपयोग कर भारत में तेजी से विकास को बढ़ावा देना है। वर्ष 2014-15 में इस योजना का विस्तार शेष सभी राज्यों और 2 केंद्रशासित प्रदेशों में किया गया था।
- **कृषि मशीनीकरण पर उप-मिशन (SMAM) :** इस योजना के तहत विभिन्न प्रकार के कृषि उपकरण और मशीनरी की खरीद के लिये सब्सिडी प्रदान की जाती है।
- **अन्य डिजिटल पहलें:** किसान कॉल सेंटर, किसान सुविधा एप, कृषि बाजार एप, मृदा स्वास्थ्य कार्ड (SHC) पोर्टल आदि।

नीतिगत सिफारिशें (Policy Recommendations) :

1. **FPO (Farmer Producer Organizations) का तकनीकीकरण :** छोटे किसानों को समूह बनाकर ड्रोन और महंगे उपकरण साझा करने के लिए प्रोत्साहित (Shared Economy Model)
2. **स्थानीय भाषा में डेटा :** AI चैटबॉट्स और कृषि ऐप्स को क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध कराना ताकि भाषाई बाधा दूर हो सके।
3. **साइबर सुरक्षा :** किसानों के डिजिटल डेटा की सुरक्षा के लिए कड़े कानून बनाना ताकि 'एग्रीस्टैक' का दुरूपयोग न हो।

प्रौद्योगिकी के उपयोग ने 21 वीं सदी को परिभाषित किया है। जैसे-जैसे दुनिया क्वांटम कम्प्यूटिंग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, बिग डेटा और अन्य नई तकनीकों की ओर बढ़ रही है, भारत के पास आईटी दिग्गज होने का लाभ उठाने और कृषि क्षेत्र में क्रांति लाने का एक जबरदस्त अवसर है। जैसे हरित क्रांति ने कृषि उत्पादन में वृद्धि की है, वैसे ही भारतीय खेती में आईटी क्रांति अगला बड़ा कदम हो सकता है। भारत में किसानों की क्षमता में सुधार हेतु अत्यधिक प्रयास किया जाने की आवश्यकता है, कम-से-कम जब तक शिक्षित युवा किसान मौजूदा अल्पशिक्षित छोटे एवं मध्यम किसानों को प्रतिस्थापित नहीं कर देते हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

कृषि क्षेत्र में भारत को सभी तरह से 'आत्मनिर्भर'बनाने की क्षमता है और इससे बाहरी कारकों पर निर्भरता भी कम होगी।

निष्कर्ष :

आधुनिक तकनीक के प्रयोग से कृषि उत्पादकता में कई गुना वृद्धि हुई है। वास्तव में, यह उन कुछ क्षेत्रों में से एक है जहाँ श्रम-बचत उपकरणों का पूर्ण उपयोग किया गया है। आज एक किसान मशीनों की सहायता से कई पुरूषों और महिलाओं का काम कर सकता है। इससे न केवल समय की बचत होती है बल्कि लागत भी कम होती है और उत्पादन में वृद्धि होती है।

विश्व की जनसंख्या 2050 तक लगभग 9 अरब तक पहुंचने का अनुमान है। चुनौती यह है कि इतनी जनसंख्या को खिलाने के लिए पर्याप्त उत्पादन करने के तरीके और साधन खोजे जाएं।

कृषि के अंतर्गत आनेवाले रकबे में कमी और उत्पादन एवं वितरण में खाद्य पदार्थों की बर्बादी की चुनौती का विश्व पर व्यापक प्रभाव पड़ रहा है। इन समस्याओं के समाधान हेतु कृषि में प्रौद्योगिकी की बढ़ती भूमिका ही खाद्य सुरक्षा से भरे भविष्य की ओर एकमात्र मार्ग है।

कृषि में इन समस्याओं के समाधान हेतु प्रौद्योगिकी की बढ़ती भूमिका ही खाद्य सुरक्षा से परिपूर्ण भविष्य की ओर एकमात्र मार्ग है। हम सब मिलकर कृषि में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भूमिका का लाभ उठाकर भारत के लिए खाद्य सुरक्षा से परिपूर्ण भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

संदर्भ :

1. सरकारी रिपोर्ट : कृषि मंत्रालय, भारत सरकार (2024)। डिजिटल कृषि मिशन रिपोर्ट। Agricoop.nic.in से प्राप्त।
2. नीति आयोग: (2023)। भारतीय कृषि में कृत्रिम बुद्धिमत्ता AI की भूमिका। NITI Aayog Documents।
3. अंतर्राष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान (IFPRI) : भारत में कृषि संकट और तकनीकी समाधानों का प्रभाव। IFPRI India।
4. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) : स्मार्ट फार्मिंग और जलवायु-अनुकूल कृषि पद्धतियां। ICAR Publications।

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

ग्रामीण विकास और स्थालान्तरण के प्रश्न: एक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण

डॉ. क्रिष्णा प्रदीप मेश्राम

समाजशास्त्र विभागप्रमुख व असोसिएट प्रोफेसर

प्रगती महिला कला महाविद्यालय, भंडारा

Email: kp_pmm@rediffmail.com

सारांश:

प्रमुख रूप से ग्रामीण विकास को सरकार की विशेषीकृत जिम्मेदारी के रूप में देखा जाता है| ग्रामीण विकास ग्रामीणों के सामाजिक, राजनितिक एवं आर्थिक जीवन की समन्वित उन्नति से सम्बंधित है| जिसमें ग्रामीण क्षेत्रो के प्राकृतिक एवं मानवीय स्त्रोतों का उपयोग करके ग्रामीणों के जीवन स्तरों को बढ़ाने का प्रयास अपेक्षित है| चूँकि भारत की अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है, इसलिए शासकीय नीति पानी आपूर्ति, कृषि संसाधन आवंटन, उपजाऊ रहित जमीन को उपजाऊ बनाने संबंधी कार्यो का समावेशन महत्वपूर्ण होना चाहिए| वर्तमान में ग्रामीण संरचना का स्वरुप बदल रहा है, जहाँ पहले ग्रामीणों को रोजगार अपने ही गाँवो में उपलब्ध हो जाते थे, तो वहीं आज ग्रामीण क्षेत्र में खेती की अर्थव्यवस्था में बढता आधुनिक यांत्रिकीकरण से बढती बेरोजगारी का दर ग्रामीण क्षेत्र में निर्धनता को और भी वृद्धिंगत कर रही है| कृषि संबंधी ग्रामीण विकास का यह कारक वहां के लोगो को स्थलांतरण के लिए प्रेरित कर रही है| और जिससे न केवल पुरुष बल्कि महिलाये भी बड़े प्रमाण में नगरीय क्षेत्र की ओर स्थातान्तरित हो रही है| क्योंकी शहरो में नई अर्थव्यवस्था जिसे गिग या फ्रीलांस कहा जाता है, उसके बढते प्रमाण ने ना केवल अर्धकुशल श्रमिकों को बल्कि अकुशल श्रमिको को भी रोजगार उपलब्ध करा दिए है| ओला, उबेर, स्विगी, अमेजोन, फ्लिप्कार्ट जैसे सेवा कार्य आज शहरी भागो में आसानी से लोगो को उपलब्ध हो जाते है| शहरी तुलना में इस सेवा का वेतन भले ही न्यूनतम हो परंतू ग्रामीणों के लिए यह वेतन समाधानकारक होते है| इसलिए ग्रामीणों का शहरी स्थालान्तरण बढ़ा है| स्थालान्तरण के कारको से निर्मित अनेक प्रश्न निर्माण हुए है, जिसका की समाजशास्त्रिय दृष्टिकोण से इस संशोधन लेख में अध्ययन किया गया है, जिसके लिए प्राथमिक व् द्वितिय तथ्यों का आधार लिया गया है|

बिज शब्द: ग्रामीण विकास, स्थलान्तरण

प्रस्तावना:

ग्रामीण विकास लोगो के जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने के प्रयास श्रमपूर्ण तरीके से सरकारी प्रशासन एवं नौकरशाहों पर निर्भर करते है| ग्रामीण विकास समझने के पहले विकास की अवधारणा समझना आवश्यक होगा|

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

विकास शब्द से तात्पर्य शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्रति व्यक्ति आय और मानव संसाधनों में वृध्ही से है| साथ ही वर्त्तमान में वैज्ञानिक, राजनितिक, आर्थिक, शहरी और जनसांख्यिकीय क्रांतियों या परिवर्तनों से भी सम्बंधित है| वैज्ञानिक क्रांति के उपरांत ही उत्पादन, परिवहन, और संचार के पैमाने में परिवर्तन हुए| राजकीय क्षेत्र में राजतन्त्र का स्थान लोकशाही ने ले लिया आर्थिक क्षेत्र में वस्तु-विनिमय का स्थान मुद्रा, बैंकिंग व ई-बैंकिंग ने ले लिया, इतना ही नहीं तो आर्थिक विकास का शहरीकरण से घनिष्ठ सम्बन्ध बन गया|

ग्रामीण विकास ग्रामीण विकास एक व्यापक अवधारणा है, ग्रामीण विकास से तात्पर्य अपेक्षाकृत अलग-थलग और कम आबादी वाले क्षेत्रो में रहने वाले लोगो के जीवन स्तर और आर्थिक खुशहाली में सुधार लाने की प्रक्रिया से सम्बंधित है| इस विकास में बहुआयामी दृष्टिकोण शामिल है, उदहारण भौतिक संसाधन, तकनिकी, बुनियादी ढाचों में विकास, कृषि प्रगति, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, महिला सक्षमीकरण और रोजगार, सामाजिक, राजनितिक, संगठन, सांस्कृतिक, संस्थागत, इत्यादि| जिससे ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले समर्थ बन पाये व उनपर आश्रितों की आवश्यकताओ की वे पुर्तता कर पायें| इसमे संदेह नहीं की नवीन प्रोद्योगिकी एवं उन्नत किस्म के बीजो के प्रयोग से कृषि उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है, परन्तु इसका लाभ प्रमुखतः बड़े कृषकों या भू- स्वामियों को ही हुआ है| अत: कृषक संरचना में होनेवाले परिवर्तन की प्रक्रिया न तो कमजोर वर्गों को ऊपर उठाने में सहायक रही है और न ही उनकी आर्थिक दशा को उन्नत करने में| एक ओर नयी प्रोद्योगिकी एवं भूमि सुधारो के लाभ बड़े जोतों या कृषक मालिको को हुए तो दूसरी ओर निर्धन व्यक्ति के बेरोजगार और निर्धनता ने उन्हें नगरो की ओर स्थालान्तरण के लिए प्रेरित किया| **गोडार्ड** के अनुसार, "निर्धनता उन वस्तुओं का आभाव या अपर्याप्त पूर्ति है, जो की एक व्यक्ति तथा उसके आश्रितों को स्वस्थ एवं बलवान बनाये रखने के लिए आवश्यक है|" किसी व्यक्ति को उसके आय से विमुख या परावृत्त कर देने की स्थिति को **कार्ल मार्क्स तथा उनके समर्थक विद्वान बॉटोमोर, जे. ई. इलियट, रोनाल्ड एल. मीक, ए. शेख** तथा **टी. सोवल** इत्यादि ने निर्धन की श्रेणी में रखा है**,** जिससे व्यक्ति अपने आपको आर्थिक रूप से असुरक्षित महसूस करता है|

नैसर्गिक आपत्ति से देश के कई राज्यों जैसे आँध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, केरल, कर्णाटक जैसे राज्यों के ग्रामीण क्षेत्र में कृषि उत्पादन के अवनति या व्यक्तिगत कारणों से ऋण ग्रस्तता ग्रामीण कृषकों के आत्महत्या के कारण बने है| इतना ही नहीं तो भूमिहीन ग्रामीण मजदूरो के लिए भी यह स्थिति बेरोजगारी को जन्म देती है, जिससे स्थलांतरण का प्रमाण बढ़ने लगता है| ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में परिवर्तन

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

के सम्पूर्ण सप्तक का प्रतिनिधित्व होना चाहिए जिससे सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन से भौतिक रूप से बेहतर जीवन का मार्ग प्रशस्त हो सके| इसकी तुलना रेल से की जा सकती है, जिसमे की हर डिब्बा अपने से आगे के डीब्बे को धक्का देता है, परन्तु इसके लिए शक्तिशाली इंजिन की अवाश्यकयता होती है| ग्रामीण विकास के लिए उचित इंजिन के पहचान की जरुरत है| ग्रामीण विकास में जहा मुलभुत तत्व ग्रामीणों की मुलभुत जरूरते, जिसमे भोजन, आवास, शिक्षा, स्वस्थ्य, सुरक्षा, रोजगार, समानता, सम्मान और स्वतंत्रता है, जिसमे अभिव्यक्ति, वैचारिक, सामाजिक और राजकीय स्वतंत्रता महत्वपूर्ण है| ग्रामीण क्षेत्र का विकास प्रमुख रूप से कृषि से सम्बंधित है| जिसके अंतर्गत प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, तकनिकी और संरचनात्मक सहयोग, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, महिला सशक्तिकरण, संस्थागत ऋण और बिमा तथा कृषक कल्याण जैसे कई नितियों का समावेश है, परन्तु उसके अमल में लाने की कमतरता आज भी है|

जो विशेषरूप से निर्धन ग्रामीणों के सामाजिक, राजनितिक एवं आर्थिक जीवन की समन्वित उन्नति से सम्बंधित है|

पूर्व से ही ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन यापन करने वालों में निचली जाती के लोगो का समावेश होता है, जिसका की देश की लोकसंख्या में बहुत बड़ा भाग होता है, और यदि देश का एक बड़ा हिस्सा विकास से वंचित है तो, किसी भी देश की समृद्ध होने की या विश्वगुरु बनने की संकल्पना कपोलकल्पित साबित होगी| वास्तव में ग्रामीण क्षेत्र अक्सर किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था की रीढ़ होते है| और आज भी देश का एक बड़ा हिस्सा कृषि और उससे सम्बंधित गतिविधियों पर निर्भर है|

स्थालान्तरण: स्थालान्तरण वह प्रक्रिया है, जिसमे व्यक्ति या समूह अपने मूल स्थान को छोड़कर दुसरे स्थान की ओर जाता है| भौगोलिक स्थिती मे अवसरो के असमान वितरण की प्रतिक्रिया, सामान्यतः लोग कम अवसर वाले स्थान से अधिक अवसर वाले स्थलो को प्राथमिकता देते है | वर्तमान में ग्रामीण भागो में जनसंख्या की वृद्धि, प्राकृतिक विपदाएं, निर्धनता और बेरोजगारी, शोषणकारी ग्रामीण संरचना, औद्यागिक केन्द्रों का विकास, गिग अर्थव्यवस्था का नगरो में बढ़ता प्रमाण व रोजगार के अधिक अवसर तथा असमान एवं अनियोजित विकास ऐसे अनेक कारणों ने स्थालान्तरण की परिस्थिति में बल प्रदान किये हैं|

कई बार सुरक्षा का अभाव होने पर भी लोग जोखिम अवसरों का चुनाव करते है| आम तौर पर लोग अपने जन्मस्थान से भावनात्मक रूप से जुडे हुए होते है, परंतु आर्थिक आभाव, अनेक प्रकार के सुविधा का अभाव, प्राकृतिक आपदाओ व वर्तमान की शहरी जीवन पद्धतीयां ग्रामीण क्षेत्र मे रहने

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

वाले लोगो को आकर्षित करती है, जिससे युवतियां भी इससे स्वयं को दूर नहीं रख पाई है| गीग अर्थव्यवस्था मे अर्धकुशल श्रमिको का महत्व बढता दिखाई देता है, क्योंकि जहाँ अनेक कंपनीयों को अस्थाई और कम आये वाले कामगार आसानी से उपलब्ध होते है, तो वही महाविद्यालयिन युवतीयों में भी पूर्ण रूप से कुशलता नही होने के उपरांत भी शहरी शेत्रो मे अर्धकुशल श्रमिक के रूप मे कम आय वाले रोजगार उन्हे प्राप्त करणे मे सरलता होती है | साथ ही कम आय वाले रोजगार शहरी क्षेत्र के लिए भले ही कम आय वाले होते है, परंतु ग्रामीण क्षेत्र की तुलना मे यह आय उनके लिये समाधानकारक होते है | गिग अर्थव्यवस्था ने शहरी स्थालान्तरण के स्वरुप ही बदल दिए| एक प्रकार से गिग अर्थव्यवस्था ग्रामीणों के लिए वरदान के रूप मे उभर कर सामने आई है| ग्रामीण क्षेत्र की बदलती अर्थव्यवस्था का दबाव ग्रामीणों पर पड रहा है| ग्रामीण क्षेत्र में खेती की अर्थव्यवस्था में बढता यांत्रिकीकरण तथा बढती बेरोजगारी का दर ग्रामीण क्षेत्र में निर्धनता को और भी वृद्धिंगत कर रही है| यह कारक स्थलांतरण के विकर्षण के रूप में कार्य कर रहे है, तो वहीं पर नगरीय क्षेत्र में गिग अर्थव्यवस्था के निम्न आय के रोजगार आकर्षण के कारक के रूप मे कार्य कर रहे है| इसलिये ग्रामीण क्षेत्र के युवा वर्गों में नगरीय क्षेत्र की ओर स्थलांतरण की प्रवृत्ती वृद्धिंगत होती दिखाई देती है| गिग अर्थव्यवस्था मे अर्धकुशल श्रमिकों का महत्त्व बढता दिखाई देता है| ग्रामीण क्षेत्र में अधिकतर जनसंख्या पूर्ण रूप से कुशल श्रमिक नही होने के उपरांत भी वह शहरी क्षेत्रों में अर्ध-कुशल श्रमिक के रूप में कम आये वाले रोजगार प्राप्त करने में सक्षम होते है | आज भी अंततः शिक्षा का उद्देश रोजगार प्राप्त करना है, यह नरेटीव ग्रामीण क्षेत्र में स्थापित हो चुका है| गिग अर्थव्यवस्था के अर्धकुशल श्रमिकों के लिए निम्न आय वाले उपलब्ध रोजगार ग्रामीण क्षेत्र के युवा वर्गों के लिए आर्थिक सहायक के रूप में सामने आये है| जिससे युवाओं का शहरी स्थालान्तरण का प्रमाण बढ़ा है|

नगरो, महानगरो मे मॉल्स, सुपर बाजार, पॅकेजिंग उद्योग, स्वास्थ क्षेत्र, विवाह के हॉल या लॉन में सेवा देना, खाद्य वस्तु वितरण सेवा, विविध वस्तु वितरण सेवा, ओला, उबेर, स्विगी, ब्लिंकिट, अमझोन इत्यादी गिग अर्थव्यवस्था के क्षेत्रो में युवक-युवतीयो की मांग बहुतायत प्रमाण मे है|
रोजगार हेतु आये ग्रामीणों को कई समस्याओं से भी जूझना पड़ता है|

१.**अशिक्षा की समस्या:** अधिकांश प्रवासी अशिक्षित या अत्यल्प शिक्षित होते है, मात्र रोजगार ही उनका अंतिम ध्येय होता है|

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

२.आवास की समस्या: ग्रामीण क्षेत्रों से ए लोगो को रोजगार तो प्राप्त हो जाता है, परन्तु सिमित पगार के कारण उचित आवास की व्यवस्था नहीं कर पाते| जिससे उन्हें पर्याप्त सुविधाओं के आभाव में निम्न स्तर के पर्यावरण में गुजरा करना होता है|

३.शोषण की समस्या: ग्रामीणों के अशिक्षित, कम शिक्षित परिश्थितियों का गैर फायदा उठाकर निम्नतम वेतन पर उन्हें रख लेते हैं|

४.यौन शोषण की समस्या: स्त्री स्थलांतरित सदस्यों को यौन संबधी समस्याओ का सामना करना पड़ता है, विशेष रूप से मजदूरी करने वाली महिलाए बड़े प्रमाण में इस समस्याओ से ग्रसित होती है, कई बार तो आर्थिक प्रलोभन देकर उनका लैंगिक शोषण किया जाता है टो कभीनौकरी से बेदखल करने की धमकी दी जाती है| नशावृत्ति की समस्या: कई बार काम की अवधि इतनी अधिक होती है की अपने कठिन परिश्रम की थकान भुलाने के लिए ये कामगार नशा का सहारा लेने लगते है|

५.गन्दी बस्तियों का विकास: स्थलांतरित लोगो को शहरों में पर्याप्त वेतन के आभाव में झुग्गी झोपड़ियों में रहना पड़ता है, जिससे शहरों में गन्दी बस्तियों का विकास होने लगता है|

६.स्वास्थ्य पर विपरीत परिणाम: कई बार नगरी जीवन, अस्वच्छ वातावरण अनेक प्रकार की असुधाये स्थलान्तारितों के स्वास्थ्य में विपरीत परिणाम करने लगते है| श्रम के रॉयल कमीशन के अनुसार, "नगरीय जीवन अपने साथ अनेक आकर्षण प्रदान करता है| थके हुए शरीरो को अल्कोहल खतरनाक आराम देता है और जुआ उन्हें आकर्षित करता है, जिससे विपरीत परिणाम न केवल उनके स्वास्थ्य पर बल्कि उनकी कार्यक्षमता को भी प्रभावित करता है|

गिग अर्थव्यवस्था: गीग अर्थव्यवस्था एक ऐसा श्रम बाजार है जहाँ लोग स्थायी नौकरी के बजाय अल्पकालिक लचिले और परियोजना पर आधारित काम करते है, उन्हे ही गीग कहा जाता है, कई बार यह फ्रीलांस पर आधारित होता है, जहाँ कर्मचारी स्थायी नहीं होता है| कंपनिया अनेक प्रकार के लागत बचाती है, तो वही कम शिक्षा वाले विशेष रूप से ग्रामीणों को अपनी आर्थिक जरूरतो को पुरा करने का अवसर भी इसमे दिखाई देने लगता है| गिग अर्थव्यवथा से जुड़े युवाओं को समय पर वस्तु डिलीवर करने का दबाव व अपघात का सामना करना पड़ता है, तो कई युवकों को अनेक भयंकर जोखिमो का सामना करना पड़ा है| तो वहीं युवतियों या महिलाओं को अनेक प्रकार के असुरक्षितता का सामना भी करना पड़ता है, जिसमे नौकरी की सुरक्षा, स्वास्थ्य बिमा, मातृत्व अवकाश, पेंशन जैसे किसी भी लाभ से उन्हें वंचित ही रहना होता है तो लैंगिक भेदभाव, लैंगिक पूर्वाग्रह और भेदभाव, राइड शेयरिंग, या डिलीवरी जैसी नौकरियों में युवतियों का उत्पीडन और सुरक्षा जोखिमो का सामना, कार्यस्थल पर यौन

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

उत्पीडन की रोकथाम के लिए बने कानूनों का संरक्षण नहीं मिलने जैसे समस्याये उनके सम्मुख आये है|

अनुसन्धान पद्धतिशास्त्र: सामाजिक शोध सामाजिक जीवन की गहन छानबीन और सुनिश्चित अवधारणा बनाने की नियम्बद्ध प्राविधि है, जिससे की सामाजिक जीवन से सम्बंधित ज्ञान को अधिक विस्तृत किया जा सके या उसकी पुष्टि की जा सके| प्रस्तुत संशोधन पत्र का चुनाव करने के पहले इस शोध से सम्बंधित शोध प्रबंधो का अध्ययन किया गया| तथा प्रथम एवं द्वितीय तथ्यों के आधार पर शोध पत्र लिखा गया है जिसके लिए शोध के लिए मिश्र अर्थात गुणात्मक एवं संख्यात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है|

अनुसन्धान का उद्देश :

१. ग्रामीण विकास व स्थालान्तरण के संबंधो को जानना|

२. ग्रामीणों का रोजगार हेतु शहरी स्थालान्तरण के कारणों को जानना|

उपकल्पना:

१. ग्रामीण विकास ग्रामीणों को स्थलांतरित का कारण बन रही है|

२. नई अर्थव्यवस्था में अनेक सुविधाओं का आभाव होता है|

विश्लेषण: ग्रामीण विकास के संदर्भ में **कॉरटेन** ने सुझाव दिया था की, नौकरशाही पुनरभिमुखिकरण को परियोजनाओ के प्रबंधन के बजाय व्यवस्थाओं के प्रबंधन, अनुपालन के बजाय नवाचार, एवं औपचारिक नियोजन व् मूल्यांकन प्रविधियों के बजाय सतत स्व-प्रबोधन व् शीघ्र स्व- संशोधन की प्रविधियों को प्राथमिकता देनी चाहिए, जिससे ग्रामीण विकार की संकल्पना साकार होगी और स्थालान्तरण भी थमेगा और इस स्थ्लान्तरण से होने वाली समस्याओं में निम्नता आयेगी| इतना ही नहीं तो मुफ्त वितरण प्रणाली बंद होने चाहिए व् रोजगार पर अधिक सकारात्मक योजनाये अमल में लानी चाहिए| ग्रामीण विकास के लिए अनेक सरकारी योजनाओं को कार्यान्वित किया गया है, किंतु फिर भी ग्रामीणों के सम्मुख अभी भी रोजगार की समस्याएँ है ही| मुफ्त अनाज या लाडली बहन योजना के तहत दी जाने वाली वस्तु या राशी व्यक्ति की सभी जरूरते पूर्ण नहीं कर सकती बल्कि उसके कई विपरीत परिणाम भी दिखाई देते है| जहाँ एक ओर इन प्रलोभनों से व्यक्ति में आलस्य की प्रवृत्ति जन्म लेने लगती है, तो कहीं उज्जवल भविष्य या उच्च शिक्षा के प्रति भी अरुचि की प्रवृत्ति बढ़ती है| जिससे नई पीढ़ी के युवा वर्गों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है|

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

निष्कर्ष: ग्रामीण विकास ग्रामीणों के सामाजिक, राजनितिक एवं आर्थिक जीवन के विकास से सम्बंधित है| जिसमें ग्रामीण क्षेत्रो के प्राकृतिक एवं मानवीय स्त्रोतों का उपयोग करके ग्रामीणों के जीवन स्तरों को बढ़ाने का प्रयास अपेक्षित है| रोजगार हेतु बड़े पैमाने पर होनेवाले स्थलान्तरण ने अनेक समस्याओं को जन्म दिया है| युवाओ या पुरुषों में निर्धारित समय समय का दबाव तो युवतियों या महिलाओं में असुरक्षितता का दबाव निम्न हुआ है| इस अध्ययन के विश्लेषण से यही दिखाई दिया की ग्रामीण क्षेत्र की बदलती अर्थव्यवस्था का दबाव निश्चित ही युवाओं पर पड रहा है, पहले जहाँ ग्रामीण क्षेत्र में हंगामी काम सहज रूप प्राप्त होते थे तो ग्रामीणों को प्राप्त हो जाते थे, परंतु ग्रामीण विकास से स्थलांतरण बढ़ा है|

संदर्भ:

१. तुम्बे चिन्मय, फिरस्ता भारत स्थालान्तराचा ऐतिहासिक मागोवा, सुनिधि पब्लिशर्स, पुणे, २०२२
२. सिंह कटार, ग्रामीण विकास सिद्धांत, नीतियाँ एवं प्रबंध, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली, २०११
३. महाजन संजीव, भारत में ग्रामीण समाज, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ल, २०१२
४. दुबे श्यामाचरण, समय और संस्कृति, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, २०००
५. कुमार रंजित, संशोधन पद्धति, सेज पब्लिकेशन इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, २०१७

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

गिरिराज किशोर के उपन्यासों में चित्रित शहरी जीवन परिवेश का अध्ययन।

डॉ. विकास विट्ठलराव कामडी

हिन्दी विभाग प्रमुख, सेठ केसरीमल पोरवाल महाविद्यालय, कामठी (महाराष्ट्र)

ईमेल: vikaskamdi7@gmail.com

सारांश :

महानगरों तथा शहरों की बढ़ती जनसंख्या और बढ़ता हुआ क्षेत्रफल देखकर अंदाजा लगा सकते हैं कि भारतीय जीवन गाँवों की अपेक्षा नगरों में ही संपूर्णता के साथ देखा जा सकता है। दिल्ली, कोलकता, मुंबई, चेन्नई, नागपुर, कानपुर आदि शहरों में महानगरीय जीवन की जिजीविषा, जटिलता, विविधता और बढ़ती आधुनिक गति भी देखने को मिलती है। औद्योगीकरण तथा यांत्रिकीकरण के कारण, शिक्षा के लिए, रोजी-रोटी के लिए लोग गाँवों, कस्बे से शहरों की ओर आ रहे हैं। इनके कारण शहरों का वातावरण दूषित हुआ है। मकानों, यातायात, अर्थाभाव, भ्रष्टाचार, अकेलेपन, विलासिता, पारिवारिक विघटन, स्त्री-पुरुष संबंध में पनपा अनाचार, नैतिक मूल्यों का टूटन आदि समस्याएँ शहरों तथा नगरों में निर्माण होती हुई दिखाई देती हैं। अतः यह सभी समस्याएँ ही उपन्यासकारों को लेखन के लिए प्रेरित करती हैं। गिरिराज किशोर जी के उपन्यासों में शहरी जीवन का परिवेश तथा चित्रण दिखाई देता है।

संकेत शब्द : जीवन मूल्य, आत्मीय, जिजीविषा, औद्योगीकरण, यांत्रिकीकरण, अकेलापन, विलासिता, अनाचार।

शहरी परिवेश, संघर्ष एवं गतिशील जीवन गिरिराज किशोर जी को प्रेरित करता रहा है। परिणामस्वरूप उनके उपन्यासों में शहरी जीवन की प्रस्तुति का विवेचन विविध रूपों में प्रकट हुआ है। प्रस्तुत आलेख में गिरिराज किशोर जी उपन्यासों में चित्रित शहरी जीवन का चित्रण किया गया है।

शहर का अर्थ :

सं. नगेंद्रनाथ बसु ने 'हिंदी विश्वकोश' में शहर का अर्थ स्पष्ट करते हुये कहाँ है- "मनुष्य की वह बड़ी बस्ती जो कस्बे से बहुत बड़ी हो, वहाँ हर पेशे के लोग रहते हो और जिसमें अधिकतर पक्के मकान हो।"[1] उसे शहर कहा जा सकता है।

गिरिराज किशोर जी ने अपने उपन्यास में निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा शहरी जीवन परिवेश का चित्रण किया है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

शहरों में आत्मीय रिश्तों का पतन :

शहरों का वातावरण शिक्षित, अशिक्षित, किसान, व्यापारी आदि सभी लोगों को अपनी ओर आकर्षित करता है। शहरों में अधिक सुविधा के लालच में अनेक लोग शहरों की ओर बढ़ते हैं। शहरों में बढ़ती जनसंख्या के कारण मकान, यातायात, नौकरी, रोजगार आदि की समस्याएँ शहरों में अधिक निर्माण होती हैं। परिणामस्वरूप कम समय में ज्यादा पैसा कमाने के लालच में लोग भ्रष्टाचार, काला बाजार, डकैती तथा अनैतिक का मार्ग को अपनाते हैं। इन लोगों का पैसा ही भगवान बन जाता है। पैसों के लालच में लोग अपने रिश्ते-नाते को भी महत्व नहीं देते हैं। अतः यह देखा जाता है कि पैसा ही रिश्तों के पतन का प्रमुख कारण बनाता जा रहा है। पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक रिश्ते नाते पैसों के कारण ही बनते और बिघडते हैं। ऐसे रिश्तों का चित्रण गिरिराज किशोर जी के 'ढाईघर', 'जुगलबंदी', 'पहला गिरमिटिया', 'यथा प्रस्तावित', 'परिशिष्ट', 'अंतर्ध्वंस' आदि उपन्यासों में देखने को मिलता है। 'यथा प्रस्तावित' उपन्यास का बालेसर ज्यादा दिनों से डेलीवेज वर्कर होने के कारण आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती। उसका भाई भी नौकरी छूटने पर उसके पास रहने आता है। घर में परिवार के सदस्य भी ज्यादा होते हैं। माँ-बाप बीमार रहते हैं। उनके दवाओं के लिए पैसे नहीं मिलते। घर का खर्च भी बढ़ता है। अपने विषम आर्थिक स्थिति के बारे में बालेसर पत्रावली में लिखता है- "डेलीवेज-वर्कर होने की वजह से मेडिकल रिइम्बर्समेंट भी नहीं होता। बूढ़े और बीमार माँ-बाप को जिंदा रहने के लिए रोटी से ज्यादा दवा चाहिए। हम जो ठीक-ठाक हैं उनकी जरूरत रोटी की ज्यादा है। उन्हें पूरी दवा नहीं मिल पाती और हमें पेट भर रोटी नहीं मिल पाती। भाई बेरोजगार और मैं बेरोजगार। हालाँकि रोजगार जैसा रोजगार नहीं। पर एक ही घर में एक का रोजगार और दूसरे की बेरोजगारी, बावजूद सारे आत्मीय रिश्तों के बेगानेपन भर देते हैं....।"[2] इस तरह बालेसर पैसों के अभाव के कारण वह अपने परिवार की परवरिश अच्छी तरह से कर ने में असफल होता है।

'दो' उपन्यास के नीमा का पहला पति पंडित बेटी के बीमारी में दूसरे पति ढाबेवाले से पैसों की कमी के कारण रुपये लेता है। परंतु रुपया लेकर भी वह नीमा और ढाबेवाले को गालियाँ देता है। जब ढाबेवाला बीमार पड़ता है तब ढाबे का नोकर उसे घर छोड़ने आता है, घर पर वह कहता है- "दवाई तो खानी ही पड़ेगी। .... जब तुमने पंडतानी की लोंड़िया के लिए रुपए भेज दिए तो काहे अपने मन का दुख बढ़ा रहे हो! उस आदमी को देखो उसने लेकर रख लिए। एक बार भी मना नी किया। तुम्हें और पंडतानी को दस गाली भी सुनाई।..... गाली दी थी तो रुपए क्यों ले लिए?"[3] शहरों के लोग रुपया लेकर भी कृतज्ञता भाव नहीं रखते इस वाक्य द्वारा स्पष्ट होता है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

शहरों में उभरती अकेलेपन की समस्या :

शहरों तथा महानगरों में बढ़ती जनसंख्या के कारण अनेक समस्याएँ निर्माण हुई हैं, जिसमें अकेलेपन की समस्या बहुलता से देखने को मिलती है। कुछ लोगों को रोजी-रोटी तो मिल गई लेकिन अकेलेपन की भावना निर्माण हो गई है। शहरों में परिवार के कमानेवाले सदस्य घर पर नहीं होते तो बूढ़े और बच्चों को अकेलापन महसूस होता है। शहरी तथा महानगरीय जीवन अति तेज बनने से कोई भी किसी के साथ भावनात्मक संबंध नहीं रखते हैं। 'जुगलबंदी' उपन्यास के शिवचरण बाबू अँग्रेजों के चले जाने और देश पर काँग्रेस शासन होने की घटनाओं को सरलतासे नहीं लेते। वे स्वयं को असहाय और घुटता हुआ महसूस करते हैं। स्वयं की डायरी में लिखते हुये शिवचरण बाबू कहते है - "बहुत से साथी आजाद होनेवाली कतार में जाकर खड़े हो गए। मेरे कदम इतने भारी हैं कि मैं वहाँ तक पहुँचते-पहुँचते दलदल में उतर जाऊँगा। इतनी बड़ी दलदल को पार करना मुश्किल है- बहुत मुश्किल।"[4] यहाँ पर शिवचरण बाबू के अकेलेपन को साफ देखा जा सकता हैं।

'अंतर्ध्वंस' उपन्यास का पात्र दीपक रिसर्च के लिए विदेश जाता है। दीपक के जाने से उसकी पत्नी रमा बहुत ही अकेलापन महसूस करती है। वह अपने पति के अकेले रहने का जिक्र सर से करती है। रमा और भैया बीमार होते हैं तब गुड़िया अपने अंकल सर से कहती है- "अंकल, आप पापा को तार दे दीजिए.... मम्मी और भैया बहुत रोते हैं.... उन्हें बुखार है। मैं अकेली क्या-क्या करूँ?"[5] गुड़िया के बातों से यह स्पष्ट होता है कि जब घर का बड़ा व्यक्ति बाहर होता है तो घर के लोगों में या छोटे बच्चों में उनके न होने से अकेलापन का अहसास होता है।

शहरों में नौकरी करती स्त्रिया :

शहरों में बदलती जीवन-परिस्थितियाँ, नई मूल्य-दृष्टि तथा नैतिक बदलाव का दबाव मनुष्य के आत्मिक, पारिवारिक एवं सामाजिक संबंधों पर पड़ता है। आज स्त्रियाँ भी रोजगार करने लगी हैं। शिक्षित एवं रोजगार के कारण स्त्री स्वावलंबी होने लगी है, अपने पैरों पर खड़ी होने लगी हैं। आर्थिक स्वतंत्रता स्त्री की व्यक्तिगत स्वतंत्र-चेतना को उजागर करती है।

'ढाईघर' उपन्यास के भास्कर राय की बेटी सोना को उसके ससूरालवाले मायके छोड़ जाते हैं। सोना घरवालों पर बोझ बनना नहीं चाहती। वह पढ़ाई पूरी करके कुछ छोटी-मोटी नौकरी करना चाहती है, स्वावलंबी बनना चाहती है। सोना जब नौकरी के लिए जाती है तब घरवालों तथा लोगों के मन में अनेक प्रश्न निर्माण होते हैं। सोना स्वयं की सुरक्षा के लिए कहती है- "छोटे दादा, मैं इस लुप्त प्रायः राय खानदान की बेटी नहीं हूँ- एक स्वतंत्र व्यक्तित्व भी हूँ। मेरे भविष्य के बारे में आप लोग कहाँ तक निर्णय

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

लेते रहेंगे। एक बार आप ले चुके हैं वह गलत साबित हुआ। अब मुझे खुद लेने दीजिए। मैं अपने व्यक्तित्व को अपने पिता या पति के नाम पर मिट्टी में नहीं मिलाना चाहती।"[6] सोना दूसरे नगर में नौकरी के लिए जाकर अपने पैरों पर खड़ी होती है। यहा पर स्त्री का व्यक्तित्व शहरों में कामकाजी स्त्री के रूप में हमें दिखाई देता हैं।

'तीसरी सत्ता' उपन्यास की डॉ. रमा शर्मा एक स्वावलंबी नारी है। वह शहर के एक अस्पताल में डॉक्टर का काम करती है। पति से मार खाकर और अपना दर्द छिपाकर वह मरीजों का इलाज पूरी लगन और निष्ठा से करती आ रही है। डॉ. रमा शर्मा के संदर्भ में लेखक लिखते हैं, "मरीजों के बीच पहुँचकर मिसेज शर्मा को सब बातें विस्मृत-सी होती गई। बीच-बीच में वे सब बातें उभरती थी, पर काम का दबाव उन्हें दबा देता था। शुरू-शुरू में जब उन्होंने मरीज देखना शुरू किया था तो उनको बार-बार लगता था कि लोग उनके जख्मों और नीलों को देखते हुए अंदर घुसते हैं। उन्हें देखकर वे अंदर-ही-अंदर मुस्कराते हैं। लेकिन उन्होंने अपने आपको काम-धाम तक ही सीमित रखा। हाल पूछा, दवा लिखी और चालू।"[7] इस कथन से डॉ. रमा के कामकाजी तथा स्वावलंबी स्त्री होने के गुण स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।

शहरों के सामाजिक जीवन मूल्य :

शहरी तथा महानगरीय सामाजिक जीवन मूल्यों का पतन दिखाई देता हैं। महानगर में रहनेवाला व्यक्ति अपने परंपरागत भारतीय मूल्यों को अपनाने में असमर्थ है। संयुक्त परिवार भारतीय समाज का परंपरागत मूल्य रहा है। महानगर का आकर्षण तथा नौकरी की आशा के कारण गाँव के लोग महानगरों में जाते हैं। साथ में कभी-कभी पत्नी और बच्चे भी शहर जाते हैं। ऐसी स्थिति में संयुक्त परविार अपने-आप खंडित हो जाता है। शहरों में शोषण, भ्रष्टाचार, अनैतिकता, अत्याचार आदि नई समस्या उभर रही हैं। परिणामस्वरूप सामाजिक मूल्य परिवर्तित हो रहे हैं। गिरिराज किशोर जी ने ‘लोग’ उपन्यास में इसका चित्रण किया है। 'लोग' उपन्यास के यशवंत और अंग्रेज अधिकारियों के अच्छे संबंध हैं। तत्कालीन समाज में उनका अच्छा रोब-दाब काफी चलता है। सभी लोग उन्हें मानते हैं किंतु समय परिवर्तन के साथ समाज के विचार भी बदलते हैं। एक औरत संध्या के समय यशवंत राय की गाड़ी देखकर घर के अंदर न जाते हुए बाहर ही ठहरती है। इसी कारण यशवंत राय उसके पति को बुलाकर समझाते हुए कहते हैं- "भले घरों की औरतें इस तरह सड़कों पर खड़ी नहीं होती... ये समय घर में दिया-बत्ती करने का है, या सड़कों पर खड़े होने का।"[8] इसमें यशवंत राय के महिलाओं के प्रति बदले विचार तथा मानवीय भाव प्रकट होता है। 'दो' उपन्यास की नीमा अपने पहले पति पंडित के अमानवीय व्यवहारों से पीड़ित

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

है। पंडित उसे सिर्फ भोग की वस्तु मानता है। नीमा उसके लिए अपनी वासनापूर्ती और मनोरंजन का साधन मात्र है। आज के समाज में नारी का जो भोग्या रूप है उसी का सार्थक चित्रण नीमा के द्वारा हुआ है। वह नीमा से कहता है- "मेरा जिगरा देख। ढाबेवाले के पास रही, फिर भी घर में ले आया, नहीं तो खोटा सिक्का जान कर कौन घर में लाता। सब कुछ भूलकर विधवा को सधवा बना दिया। ..... यही समझ लूँगा कि एक बाँभन के बेटे को पाल-पोसकर पुण्य कमा रहा हूँ।"[9] इस तरह नीमा अपनी इज्जत को बचाने के लिए क्रूर पति के साथ रहती है। नीमा की असफलता हमारी नैतिकता की असफलता है। शहरों में सामाजिक जीवन मूल्यों का पतन होता हुआ साफ दिखाई दे रहा हैं।

निष्कर्ष:

शहरों में बढ़ती जनसंख्या के कारण मकान, यातायात, नौकरी, रोजगार आदि की समस्याएँ निर्माण होती हैं। शहरों में कम समय में ज्यादा पैसा कमाने के लालच में लोग भ्रष्टाचार, काला बाजार, डकैती तथा अनैतिक का मार्ग को अपनाते हैं। शहरों तथा महानगरों में बढ़ती जनसंख्या के कारण अकेलेपन की समस्या देखने को मिलती है। शहरों के लोग रुपया लेकर भी कृतज्ञता भाव नहीं रखते। शहरी तथा महानगरीय जीवन में आयी प्रतिस्पर्धा से कोई भी किसी के साथ भावनात्मक संबंध नहीं रखते हैं। स्त्री का व्यक्तित्व शहरों में कामकाजी स्त्री के रूप में दिखाई देता हैं। शहरों में सामाजिक जीवन मूल्यों का पतन होता हुआ साफ दिखाई दे रहा हैं। गिरिराज किशोर जी ने अपने उपन्यास में शहरी सामाजिक जीवन परिवेश में आनेवाली समस्या का चित्रण निडर हो कर किया है इसमें दोराय नहीं है।

संदर्भ:

1. सं. नगेन्द्रनाथ बसु- हिन्दी विश्व कोश, पृ. 683, दिल्ली सं. 1986
2. गिरिराज किशोर- यथा प्रस्तावित, पृ. 28, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं.1982
3. गिरिराज किशोर- दो, पृ. 29, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि. सं.1980
4. गिरिराज किशोर- जुगलबंदी, पृ. 340, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चौथा सं.1995
5. गिरिराज किशोर- अन्तर्ध्वंस, पृ. 35, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, द्वि. सं. 1993
6. गिरिराज किशोर- ढाईघर, पृ. 372, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, द्वि. सं. 1994
7. गिरिराज किशोर- तीसरी सत्ता, पृ. 83, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, सं. 1989
8. गिरिराज किशोर- लोग, पृ. 86, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तृ. सं.1981,आवृत्ति-1998
9. गिरिराज किशोर- दो, पृ.151, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि. सं.1980

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

मीरा कांत कृत नाटक 'नेपथ्य राग' में स्त्री-विमर्श

डॉ. सुधा जांगिड़ ,
स्नातकोत्तर विभागप्रमुख, वीएमवी, महाविद्यालय, नागपुर |

प्रस्तावना

इक्कीसवीं सदी का साहित्य वैचारिक क्रांतियों और अस्मितावादी विमर्शों का युग है। 'स्त्री विमर्श' वह विमर्श है, जो भारतीय समाज में पारंपरिक रूप से स्थापित स्त्री की बंधनकारी और शोषित भूमिका को तोड़कर उसे एक मनुष्य के रूप में जीने का अधिकार देने की पक्षधरता करता है | इक्कीसवीं सदी के इस कालखंड में हिंदी नाट्य-साहित्य ने नारी के संदर्भ में पितृसत्ताक समाज के पारंपरिक ढाँचे को तोड़कर समकालीन यथार्थ को अभिव्यक्ति दी है। जहाँ पूर्ववर्ती नाटकों में स्त्री प्रायः पुरुष दृष्टिकोण से निर्मित होती थी, वहीं इक्कीसवीं सदी की महिला नाटककारों ने स्त्री के अंतर्मन, उसकी जद्दोजहद और उसके स्वतंत्र अस्तित्व को केंद्र में रखा है। आज का नाट्य परिदृश्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक विसंगतियों के विरुद्ध क्रांति का एक सशक्त माध्यम है। इस परिदृश्य में महिला नाटककारों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हुए 'स्त्री-विमर्श' को एक नई दिशा प्रदान की है। इस धारा में मृदुला गर्ग, कुसुम कुमार और शांति मेहरोत्रा जैसे नामों के बीच मीरा कांत एक प्रखर स्वर बनकर उभरी हैं। इससे भी अधिक यह बात है कि मीरा कांत के नाट्य विधा को दिए गए योगदान के आधार पर उन्हें इक्कीसवीं सदी की प्रमुखतम महिला नाटककार के रूप में स्थापित किया जा सकता है | 'नेपथ्य राग', 'उत्तर प्रश्न', 'कंधे पर क्यों बैठा शाप', 'ईहामृग', 'तीन अकेले साथ-साथ' आदि नाट्य कृतियों के माध्यम से मीरा कांत ने स्त्री विमर्श के स्वर को अधिक सबल बनाया है | प्रस्तुत आलेख में मीरा कांत के नाटक 'नेपथ्य राग' द्वारा उनके स्त्री विमर्श के एक विशिष्ट आयाम को समझने का प्रयास किया गया है |

बीज शब्द : स्त्री विमर्श, ऐतिहासिकता, पौराणिक, परंपरागत भूमिका, अन्याय |

मीरा कांत का नाम नाट्य साहित्य में अग्रणी रूप से लिया जा सकता है, जिन्होंने ऐतिहासिक कथानक को आधार बनाकर आज को प्रस्तुत किया है। उत्तर आधुनुकतावाद का स्त्री विमर्श उनकी नाट्य कृतियों के केंद्र में है | स्त्री विमर्श यानी नारी विमर्श के बारे में डॉ.सरजूप्रसाद मिश्र कहते हैं, - "नारी-विमर्श पुरुषों के समकक्ष स्त्रियों की राजनीतिक, सामाजिक और शैक्षणिक समानता का वह आंदोलन है, जिसे पहले नारीवाद कहा गया। अंग्रेजी में 'फेमिनिज्म' कहा जाता था। यह पितृ सत्तात्मक और लिंग-भेद पर आधारित मुद्दों और मान्यताओं के प्रति विद्रोह है |"[१] यही विद्रोह 'नेपथ्य राग' का मूल स्वर है | नाटक में 'खना' जो कि ऐतिहासिक-पौराणिक कथा से लिया गया पात्र है, उसमें आज के युग

की मेधा की कथा को जोड़कर एक नवीन कथा को जन्म दिया गया है। मेधा अपनी माँ के सामने अपने उस तनाव को बताती है, जो वह अपने ऑफिस में अपने अधीनस्थ पुरुष कर्मचारियों द्वारा भुगत रही है | अपनी बॉस कोई महिला हो यह इन पुरुषों को बर्दाश्त नहीं होता | तब उसकी माँ उसे ऐतिहासिक कथा के परिप्रेक्ष्य में एक पौराणिक नारी पात्र 'खना' की कथा सुनाती है | मीरा कांत के नाटक 'नेपथ्य राग'का कथानक इसी ऐतिहासिक-पौराणिक कथावस्तु पर आधारित है। चौथी-पाँचवीं शताब्दी के राजा चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के शासन काल को आधार बनाकर कथानक रचा गया है। एक प्रश्न यहाँ स्वाभाविक रूप से उठता है कि यदि कोई कथानक ऐतिहासिक है तो वह पौराणिक कैसे होगा और यदि वह पौराणिक है तो ऐतिहासिक कैसे होगा ?' 'ऐतिहासिकता' वास्तविकता की माँग करती है, तथ्यों का आधार चाहती है जबकि 'पौराणिकता' पुराण में उल्लिखित कथा या कथांश के आधार पर तय की जाती है | पौराणिकता में तथ्यों की अपेक्षा नहीं होती | 'नेपथ्य राग' का कथानक चौथी-पाँचवीं शताब्दी के चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के कालखंड का है। यह कालखंड तथ्याधारित है। 'नेपथ्य राग' नाटक की कथा के केंद्र में जो प्रमुख पात्र नायिका है– खना, उसे लेकर मीरा कांत ने कहा है- 'माइथालाजी के अनुसार 'खना' सिंहलद्वीप के मयदानव की बेटी थी'। इस आधार पर कथानक में मिथकीय अंश भी समाविष्ट हो जाता है। 'कथावस्तु' नाटक की चेतना होती है और उस चेतना का शरीर 'पात्र' होते हैं। नाटककार पात्र के माध्यम से ही संपूर्ण कथा को अपने नाटक में प्रस्तुत करता है। दयाशंकर सिन्हा के कथन से यह बात और अच्छे से स्पष्ट होती है-'वस्तु नाटक की आत्मा होती है | नेता या पात्र उसकी मूल भौतिक पहचान होते हैं। नाटक का सम्पूर्ण कार्य-व्यापार पात्र तथा उसके चरित्रगत-आचरण के माध्यम से ही संभव होता है। अत: पात्र नि:संदेह नाटक का आधार ही है और यही वस्तुत: पात्र को चरित्र प्रदान करता है।'[२]

'नेपथ्य राग' का ऐतिहासिक कथानक इस नाटक की चेतना है, जिसका संवहन नाटक की केंद्रीय पात्र 'खना' करती है | खना अपने काका के यहाँ उज्जयिनी ज्योतिष की उच्च शिक्षा ग्रहण करने आई। उसे अपने ज्योतिष गुरु वराह मिहिर के पुत्र पृथुयशस की ओर से भेजा गया विवाह का प्रस्ताव चिंतित कर देता है। वह डूबते स्वर में पूछती है और फिर खना का स्वर दृढ़ भी होता है, जब वो कहती है - "और मेरा अध्ययन ? वह सब यूँ ही अधूरा छूट जाएगा ?...क्या विवाह अनिवार्य है ?...जो ज्ञानमार्ग मैंने चुना है, उसमें स्त्री-पुरुष का भेद हो ही क्यों ?"[३] यहाँ पर मीरा कांत द्वारा सृजित नारी पात्र खना का स्त्रीवादी लक्षण अपने सशक्त रूप में प्रकट हुआ है। जिस समाज की दृष्टि में युवती को कभी व्यक्ति के रूप में नहीं देखा गया, उस समाज से स्त्री और पुरुष का भेद हटाने की चुनौती की बात मीरा कांत ने खना से करवाई है। हालांकि खना विवाह करके पृथुयशस को खुशियाँ देती है | साथ ही अपने श्वशुर वराह मिहिर की मन से सेवा भी करती है। किंतु उसका ज्योतिष-अध्ययन सब धरा-का-धरा रह जाता है | वह अपने काका से कहती है -"बन्धु काका हमने क्या सोचा था परन्तु...यही कि ज्योतिर्विद के परिवार में जा रही हूँ...लगा था निरन्तर नव ग्रहों के सानिध्य में

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

रहूंगी...नक्षत्रों से बातें करूंगी...पृथ्वी और आकाश का अन्तराल नापूँगी परन्तु...कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि खना कहीं खोती जा रही है।"[४]

नाट्य विधा में कथोपकथन या संवाद का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है, इसी के माध्यम से पाठकों को नाटक की पृष्ठभूमि तथा स्थिति का ज्ञान होता है। साथ ही चरित्रों के संवादों के माध्यम से उसका चरित्र उभरकर सामने आता है। इसी बात को स्पष्ट करते हुए डॉ. श्यामसुंदर दास कहते हैं - "कथोपकथन हमें पात्रों की सूक्ष्म बातें समझाने में सहायक होते हैं। पात्रों के भावों, विचारों और प्रवृत्तियों आदि के विकास और विरोध आदि का पता हमें कथोपकथन से ही चलता है।...जो नाटककार मनोविज्ञान के सिद्धांतों के आधार पर ही अपने नाटकों की रचना या पात्रों का चरित्र-चित्रण करते हैं, उनका मुख्य आधार प्राय: कथोपकथन ही हुआ करता है।"[५] मीरा कांत के नाटक 'नेपथ्य राग' के संवाद सटीक, सचोट और मार्मिक आदि हैं | खना के मन के भीतर की आकांक्षाएं तथा उनका टूटना, उसकी मन:स्थिति आसानी से इन संवादों द्वारा स्पष्ट होती है | पूरे नाटक में खना के दीर्घ कथनों में उसके नारी मन का तनाव, संघर्ष साकार हुआ है। मीरा कांत ने युगों पूर्व की नारी पात्र खना द्वारा स्त्री के संदर्भ में विवाह संस्था के औचित्य को प्रश्नांकित किया है। साथ ही यह भी प्रमाणित किया है कि विवाह मेधावी नारी के व्यक्तित्व का विघटन कर देता है और अंत में 'जिह्वाविहीन महिला सभासद' की शर्त भी खना पर लाद दी जाती है। 'जिह्वाविहीन महिला' यही इस पितृसत्तात्मक और पुरुषवादी समाज में नारी की स्थिति रही है | इस पुरुषप्रधान समाज में नारी को मेधावी होने का अधिकार नहीं, अपनी स्वयं की इच्छाएं रखने का अधिकार नहीं तथा समाज ने पुरुषों की समकक्षता रखने का भी अधिकार नहीं।

'नेपथ्य राग' नाटक में ज्योतिषाचार्य खना की कथा आधिकारिक है तो निर्धन पुरुष व मेधा-मां-दादी के प्रसंग प्रासंगिक कथाएँ हैं। इनमें भी निर्धन पुरुष की कथा 'प्रकरी' है और मेधा-मां-दादी का प्रसंग 'पताका' के अंतर्गत् आता है। 'नेपथ्य राग' एक ऐतिहासिक-समसामयिक नाटक है। पुन: प्रश्न यह उठता है कि कोई नाटक यदि ऐतिहासिक है तो वह समसामयिक कैसे होगा और अगर वह नाटक समसामयिक है तो ऐतिहासिक कैसे होगा ? यह मीरा कांत की प्रयोगधर्मिता ही है कि अपनी चयनित समस्या हेतु उन्होंने पौराणिक मिश्रित ऐतिहासिक कथ्य को प्रासंगिक कथ्य के साथ बड़े प्रभावी रूप में संजोया है। 'नेपथ्य राग' ऐतिहासिक-पौराणिक आख्यान होने के साथ-साथ समसामयिक नाटक भी है, क्योंकि इसमें एक उच्चाधिकारी, प्रौढ़ा माँ और उसकी बेटी मेधा की कथा समाहित है। साथ ही 'नेपथ्य राग' एक प्रतीकात्मक नाटक है। मेधा अपने पुरुष सहकर्मियों के व्यवहार से दुखी है, क्योंकि वे अपने सामने एक स्त्री की पदोन्नति अथवा बौद्धिक प्रशंसा सहन नहीं कर सकते। आज भी पुरुष अपनी सत्ता और अपना वर्चस्व चाहता है और स्त्री को दुय्यम स्तर का मानता है। युगों-युगों से पुरुष ने स्त्री को नींव के रूप में ही रहने पर बाध्य किया है और स्वयं सदा ही कलश बनकर चमकता रहा है। मंच पर पुरुष ने सदा स्वयं का शक्ति प्रदर्शन किया है तथा स्त्री को, उसकी प्रतिभा

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

को, उसके सामर्थ्य को, उसके स्वर को, उसके राग को सदा नेपथ्य में ही रहने दिया। इसी प्रतीकात्मकता को स्पष्ट करते हुए मीरा कांत कहती हैं- "नाटक प्रतीकात्मक है क्योंकि वैचारिक अभिव्यक्ति से रहित स्त्री ही समाज को स्वीकार्य रही है। यह दृष्टिकोण पीढ़ी-दर-पीढ़ी पारंपरिक रूप से शताब्दियों से बहता चला आया है और इसने जनमानस में अपनी ज़मीन तलाश ली है। इस ज़मीन पर समय-समय पर कहीं-कहीं फूटते हैं पौधे दर्द के, चुभन के... इस एहसास से कि खना शताब्दियों पहले भी नेपथ्य में थी और आज भी सही मायने में नेपथ्य में ही है।"[६]

स्त्री सदा ही उपेक्षित रही है। उसकी यह उपेक्षित भूमिका सार्वभौमिक व सार्वकालिक रही है। स्त्री की प्रतिभा को कुंठित कर उसे दोयम दर्जे पर रखने का अन्याय, अत्याचार और षडयंत्र पुरुष प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सदा ही करता आया है। इस अत्याचार एवं अन्याय के विरूद्ध आवाज़ उठाना ही मीरा कांत का 'नेपथ्य राग' की निर्मिति के पीछे उद्देश्य है। पुरुष को स्त्री की योग्यता एवं उसके सामर्थ्य को सम्मानित करते हुए उसकी सहभागिता की मानसिकता को तैयार कराना मीरा कांत का उद्देश्य है। आधुनिक-ऐतिहासिक तथा पौराणिक परिवेश युक्त आधुनिक युग की पुरुष सहकर्मियों के असहयोग से त्रस्त मेधा तथा चंद्रगुप्त विक्रमादित्यकालीन चौथी-पांचवीं शताब्दी की विलक्षण बुद्धि से युक्त पहली प्रख्यात महिला ज्योतिषाचार्य खना की संघर्षमय जीवन-कहानी के माध्यम से साकार इस नाटक का उद्देश्य मीरा कांत के शब्दों में इस प्रकार है- "'नेपथ्य राग' उस रागिनी की कथा है, जो युग-युगांतर से समाजरूपी रंगमंच के केन्द्र में आने के लिए संघर्षरत् है। इसी संघर्ष को नाटक प्रस्तुत करता है इतिहास और पौराणिक आख्यान की देहरी पर प्रज्वलित दीपशिखा के माध्यम से, जिसे नाम मिला है- खना।"[७] मीरा कांत ने इस नाटक की प्रमुख पात्र 'खना' के माध्यम से स्त्री विमर्श को प्रस्तुत किया है। इस नाटक की पृष्ठभूमि में खना जो कि एक विदुषी महिला थी, उसको राजसभा के सम्मानित सभासदों में स्थान उसके प्रतिभावान, विलक्षण बुध्दिमत्ता तथा विद्वान होने के कारण मिला। किंतु उस समय के पुरुष-प्रधान समाज के पुरुषों ने यह स्वीकार नहीं किया और यही स्थिति आज भी है। आज के पुरुष-प्रधान समाज में पुरुष कामकाजी महिला को उच्चाधिकारी के रूप में सहन नहीं करते। इसी समस्या को आधार बनाकर नाटक को प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्षत:

इक्कीसवीं सदी के साहित्य में 'स्त्री-विमर्श' सबसे प्रमुख स्वर बनकर उभरता हुआ दिखाई देता है। इस दौर में मीरा कांत ने जिस प्रखरता और गहराई के साथ स्त्री के सवालों को अपने नाटकों में जगह दी है, वह उन्हें २१वीं सदी का एक विशिष्ट नाटककार बनाता है। सामान्यत: आलोचक यह तर्क दे सकते हैं कि मीरा कांत की नायिका सड़कों पर उतरकर कोई बड़ा आंदोलन नहीं करती या विद्रोह करती हुई नहीं दिखती। लेकिन मीरा कांत की कुशलता इसी बात में है कि उन्होंने अपनी नायिकाओं को ज़ोर-शोरवाली क्रांतिकारी बनाने के बजाय, उन्हें वैचारिक रूप से सुदृढ़ बनाया है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

उनका विद्रोह व्यक्तिगत और सामाजिक स्तर पर बहुत ही धीमा लगता है लेकिन गहरा व अनोखा है | मीरा कांत स्वयं एक सौम्य व्यक्तित्व से युक्त हैं और यही सौम्यता उनके लेखन में भी झलकती है । उन्होंने नारी को पुरुष के बराबर अधिकार दिलाने जैसे चुनौतीपूर्ण और ज्वलंत मुद्दे को बहुत ही शालीन तरीके से उठाया है । बिना किसी कड़वाहट के अपनी बात को दृढ़ता से कहना ही उनके 'साहसिक आत्मबल' का सबसे बड़ा प्रमाण है । मीरा कांत यह सिद्ध करती हैं कि स्त्रीवाद का अर्थ केवल पुरुष का विरोध करना नहीं, बल्कि पुरुष के समकक्ष खड़े होकर अपने अधिकारों और अपनी पहचान की मांग करना है । उन्होंने इसी बात को 'नेपथ्य राग' नाटक में प्रमाणित किया है ।

संदर्भ संकेत :

१ चावड़ा रंजना, शिंदे विजय, इक्कीसवीं सदी में हिन्दी साहित्य स्थिति एवं संभावनाएं, जयपुर, राज पब्लिशिंग हाउस, २०१२, पृष्ठ २३३

२ अच्युतन प्रो.ए., दयाप्रकाश सिन्हा, नाट्य रचनाधर्मिता, दिल्ली, परमेश्वरी प्रकाशन, २००८, पृष्ठ ८०

३ कांत मीरा, नेपथ्य राग, पृष्ठ २५

४ वही, पृष्ठ ५१

५ महेन्द्र प्रो. रामचरण, हिन्दी नाटक के सिद्धांत और नाटककार, आगरा,सरस्वती पुस्तक सदन, १९५५, पृष्ठ१७

६ भूमिका, नेपथ्य राग, 'कथासार', नई दिल्ली, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, २०१५. पृष्ठ ८

७ वही, पृष्ठ ७

डॉ. सुधा जांगिड़
स्नातकोत्तर हिंदी विभागप्रमुख,
वी.एम.वी. महाविद्यालय, नागपुर |
Mail-sudhajangid2223@gmail.com

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

हिंदी उपन्यासों में भूमंडलीकरण

डॉ. किसन जिरया गावित
हिंदी विभागाध्यक्ष
सी. जे. पटेल महाविद्यालय, तिरोड़ा
मो. न. ९६५७४६१४०१

प्रस्तावना -

२० वीं शताद्वी के अंतिम दशक की शुरूआत में यूपीए सरकार में जब मनमोहन सिंह वित्त मंत्री बने, तब से हमने भूमण्डलीकरण को अपनाना प्रारम्भ किया था। उन्होंने 'विश्वग्राम' की अवधारणा को कार्यन्वित करते हुए भूमण्डलीकरण के महत्त्व को स्थापित करने का संकल्प लिया था। सन् १६६५ में गैट (GATT) करार का परिवर्तित स्वरूप, विश्व व्यापार संघटन (WTO) की स्थापना के उपरान्त भारत में भूमण्डलीकरण का दौर अधिक तेजी से पनपने लगा। वस्तुतः भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया व्यापार को लेकर है। आज पूरा विश्व एक गाँव (Golbal Villege) में परिवर्तित हो रहा है। आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण इसीकी उपज है। इन्टरनेट, स्पेशल इकॉनॉमिक झोन (SET), मॉल, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDT), आऊट सोअर्सिंग (BPO), इलेक्ट्रानिक मीडिया, मॉडेलिंग, विज्ञापन, विपनन (Marketing), ई-बैंकिंग, ई-कॉमर्स जैसे क्षेत्र भूमण्डलीकरण के साथ विस्तार पा रहे हैं। बढ़ते व्यापारीकरण ने समाज, शिक्षा, राजनीति, साहित्य, संस्कृति के साथ रोजमर्रा की जिन्दगी को भी प्रभावित किया है।

भारत में 20वीं शताब्दी के अन्त में भूमण्डलीकरण या उदारीकरण का आगमन हुआ था। यह समय सन् 1989ई० अथवा सन् 1990ई० के आस-पास का है। भूमण्डलीकरण पर चर्चा करने से पहले हम इसके शाब्दिक अर्थ को समझ लें। भूमण्डलीकरण दो शब्दों से मिलकर बना है। भू+मण्डलीकरण। 'भू' अर्थात् भूमि, धरा, पृथ्वी, धरती तथा मण्डलीकरण का अर्थ समाहित करना या अपने में आत्मसात करना या एकीकृत करना। अतः भूमण्डलीकरण का अर्थ हुआ-सम्पूर्ण धरा को अपने में समाहित करना। सम्पूर्ण विश्व का एकीकरण। अंग्रेजी में भूमण्डलीकरण को ग्लोबलाइजेशन (ग्लोबलाइजेशन) कहा जाता है। इसका एक नाम वैश्वीकरण भी है। इसमें ग्लोबल विलेज की बात की गई है। सम्पूर्ण विश्व एक गाँव की तरह है। ऐसी बात नहीं है कि भूमण्डलीकरण के आगमन से पूर्व हम विश्व गाँव या ग्लोबल विलेज से परचित हुए, हमारे प्राचीन साहित्य ग्रन्थों में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परिकल्पना की गई है, जहाँ मानवीय जीवन की संवेदनाओं का ध्यान रखते हुए प्राणी मात्र के उत्थान की बात कही गई है। धरा पर निवास करने वाले सभी मनुष्य चाहे वह किसी भी स्थान के हों, वे किसी धार्मिक, सांस्कृतिक विचारधारा को मानने वाले हो, उनकों एक पारिवारिक कुटुम्बी जनों के रूप में मान्यता दी गई है। भारतीय प्राचीन वाङ्मय में सभी प्राणी मात्र के सुखी रहने और उनकी सभी प्रकार के कष्टों से मुक्त रहने की बात की गई है।

हमारे देश में सन् 1990 ई. के बाद से उदारीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है, जिसमें सरकार ने वैश्विक स्तर पर व्यापार एवं वाणिज्य के लिए अपने दरवाजे खोल दिये। जिसके फलवरूप बाहरी देशों के पूँजी निवेश द्वारा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का हमारे देश में व्यापार करना आसान हुआ। इस व्यापारिक व्यवस्था से बाहरी पूँजीनिवेश का आगमन भारत में हुआ, साथ ही बाजार में वस्तुओं की उपलब्धता बढ़ी और सामान्य व्यापारियों के सामने विदेशी महँगी तथा सस्ती वस्तुओं पर, अन्य देशों के सामानों की प्रचुर उपलब्धता से प्रतिस्पर्धा भी बढ़ी।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

जैसे आज चीन के सस्ते सामानों ने पूरे विश्व के बाजारों में अपना एक अलग बाजार बना लिया है एवं स्थानीय व्यापारियों के सामने मुस्किले बढ़ा दी हैं। यदि उनकों बाजारों में बने रहना है तो उपभोक्ताओं के सामने चीन की तरह उपलब्धता सुनिश्चित करनी होगा। भारत ही नहीं पूरा विश्व आज चीन के वस्तुओं से भरा पड़ा है, क्योंकि चीन में सस्ता श्रम उपलब्ध है, जिसका असर पूरे विश्व पर पड़ रहा है।

आज हमारा देश विश्व का बाजार बना हुआ है। यहाँ पर वैश्विक उत्पादनों की बाढ़ सी हमारे देश में आ रही है। हम उपभोक्तावाद की प्रवृत्ति की तरफ बढ़ते जा रहे हैं। मॉल संस्कृति, पब संस्कृति तथा ब्राण्ड की तरफ बढ़ते जा रहे हैं। विश्व व्यापार संगठन इसमें अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिसकी वजह से आप विश्व के किसी भी कोने में व्यापार वाणिज्य कर सकते हैं। सुनने में हो आसान है, लेकिन अधिकतम व्यापार के लिए अधिकतम पूँजी की आवश्यकता पड़ती है। यह अधिकतम पूँजी पाश्चात्य राष्ट्रों के पास ही है। अतः चीन के सस्ते तथा कम टिकाऊ मॉल की अपेक्षा पश्चिमी राष्ट्रों को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का विश्व के अन्य राष्ट्रों से समझैता करके उन देशों के कच्चे सामानों का दोहन करना उनकों काफी आसान हुआ है। वैश्वीकरण से जहाँ व्यापार और अन्य उत्पादों की उपलब्धता आसानहुई है। वहीं पर विकासशील देशों को नुकसान भी उठाना पड़ता है। स्थानीय व्यापारियों के लिए, पाश्चात्य देशों के बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के सामानों के सामने टिका रहना आसान नहीं होता। फलस्वरूप स्थानीय व्यापार बन्द होने से श्रमिकों के सामने बेरोजगारी की समस्या भी उत्पन्न हो जाती है। जहाँ पर स्थानीय कलाकारों जैसे बुनकर तथा शिल्पी आदि के स्थान पर मशीनों से उत्पादन आसान और सस्ता होता है वहीं पर हस्तकला तथा लघुउद्योगों को उनके सामने हमेशा चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपना ग्रुप बनाकर किसानों से उनके उत्पादनों को सस्ते दामों पर खरीदकर, उसकों पैकिजिंग कर उच्चतम दामों पर बेंच देती हैं, क्योंकि उनके पास पैसे अधिक होते हैं, विज्ञापनों के माध्यमों से वे बाजार में इस प्रकार विज्ञापन करते हैं कि उपभोक्ता बरवस उनके पास खिंचा चला आता है। किसानों को वहीं अपने पुराने दाम ही मिलते हैं, क्योंकि वे अपने उत्पादनों का विज्ञापन नहीं कर पाते है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ एक तरह से हमारे प्राकृतिक संसाधानों पर कब्जा करती जा रही है। जंगल, पहाड़, नदियाँ तथा बाँध के नाम पर क्षेत्रीयता व विकास के नाम पर स्थानीयता के सामने विभिन्न प्रकार की चुनौतियों तथा समस्याएँ उत्पन्न होती जा रही हैं। जब हमारे प्राकृतिक संसाधन ही नहीं बचेगें तो मनुष्यता के ऊपर संकट ही उत्पन्न होगा।

भूमण्डलीकरण अथवा वैश्वीकरण का जन्म पाश्चात्य पूँजीवादी व्यवस्था से उत्पन्न हुआ है, जिसका जनक अमेरिका है। वैश्वीकरण एक तरह से अमेरिकीकरण है। विश्व के तमाम देशों के साथ उसका व्यापारिक समझौता है। यह व्यापारिक समझौता अमेरिका केवल अपने देशों के नागरिकों के हितों को ध्यान में रखकर करता है। उनकी नजर में अमेरिकी फर्स्ट की नीतियों को देखा जा सकता है। उनका व्यापार केवल अपने देश को फायदा पहुँचाने के लिए होता है, जिसे प्राप्त करने के लिए वह किसी भी हद तक जा सकते है। आज खाड़ी देशों में जो राजनैतिक उथल-पुथल मचा है उसके लिए अमेरिका की तेल नीति तथा अस्त्र-शस्त्रों का व्यापार भी शामिल है। उन देशों में तथा अन्य विकासशील देशों में राजनीतिक उथल-पुथल, आतंकवाद, गृह युद्ध आदि को इसी सन्दर्भ में देखा जा सकता है। डर तथा आतंकवाद की वजहों से शस्त्रों तथा हथियारों का खरीद-फरोक्त अनिवार्य हो जाता है। सभी देश चाहते हैं कि उसके नागरिक सुरक्षित रहें, उनकी सुरक्षा सीमापार आतंकियों से होती रहे, इसीलिए आज अमेरिका या उसके सहयोगी राष्ट्र अपने हथियारों का व्यापार खूब कर रहे हैं। इनके हथियारों की विक्री विकसित राष्ट्रों की अपेक्षा विकासशील राष्ट्रों में खूब हो रही है, जिसका फायदा अमेरिका तथा उसके सह योगी राष्ट्रों को अन्य विकसित राष्ट्रों की अपेक्षा अधिक हो रहा है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

वैश्वीकरण ने उपभोक्तावाद की भावना को बढ़ावा दिया है, जिसमें बाजारवाद की प्रवृत्ति बढ़ी है। हमारे देश की युवा पीढ़ी इस चकाचौंध की दुनियों में फॅसती चली जा रही है। लेट नाइट घर लौटना, पब-संस्कृति, मैक्डोनाल्ड संस्कृति तथा ब्राण्ड के पीछे भागना आज के युवा पीढ़ी की पहचान बनती जा रही है, जिसमें विज्ञापनों की दुनिया की चकाचौध है। इस भूमण्डलीकरण की उपभोक्तवादी संस्कृति के पीछे उधार लेकर भी बिना आवश्यकता की वस्तुओं को खरीद कर अपने पास इकट्ठा करना हमारे समाज की प्रवृत्ति बनती जा रही है। हमारे समाज में जो जितना बड़ा उपभोक्तावादी है, वह उतना ही विकसित है। ऐसा समझा जाने लगा है। भूमण्डलीकरण की इस बाजारवादी प्रवृत्ति की चकाचौंध दुनियाँ में जहाँ स्त्रियों को अर्थ की आजादी मिली वहाँ पर उनका शोषण पहले की मुकाबले आज ज्यादा हो रहा है। गरीब और पीछड़े राज्यों की युवतियों को लाकर काम के बहाने बड़े-बड़े महानगरों के होटलों, बीयरबारों तथा स्पा या मसाज सेन्टरों में रोजगार देकर उनके साथ जो अमानवीय अत्याचार किये जा रहे हैं उनकों उदाहरणों के तौर पर देखा जा सकता है।

भूमण्डलीकरण ने विकास के नाम पर गरीबी, बेरोजगारी तथा लाचारी को बढ़ावा दिया है। भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया एक तरह से पूँजीवादी राष्ट्रों का विकासशील तथा गरीब राष्ट्रों के ऊपर, आर्थिक उपनिवेशवाद की स्थापना है। भूमण्डलीकरण विकास के नाम पर केवल छलावा है। विश्व के गरीब और लाचार मुल्क केवल उनके बाजार हैं। "भूमण्डलीकरण के इस प्रक्रिया में तीसरी दुनियाँ के पिछड़े हुए देशों और भूतपूर्व समाजवादी मुल्कों के पास अपनी राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के पुनर्निर्माण के लिए कोई दुसरा विकल्प नहीं है। सिवाय इसके कि विश्व-अर्थ तंत्र में अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिए, प्रौद्यौगिकी, वाणिज्य-व्यापार और उत्पादन वृद्धि हेतु विश्व बाजार की दौड़ में शामिल हो जाये। विकास बनाम भूमण्डलीकरण, पिछड़ापन बनाम राष्ट्रीय प्रगति अमीर पूँजीवादी देशों का ऐसा जुमला है कि जिसे वे गरीब देशों पर थोपते हैं, और उसे विना शर्त के उन्हें मानने के लिए मजबूर भी करते हैं। इस भय से कि वह प्रतियोगिता में उतरे अन्यथा विलुप्त हो जायेंगे।"[1]

जिन देशों के पास प्रौद्योगिकी तथा सूचना तंत्र का विकसित माध्यम है वह देश पश्चिमी देशों से कुछ हद तक तो मुकाबला कर रहा है लेकिन अधिकाधिक पाश्चात्य देशों में पूँजी होने के नाते वे विश्व के पिछड़े तथा विकासशील देशों के बाजारों में उतकर उनके स्थानीय बाजार व्यवस्था तथा सांस्कृतिक छवि में संक्रमण पैदा कर रहे हैं। " भूमण्डलीकरण आधुनिकीकरण की एक विशिष्ट शैली है जो औद्योगिकरण, शहरीकरण और सामाजिक गत्यात्मकता पर आधारित है। यह सामुदायिक पहचान तथा सामाजिक स्तरीकरण के स्थान पर व्यक्ति को महत्व प्रदान करता है, किन्तु पश्चिम के सामने हमारे देश में पूँजीवाद का विकास सामन्तवाद को नष्ट करके नहीं हुआ है। हमारे यहाँ व्यक्ति की पहचान का आधार अभी भी बहुत कुछ उसकी सामुदायिक पहचान है। जो सामाजिक स्तरीकरण पर आधारित है। आर्थिक प्रगति के लिए प्रतिस्पर्धा के कारण विभिन्न समुदायों में तनाव बढ़ा है, क्योंकि सभी के लिए बराबर अवसर उपलब्ध नहीं है। "[2]

भूमण्डीकरण से उत्पन्न पाश्चात्य सभ्यता और उसका अनुसरण वर्षा वशिष्ठ के माध्यम से उपभोक्तवादी प्रवृत्ति का चित्रण सुरेन्द्र वर्मा जी अपने उपन्यास "मुझे चाँद चाहिए" में करते है। बाजार की चकाचौध में कैसे वर्षा वशिष्ठ अपने आप को समर्पित कर देती है उसका बहुत ही सुन्दर तथा यथार्थवादी चित्रण वर्मा जी ने किया है। अनैतिकता तथा स्त्री देह के माध्यम से अतिमहत्वाकांक्षा की प्रवृत्ति से वह अपने जीवन में आगे बढ़ती है। उन्मुक्त कामुकता, शराब तथा सिगरेट का सेवन करती हुयी वह मुम्बई के फिल्मी जीवन में प्रवृत्त होने के लिए अग्रसर रहती है। उसके लिए कुछ भी नैतिक-अनैतिक नहीं। उसकी मंजिल वस उसे मिलनी चाहिए। वर्षा वशिष्ठ के लेख के सन्दर्भ में उसकी शिक्षिका दिव्या कात्याल कहती हैं- "जहाँ ज्यादातर लोग प्रधानमंत्री, टाटा, रविशंकर बनना चाहते हों, वहाँ तुम्हारी महत्वाकांक्षा.... बहुत ताजी और अनूठी थी।"[3]

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

"नरक कुण्ठ में वास" नामक उपन्यास के माध्यम से जगदीशचन्द्र जी भूमण्डलीकरण से उत्पन्न पूँजीवाद के पराकाष्ठा को दिखाते है। जिसमें "काली" नामक पात्र के जीवन के संघर्षों का चित्रण है। गरीबी, बेरोजगारी से लाचार उसके जीवन संघर्षों की कथा है। वह जिस चमड़े की फैक्ट्री में काम करता है, वहाँ पर काम करना तो दूर पीने और नहाने तक का साफ पानी नहीं है। गाँव में वह पहले ही चौधरी लोगों के वैमनस्य का शिकार बना हुआ है। शहर भी उसके शोषण के लिए तैयार है। काली दुकानदार से कहता है- "सब चलता है। गरीब आदमी की जरूरत भी चोरी है और बड़े आदमी की चोरी भी उसका शौक समझी जाती है।"**4** इस पूँजीवादी युग में जहाँ भूमण्डीकरण तथा उदारीकरण की बात की जाती है वहाँ वह आज भी गरीब और लाचार के ऊपर अमानवीयता का व्यवहार होता है। उनके श्रम तथा तपस्या से जो फैक्ट्री मालिक दिनों दिन धनाद्य होते जा रहे हैं उन मजदूरों के लिए अति आवश्यक पीने का साफ पानी तक उपलब्ध नहीं करवाते है। सार्वजनिक पूँजी और विकास के स्थान पर नीजी (प्राइवेट) ने स्थान ले लिया है। जिसकी वजह से गरीब तथा लाचार के ऊपर विभिन्न प्रकार के अत्याचार तथा शोषण की स्थिति बलवती होती जा रही है।

पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति से ऊपजे "नर-नारी" उपन्यस में कृष्ण बलदेव वैद्य जी ने काम भावना से ऊपजे असंतुष्ट स्त्री-पुरूषों के सम्बन्धों की कहानी प्रस्तुत करते हैं। उनके अन्दर काम मनोवृत्तियाँ इस प्रकार खुले तौर पर व्याप्त हैं जैसे अमेरिकी अथवा पाश्चात्य देशों की स्त्री-पुरुषों के बीच पाये जाते हैं। इस उपन्यास में प्रत्येक स्त्री-पुरुषों का मिलन कीं अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए सेक्स की पूर्ती करना तो कहीं काम भावना की प्रबल इच्छाओं को शान्त करने के लिए एक दूसरे के साथ होती है। इस उपन्यास में 'मों' जी, सीमा, मीनू, सूवीरा तथा सागर ये चारित्रिक रूप से गिरे हुए पात्र है। जिनका सम्बन्ध केवल काम संतुष्टी ही है। सीमा कहती है कि "अब हमारे बीच सिवाय सेक्स के कुछ रहा ही नहीं, और सेक्स भी एक तरह की रूटीन रस हीन।" 5 उत्तर आधुनिकता पाश्चात्य संस्कृति उन उपभोक्तावादी लोगों पर ज्यादा प्रभावित हो रही है जो अपने ऊपर उन संस्कृतियों को आरोपित कर रहे हैं। हमारा समाज पाश्चात्य समाज नहीं है। जहाँ पर देह की सुख सबसे बड़ा सुख है। नर-नारी उपन्यास समाज के कुछ कुण्ठित लोगों की मानसिकता का परिचायक है। हमारे समाज की सच्चाई नहीं।

"कठगुलाब" मृदुला गर्ग जी का एक स्त्रीवादी उपन्यास है। जहाँ पर भारतीय और अमेरिकी जीवन-शैली को दिखाया गया है। इस उपन्यास में स्त्री चाहे अमेरिका की हो अथवा भारत की पुरूष उसे एक वस्तु के रूप में ही समझते हैं। उसकी इच्छा-अनिच्छा से उनका कुछ भी लेना-देना नहीं होता है। ' कठगुलाब ' में स्मिता, मारिया तथा नर्मदा की कहानी है, ये तीनों "माँ" नहीं बन पाती हैं। इन्हीं के त्रासदी की कथा है, साथ ही इस उपन्यास में अमेरिकी जीवन-शैली को भी दिखाया गया है। इस उपन्यास में जहाँ स्त्रियाँ माँ बनकर प्रकृति का सृजन करना चाहती हैं, वहीं पुरूष मानसिकता अवरोध बनकर उनके समाने खड़ा हो जाता है। चाहे स्मिता हो, मारियाना हो अथवा असीमा। स्त्री प्रेम उसी प्रकार जिस प्रकार कठगुलाब तभी खिलता है. जब उसपर प्रेम रूपी पानी का बौछार किया जाय। ठीक उसी प्रकार इस उपन्यास की स्त्रियाँ भी इसी बात की अपेक्षा करती हैं।

मातृत्व के सम्बन्ध में मारियाना झुंझलाहट भरे स्वर में इरविन से कहती है-"मुझे खुद का अपना, बिल्कुल अपना, मांसल शिशु चाहिए था।.... नहीं/नहीं मुझे खुद का अपना बच्चा चाहिए। मैं उसे अपने आँगन में लेखता, बढ़ता हुआ देखना चाहती हूँ। अपने घर के दिवारों के बीच गूंजती, शनैः शनैः दृढ़ होती उसकी आवाज सुनना चाहती हूँ। मैं अपने कन्धे से लगाकर सुलाना चाहती हूँ। हाँ, मैं एकदम पारम्परिक, जाहिल, गँवार, प्राकृत औरत हूँ।.... मैं उसका पहला शब्द सुनना चाहती हूँ।.... मैं सर्जक होना चाहती हूँ।"**6**

इस उपन्यास में उपभोक्तावाद को बढ़ावा देने वाली अमेरिकन व्यापारिक बुद्धि को भी दिखाया गया है। जिसमें एक ही दाम में किसी वस्तु के खरीदने पर उसे बदलकर उसी रूपये में दूसरी वस्तु को खरीदने की छूट देने का वर्णन है। आज इस प्रकार की प्रवृत्ति का प्रचलन हमारे समाज में बहुत धड़ल्ले से हो रहा है। स्मिता के माध्यम से मृदुला गर्ग जी अमेरिकी समाज की मनोवृत्ति को बताती है। वहाँ हर कार्य फटा-फट करने, तूरन्त

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

सोने/फटाफट सम्बन्ध बनाने तथा सम्बन्ध तोड़ने तथा सेक्स के बाद खरीददारी इस देश के बाशिन्दों का द्वितीय नम्बर का शौक अथवा व्यसन है। यह उपन्यास नारी के मातृत्व सम्बन्धी कामनाओं तथा भूमण्डलीकरण से उत्पन्न सांस्कृतिक प्रदूषकों को रेखांकित करता है।

"दौड़" उपन्यास ममता कालिया जी का एक लघु उपन्यास है। यह उपन्यास भूमण्डलीकरण से उत्पन्न बाजारवाद तथा उपभोक्तवादी संस्कृति का अपने विभिन्न पात्रों के भाग-दौड़ की प्रवृत्ति को दिखाता है। पैसे कमाना, अधिकाधिक धन का संचय करना आज की युवा पीढ़ी का मुख्य उद्देश्य बन गया है। वह पैसे के लिए इस कदर भागते है कि उनके लिए कुछ भी नैतिक-अनैतिक नहीं। उनके पास पैसे आते रहे बस यहीं उनकी नैतिकता है। इस कम्पनी से उस कम्पनी, देश से विदेश इसी अन्धी दौड़ में उन्होंने अपने आप को समर्पित कर दिया हैं इस उपन्यास में पवन अपने पिता से कहता है- "मेरे हर काम में आप एथिक्स, मोरेलिटी जैसे भारी-भरकम पत्थर मारते रहते हैं, मैं जिस दुनियाँ में हूँ। यहाँ एथिक्स नहीं प्रोफेशनल एथिक्स की जरूरतें होती है। चीजों को नई नजर से देखना सीखीए नहीं तो आप पुराने अखबार की तरह रद्दी की टोंकरी में फेंक दिए जायेंगे। आप जेनरेशन गैप पैदा करने की बात कर रहे हैं। "[7]

"पीली छतरी वाली लड़की" उदय प्रकाश जी द्वारा लिखा गया महत्वपूर्ण उपन्यास है। भूण्डलीकरण को लेकर लिखा जाना वाला यह अति महत्वपूर्ण उपन्यास है, जिसमें सरकार की आलोचना, भ्रष्टाचार, बाजारवाद से उत्पन्न समस्याएँ, शोषण, जातिवाद, क्षेत्रवाद, नस्लवाद, धर्म का पाखण्ड, राजनीतिकरण आदि समस्याओं को दिखाया गया है। जिसके मुख्य पात्र हैं राहूल, किन्तूदा तथा अंजली शुक्ला। भूण्डलीकरण से उत्पन्न भोगवादी पाशविक प्रवृत्ति के बारे में उदय प्रकाश जी लिखते है-"यहीं वह आदमी है, जिसके लिए संसार भर की औरतों के कपड़े उतारे जाते हैं तमाम शहरों के पार्लस में स्त्रियों को लिटाकर उनकी त्वचा से मोम के द्वारा या इलेक्ट्रोलिसिस के जरिये रोयें उजाड़े जा रहे हैं। जैसे पीछले समय में गड़ेरिये भेड़ों की खाल से ऊन उतारा करते थे।.... तमाम शहरों और कस्बों के मध्य निम्नवर्गीय घरों से निकल-निकल कर लड़कियाँ उन शहरों में कुकुर मुत्तों की तरह जगह-जगह उगी व्युटी पार्सल में मेमनों की तरह घुसती है....इन लड़कियों को टी.वी. बोल्ड और ब्युटीफुल कहता है। "[8] वैश्वीकरण से उत्पन्न उपभोगवादी प्रवृत्ति के तहत स्त्री को एक वस्तु के रूप में हमारा समाज प्रस्तुत कर रहा है। खाओं पिओं और मौज करो। कुछ भी अनैतिक नहीं है। अपनी एषणाओं को जाग्रत करो। भूमण्डल के सभी पदार्थों का उपभोग करो इस तरह की बाजार के माध्यम से पूँजीवादी सत्ता आज के समय में पूरे विश्व में अपना साम्राज्य स्थापित करती जा रही है।

डॉ. काशीनाथ सिंह जी के दो उपन्यास 'काशी का अस्सी' और "रेहन पर रग्धू" वैश्वीकरण को आधार बनाकर लिखा गया उपन्यास है। वैश्वीकरण के माध्यम से किस प्रकार पाश्चात्य पूँजीवादी देश आर्थिक साम्राज्यवाद की स्थापना करते जा रहे है। जिसमें इनकी सहायता उच्च प्रौद्योगिकी तथा उत्पादन क्षमता। व जनसंख्या की कमी करती है। ये बाते पाश्चात्य देशों के लिए उपभोग के वस्तुओं की माँग कम करता है। जिससे विश्व बाजार में ये मजबूती के साथ उपस्थित रहते है। "काशी का अस्सी" बनारस के सभ्यता और संस्कृति को ध्यान में रखकर लिखा गया उपन्यास है। डॉ. काशीनाथ सिंह जी भूमण्डलीकरण के वर्चस्व की बात करते है कि कैसे उनके फैलाये जाल में हम फँसते चले जा रह हैं। उनके पास पूँजी है वह कहीं भी रच-बस सकते हैं। लेकिन हम नहीं। उनके लिए पूरी दुनिया 'ग्लोबल विलेज' है। हमारे लिए नहीं। सब पूँजी और सत्ता का खेल है। बाजारू संस्कृति पर उनहोंने लिखा है-"हम काहे के लिए हैं? इस पूरे मामले का सम्बन्ध बाजार से है। तुम्हारा काम है सरकार देखना, हमारा काम बाजार से है। हम अपना काम देखते हैं, आप अपना काम देखों। हम तो बाजार का एक ही मतलब जानते है सरकार, बाजार वह है जो तुम्हारे दरवाजे पर है। पोर्टिकों में है, ड्राइंग रूम में है, आलमारी में है। किचन में है, टॉइलेट में है, और यहीं क्यों तुम्हारे बदन पर है, सिर के बालों से लेकर नाखूनों तक में है।"[9] इस

प्रकार आज वैश्विक बाजार से पुरी दुनिया उपभोक्तावादी बनती जा रही है। उपभोक्तावादी प्रवृत्ति व्यक्ति के नैतिकता और सामाजिक मूल्यों को कमजोर करती जा रही है।

"रेहन पर रग्धू" डॉ. काशीनाथ सिंह द्वारा लिखित महत्वपूर्ण उपन्यास है। इस उपन्यास के मुख्य पात्र "रघुनाथ" जी हैं जो पेशे से अध्यापक थे। वे जितना नैतिक बनते थे, मानवीय मूल्यों तथा आदर्शवादी जीवन चरित को अपनाते थे, उनके लड़के उतना ही अनैतिक बने। उनका अपने संतानों के ऊपर बस नहीं चलता है। वे अपने आपकों खुद रेहन पर रखते हैं। वे देखना चाहते हैं कि क्या बदलते हुए परिवेश में मेरे बच्चे मुझे छुड़ायेगे अथवा नहीं? उदाहरण देखिए "कितना दिया नरेश ने? अस्सी हजार, एक लाख? रघुनाथ चाहता है कि, देखें बच्चों को मेरी कितनी जरूरत है। वह जानना चाहता है अपनी कीमत। सीर्फ दो लाख, इसलिए कि रकम नहीं अखरेगी देने में। मिल भी जायेगा और हत्या से भी बच जाओगें।" [10] उपभोक्तावादी संस्कृति और पैसे के पीछे भागती जिन्दगी में न जाने कितने रघुनाथ मिल जायेगे। जो अपनी संतानों में अपने लिए समय और प्यार खोज रहे है। वैश्वीकरण और बाजार की उपभोगवादी संस्कृति का ही देन है कि हमारे देश के महानगरों में बुजुर्गों के लिए "ओल्ड एज होम" का निर्माण हो रहा है। यह उपन्यास आधुनिक समाज में हो रहे परिवर्तनों को समझने के लिए महत्वपूर्ण उपन्यास है। बनारस की पृष्ठ भूमि को आधार बनाकर लिखा गया उपन्यास अपने अन्दर वैश्वीक परिवर्तनों को समाहित किया हुआ है।

आधुनिकता से उपजे सामाजिक समस्याओं को आधार बनाकर प्रदीप सौरभ जी ने "मुन्नी मोबाइल" उपन्यास का सृजन करते है। मुन्नी मोबाइल यानि "विन्दू यादव" जहाँ एक साधरण काम के तलाश में बिहार के बक्सर से आकर दिल्ली के पास एक गाँव में रहती है। वह झाड़ू पोछा का कार्य करते-करते चोरी छिपे "बच्चा गिराने वाले" अस्पताल के लिए ग्राहक लाने का कार्य शुरू करती है। उसके अन्दर पैसों का लालच इस कदर हाँवी है कि न जाने वह कब सेक्स रैकेट की संचालिका बन जाती है। बाद में वह कई "बसों" की मालकिन बनती है।

आज के आधुनिक युग में पैसों का लालच लोगों को इस कदर प्रभावित कर रहा है कि उनके लिए कुछ भी करना अनैतिक नहीं है। "कॉल सेन्टर" में काम करने वाले वर्तमान में जीना चाहते है। भविष्य उनके लिए निरर्थक होता है। अमेरिका से उधार ली संस्कृति में जीना चाहते है। सबके पास क्रेडिटकार्ड होते है। मैहरों से मँहगें मोबाइल, लम्बीकार, फ्लैट सब उधार की खरीद लिए होते हैं। वे लड़कियों पर भी पैसा खुलकर लुटाते हैं। कर्ज चुकाते समय इसकी टोपी उसके सिर, उनकी टोपी दूसरे के सिर पर रखते है। एक कार्ड से लोन लेकर दूसरे बैंक का कर्ज उतार देते है। "[11] अखबारों में काम का विज्ञापन देकर गरीब लड़कियों को फँसाना तथा उनका शोषण करना आज आम बाते हो गई है। आज के युवा पीढ़ी का लेट नाइट काम करना, डॉन्स क्लब तथा सिगरेट-शराब पीना, स्त्रियों का अपने देह के प्रति आजादी। सम्बन्धों का परिच्छेद आज के सन्दर्भों में आसानी से देखा जा सकता है। आधुनिकता के पाश्चात्य बाजारीकरण ही है कि एक साधरण स्त्री किस प्रकार 'मुन्नी मोबाइल' बन जाती है। जो पैसों के लिए अनैतिक एवं असंवेदनशील गतिविधि में शामिल हो जाती है। बिन्दू यादव अर्थात "मुन्नी मोबाइल" की लड़की कम्प्युटर की जानकार होकर भी अपने माँ के गतिविधि को फूल प्रूफ तरीके से अंजाम देने का प्रयास करती है। इस उपन्यास के माध्यम से आधुनिकता से उपजे सांस्कृतिक प्रदूषणों की तरफ प्रदीप सौरभ जी हमारे समाज का ध्यान आकर्षित कराते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

1. लक्ष्मी गौतम उत्तर आधुनिकता और समकालीन कथा साहित्य। प्रकाशक लोक भारतीय प्रकाशन इलाहाबाद। संस्करण प्रथम संस्करण-2013, पृ. 92

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

2. नीरू अग्रवाल - भूमण्डलीकरण और हिन्दी उपन्यास। प्रकाशक-अनन्य प्रकाशन नयी दिल्ली। संस्करण-प्रथम संस्करण-2015, पृ. 77

3. सुरेन्द्र वर्मा मुझे चाँद चाहिए। प्रकाशक-राधाकृष्ण प्रकाशन नयी दिल्ली। संस्करण-चौथी आवृत्ति 2007, पृ. 13

4. जगदीश चन्द्र नरक कुण्ठ में वास। प्रकाशक-राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली। संस्करण-आवृत्ति 1998, पृ. 132

5. कृष्ण बलदेव वैद्य नर-नारी। प्रकाशन-राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली। संस्करण-2012, पृ. 197

6. मृदुला गर्ग कठगुलाब। प्रकाशक-भारतीय ज्ञानपीठ नयी दिल्ली। संस्करण-पेपर बैंक संस्करण 2001, पृ. 68

7.ममता कालिया-दौड़ प्रकाशन-वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली। संस्करण छठां संस्करण-2014, पृ. 66

8. उदय प्रकाश-पीली छतरी वाली लड़की। प्रकाशक-वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली। संस्करण-2020, पृ. 13

9. डॉ. काशी नाथ सिंह-काशी का अस्सी। प्रकाशक-राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली संस्करण-11वाँ, 2016, पृ. 113

10. डॉ. काशीनाथ सिंह-रेहन पर रग्धू। प्रकाशक राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली। संस्करण-2017, पृ. 163

11. प्रदीप सौरभ-मुन्नी मोबाइल। प्रकाशक-वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली। संस्करण 2009, पृ. 31

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

दलित संवेदना के प्रमुख हस्ताक्षर मुल्कराज आनंद

डॉ. राहुल पुंडलिकराव वाघमारे,
सहायक प्राध्यापक हिंदी विभाग,
तायवाडे कॉलेज महादुला- कोराडी नागपूर.

प्रस्तावना : डॉ. मुल्क राज आनंद के समय के दलित और निम्नवर्गीय वर्ग का चित्रण उनके उपन्यास ोां में यथार्थवादी और सहानुभूतिपूर्ण ढंग से किया गया है। उनके उपन्यास इस वर्ग के जीवनयापन के संघ र्ष और समाज के उच्च वर्ग और संपन्न लोगों द्वारा उनके शोषण और अवसरों से वंचित करने के तरीकों पर कें द्रित हैं। आनंद भारतीय साहित्य जगत के एक प्रसिद्ध अंग्रेजी-भाषा के आलोचक हैं। आनंद एक विपुल लेखक हैं जो अंग्रेजी और हिंदी दोनों भाषाओं में लिखते हैं। उनकी रचनाओं में उपन्यास, लघु कथाएँ और कला पर लेख शामिल हैं। आनंद उन लोगों में से थे जिन्होंने हिंदुस्तानी मुहावरों का अंग्रेजी में अनुवाद किया। भारत के गरीबों का उनका चित्रण इतना सटीक है कि उनके प्रति सहानुभूति महसूस किए बिना रहना मुश्किल है। आ नंद अंग्रेजी में लिखने वाले पहले भारतीय उपन्यासकार हैं, और उनकी रचनाएँ उत्पीड़ित भारतीय लोगों की वास्तविक कठिनाइयों को दर्शाती हैं। आनंद हाशिए पर पड़े समूहों की वकालत करने वाले एक अग्रणी लेखक के रूप में उभरे। उनके कई लोकप्रिय पात्र हाशिए पर स्थित समुदायों से आते हैं। आनंद की काल्पनिक दुनिय ा में अधिकतर सफाईकर्मी, कुली, किसान और कारखाना कर्मचारी जैसे गरीब और बेसहारा लोग ही निवा स करते हैं। वर्तमान अध्ययन में खोजपूर्ण, व्याख्यात्मक, मूल्यांकनशील और विश्लेषणशील शोध पद्धति का उ पयोग किया जाएगा। मुल्क राज आनंद, जो सामाजिक न्याय के प्रति गहरी प्रतिबद्धता रखने वाले उपन्यास कार हैं, ने इस विषय पर कई रचनाएँ लिखी हैं। उनके नाम से एक दर्जन से अधिक पुस्तकें, सत्तर लघु कथाएँ और कई निबंध एवं लेख प्रकाशित हो चुके हैं। प्राथमिक और द्वितीयक दोनों स्रोतों से प्राप्त जानकारी को संक लित किया गया है। सामाजिक विवेचना मुल्क राज आनंद पूंजीवाद की कमियों के बारे में बात करते हैं। हमा रे द्वारा चयनित लेखक मुल्क राज आनंद औपनिवेशिक भारत की कहानी को देश के सबसे निचले तबके के प रिप्रेक्ष्य से प्रस्तुत करते हैं। मुल्क राज आनंद एक सम्मानित लेखक हैं जिनकी रचनाओं ने अंग्रेजी में भारतीय साहित्य के विकास को बहुत प्रभावित किया है। संक्षेप में कहें तो, आनंद एकमात्र ऐसे प्रकाशित लेखक हैं जि न्होंने बेघर और समाज से बहिष्कृत लोगों की दुर्दशा को उजागर किया है। एक ऐसी आवाज़ जो सशक्त और प्रभावशाली है, फिर भी परंपरा और रीति-रिवाजों के घुटन भरे ताने-बाने में दबी हुई है, आनंद की रचनाओं में एक निरंतर अंतर्धारा की तरह प्रवाहित होती है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

निम्न सामाजिक वर्गों और जातियों के लोगों को अक्सर हाशिए पर धकेल दिया जाता है। चूंकि उन के पास उच्च वर्ग को चुनौती देने के लिए संसाधनों की कमी होती है, इसलिए वे पीड़ित के रूप में अपनी स्थि ति को स्वीकार कर लेते हैं और उत्पीड़न के आगे झुक जाते हैं। वे अपनी पहचान बताने या सार्वजनिक रूप से अपनी स्थिति का खुलासा करने में असमर्थ होते हैं। "हाशिए पर धकेलना" शब्द समाज के हाशिए पर मौजूद हर व्यक्ति को संदर्भित करता है, न कि केवल "अछूतों" को। उच्च वर्ग द्वारा नियंत्रित समाज में, इन हाशिए प र धकेले गए लोगों के पास सूचना, शिक्षा और सत्ता तक पहुंच सहित अपने जीवन स्तर को सुधारने के सीमि त अवसर होते हैं। साहित्य एक ऐसा हथियार है जो उत्पीड़ितों के अधिकारों की रक्षा करने की क्षमता प्रदान करता है। भारतीय अंग्रेजी लेखकों ने, अन्य वैश्विक साहित्यों के लेखकों की तरह, हाशिए पर धकेले गए लोग ोंं के मुद्दों पर विशेष ध्यान दिया है।

संयोगवश, मुल्क राज आनंद की पहली पुस्तक, *अछूत* (1935), महात्मा गांधी से बहुत प्रभावित थी । यह उत्कृष्ट रचना भारत की सबसे बड़ी सामाजिक बुराई, वर्ण व्यवस्था और मनुस्मृति की प्रथा को संबोधि त करती है, जैसा कि मनुस्मृति में वर्णित है।

यह उपन्यास हाशिए पर रहने वाले लोगों के दयनीय जीवन पर केंद्रित है, जो समाज के केंद्र में आक र अपनी परिस्थितियों को बेहतर बनाने का प्रयास करते हैं। आनंद ने निम्नवर्गीय मानसिकता की आंतरिक क ार्यप्रणाली और उनकी वास्तविक जीवन स्थितियों को उजागर किया है। भारतीय समाज में निम्नवर्गीय स्थ िति सामाजिक स्थिति (या "जाति"), लिंग और यौन अभिविन्यास द्वारा निर्धारित होती है। हमारे देश के ल ोग जाति व्यवस्था से बुरी तरह प्रभावित हुए हैं। ब्रिटिश शासन के दौरान भी स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया। हमारे देश में जाति व्यवस्था की जड़ें प्राचीन काल में हैं। छुआछीटी एक सामाजिक बुराई है जो जाति व्यवस्था के परिणामस्वरूप विकसित हुई। हिंदू समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, विषय और शूद्र चार प्रमुख जातिय ाँ हैं। ब्राह्मण अपने लगभग दैवीय दर्जे के कारण समाज के शिखर का प्रतिनिधित्व करते थे। क्षत्रिय अपने योद्धा होने के कारण देश के रक्षक थे। चूंकि वैश्यों का ध्यान धन पर केंद्रित था, इसलिए उन्हें निम्न दर्जा दिय ा गया और उन्हें धन सृजनकर्ता कहा गया। शूद्र सबसे निचली जाति के मजदूर थे, जो झाड़ू-पोछा जैसे काम करते थे। उनके काम की प्रकृति के कारण, सफाईकर्मियों और कूड़ा बीनने वालों को नीची नज़र से देखा जात ा था। ऐसा माना जाता था कि किसी सफाईकर्मी या कूड़ा बीनने वाले के छूने से उच्च जाति के हिंदू अपवित्र हो जाएंगे, क्योंकि उन्हें मानव मल को हाथों से साफ करना पड़ता था। मुल्क राज आनंद द्वारा जाति व्यवस्थ ा की बुराइयों की निंदा करने वाली विरोध पुस्तक " *अछूत* " ने व्यापक ध्यान आकर्षित किया।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

" *अनटचेबल की* उत्पत्ति उस स्वतंत्रता की गाथा से हुई थी जिसे मैंने हिंदुओं के सदियों पुराने झूठों के विरुद्ध सत्य के लिए जीतने का प्रयास किया था, जिनके द्वारा वे भेदभाव को कायम रखते थे," वे पुस्तक की प्रेरणा के बारे में कहते हैं। प्राचीन भारतीय उच्च वर्गों के जाति के संबंध में कुछ ऊंचे विचार थे। महाकाव्य महाभारत में कई बार एक आवाज सुनाई देती है, "जाति, जाति - कोई जाति नहीं है!" क्योंकि मैं करुणा से प्रेरित था, मैं इस सत्य को अनेक हिंदू नरकों में "मृत आत्माओं" के साथ साझा करना चाहता था, इस आशा में कि यह मुझे अपने पापों का प्रायश्चित करने के लिए प्रेरित करेगा (जॉर्ज 19)।

मुल्क राज आनंद की 1935 में प्रकाशित पहली पुस्तक, जिसका शीर्षक " अछूत " था, में निम्न जाति के हिंदू, जिन्हें "अछूत " कहा जाता है, अस्तित्व और पहचान के लिए संघर्ष करते हैं। वे लगातार गरीबी और सामाजिक अन्याय के शिकार होते हैं। उनका जीवन संघर्ष कभी खत्म नहीं होता। उच्च जाति के हिंदू उन्हें मानसिक और शारीरिक रूप से प्रताड़ित करते हैं, और उन्हें यह सब सहना पड़ता है। उस जाति में जन्म लेना एक अभिशाप है जिसे वे जीवन भर ढोते हैं। उपन्यास का नायक, "बाखा", जो बुलशाह कस्बे के सभी सफाईकर्मियों के जमादार लखा का पुत्र है, इस स्थिति का प्रतीक मात्र है, और कहानी उसके जीवन के एक दिन में घटित होती है। यह उसके जीवन का एक और दिन है जिसमें भूख, आशा, छोटी-मोटी खुशियाँ, अपमान और निराशा शामिल हैं।

कहानी की शुरुआत अछूतों की बस्ती में जीवन के विस्तृत वर्णन से होती है। बाखा के पिता उसे दिन भर के काम पर जाते ही गालियों की बौछार से घेर लेते हैं: "उठो, ओए, तू बाख्या, ओए सूअर का बच्चा!" "...क्या जाग गए? उठो, हे नाजायज औलाद (आनंद 5-6)।" बाखा, जो अपने जैसे अछूतों के शोषण और अत्याचार का प्रतीक है, को रोज़ाना ऐसे हमलों का सामना करना पड़ता है। यह जाति उच्च सामाजिक वर्गों के लोगों के लिए सार्वजनिक सुविधाओं और सड़कों की स्वच्छता बनाए रखने के लिए ज़िम्मेदार है। उनके पास मिट्टी की दीवारों वाली, एक कमरे की झोपड़ियों में रहने के अलावा कोई विकल्प नहीं है, जिनमें जल निकासी व्यवस्था न होने के कारण लगातार दुर्गंध आती रहती है। सुबह से शाम तक उसे भेदभाव सहना पड़ता है। विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के प्रति तिरस्कार, पाखंड और दुर्व्यवहार। मनुष्यों के हाथों उसे जो कुछ सहना पड़ता है, वह जानवरों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार से कहीं अधिक बुरा है। भूख लगने पर उसे तीसरी मंजिल से चपातियाँ फेंकी जाती हैं। इसी तरह, जलेबियाँ उसे कुत्ते को हड्डी की तरह फेंकी जाती हैं। एक हिंदू व्यापारी उस पर सिगरेट फेंकता है। आज सुबह उसके लिए अपमानों का सिलसिला ही रहा है। जब उच्च जाति के हिंदू लल्लाजी उसे थप्पड़ मारते हैं और उस पर अपने स्पर्श से "अपवित्र" करने का आरोप लगाते हैं, तो वह अविश्वास से भर उठता है। आनंद अपने लेखन में बाखा द्वारा सहन किए गए भावनात्मक और शारीरिक दर्द का

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

वर्णन करते हैं। हालाँकि वह शारीरिक रूप से ऐसा करने में सक्षम है, फिर भी वह कुछ नहीं कहता, अपने अ पमान को भाग्य पर छोड़ देता है। बाखा द्वारा उच्च जाति के एक हिंदू को छूना और अपवित्र करना (!) केवल उस जाति के बहिष्कृत सदस्यों की दयनीय स्थिति को उजागर करता है। बाखा में विरोध की भावना ऐसी ह ी दुखद घटनाओं और कष्टदायक अनुभवों से उत्पन्न हुई। हालांकि, वह चुपचाप पीड़ा सहता है क्योंकि उसके दोस्तों और परिवार ने उसे छोड़ दिया है।

"सबऑल्टरन स्टडीज़" नामक अध्ययन क्षेत्र, जो 1980 के दशक के आरंभ में ही अस्तित्व में आया, क ा मूल उद्देश्य ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर पड़े और शोषित लोगों को आवाज़ देना था। सबऑल्टरन सिद्ध ांत में "अन्य" वह व्यक्ति है जिसे उसकी सामाजिक स्थिति, जातीयता या लिंग के कारण चुप करा दिया ग या है। यह विचार डेरिडा के विखंडनवादी ढांचे से उपजा है। प्रभुत्वशाली समूह अपने मूल्यों का निर्माण कर ता है और उन्हें अधीनस्थ समूह, या "अन्य" पर थोपता है। सबऑल्टरन अध्ययन के विद्वानों ने अभिजात वर्ग के इतिहास और समकालीन साम्राज्यवादी इतिहास के यूरोकेंद्रित झुकाव पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय व र्ग, जाति, लिंग, नस्ल और संस्कृति के संदर्भ में सबऑल्टरन पर ध्यान केंद्रित किया। उन्होंने तर्क दिया कि रा जनीतिक वर्चस्व मौजूद था, लेकिन वह आधिपत्यवादी नहीं था। प्रमुख समर्थकों में रणजीत गुहा और गायत्र ी चक्रवर्ती स्पिवक शामिल थे, जिन्होंने इतिहास को इस तरह से पुनर्लेखन करने का प्रयास किया जिससे श ोषित समूहों को अधिक सशक्त भूमिका मिल सके। मुल्क राज आनंद द्वारा लिखित 1935 के उपन्यास ' *अछू त' को* दोहरे अर्थों वाला निम्नवर्गीय समाज का अध्ययन माना जाता है। पहला, यह कहानी उपनिवेशित औ र निम्नवर्गीय/अन्य लोगों का प्रामाणिक वृत्तांत है। दूसरा, यह उपन्यास भारतीय समाज के सबसे निचले तब के के बहिष्कृत लोगों के जीवन पर केंद्रित है और इस प्रकार उनकी दुर्दशा का एक आलोचनात्मक विश्लेषण प्र स्तुत करता है।

'अछूत' का मुख्य पात्र बाखा, एक आदर्श *अछूत* है जो लाखों अछूतों द्वारा सहन किए गए दर्द, शोक, निराशा, दुर्भाग्य, अन्याय, असुरक्षा, दुविधा, परिस्थिति, परीक्षा और कष्टों का प्रतीक है। ' *अछूत'* का मुख्य प ात्र बाखा नाम का एक साधारण सफाईकर्मी है जो स्वतंत्रता-पूर्व भारत में काम करता है। यह निम्न वर्गों के मध्य और उच्च वर्गों के प्रति आक्रोश और घृणा को उजागर करता है। आक्रमणकारी ब्रिटिश और ईसाई, उच्च जाति के हिंदू, निम्न जाति के हिंदू और मुस्लिम समुदाय सभी एक ही कब्रिस्तान का उपयोग करते हैं, और उ नके बीच का आपसी संबंध तनावपूर्ण है। यह पुस्तक एक ऐसे हाशिए पर स्थित समाज का अन्वेषण करती है जो भारतीय अंग्रेजी लेखकों के लिए लाभदायक हो सकता है। यह भारत की जाति व्यवस्था के कारण उत्पन्न

समस्याओं और इससे भारत के *अछूत* हिंदुओं में उत्पन्न आशावाद के मुद्दे को उठाती है। कहानी एक निष्पक्ष द र्शक के दृष्टिकोण से मुख्य पात्र का अनुसरण करती है।

निष्कर्ष :

आनंद आधुनिक समाज में निम्न जाति के व्यक्ति होने के बोझ और पीड़ा का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। साथ ह ी, आनंद यह भी दर्शाते हैं कि हिंदू संस्कृति में सबसे निचली जातियाँ धर्म, साम्राज्यवाद और गरीबी जैसी चीजों से कैसे प्रभावित होती हैं। उनकी कई अश्लील रचनाओं में "अस्पृश्यता" शब्द का प्रयोग होता है। एक अं ग्रेजी-भारतीय उपन्यास का मुख्य पात्र बाखा नाम का एक अकेला छोटा लड़का है। वह लंबे समय तक बोलत ा है और कहानी में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ब्राह्मण और मंदिर के पुजारी उस नीच ग्रामीण लड़के क ो शहर में प्रवेश करने के प्रयास में अपमानित और नीचा दिखाते हैं। यह पाया गया है कि बाखा को मानसि क और शारीरिक दोनों तरह से प्रताड़ित किया गया है। आनंद आधुनिक समाज में निम्न जाति के व्यक्ति हो ने के बोझ और पीड़ा का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। साथ ही, आनंद यह भी दर्शाते हैं कि हिंदू संस्कृति में सब से निचली जातियाँ धर्म, साम्राज्यवाद और गरीबी जैसी चीजों से कैसे प्रभावित होती हैं। उनकी कई अश्लील रचनाओं में "अस्पृश्यता" शब्द का प्रयोग होता है। एक अंग्रेजी-भारतीय उपन्यास का मुख्य पात्र बाखा नाम का एक अकेला छोटा लड़का है। वह लंबे समय तक बोलता है और कहानी में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शहर में प्रवेश करने की कोशिश कर रहे उस साधारण ग्रामीण लड़के को ब्राह्मण और मंदिर के पुजारी अपमा नित और नीचा दिखाते हैं। यह पाया गया है कि बाखा को मानसिक और शारीरिक दोनों तरह से प्रताड़ित क िया गया है।

संदर्भ सूची :

[1] आनंद, मुल्कराज। "अक्रॉस द ब्लैक वाटर्स।" नई दिल्ली, ओरिएंट पेपरबैक्स, 2008।

[2] आनंद, एमआर "विश्व रंगमंच के संदर्भ में भारतीय रंगमंच।" 2004।

[3] आनंद, एमआर "अछूत।" पेंगुइन बुक्स इंडिया: नई दिल्ली, 2001।

[4] आनंद, मुल्कराज। "दो पत्ते और एक कली।" न्यूयॉर्क, लिबर्टी प्रेस, इंक, 1954।

[5] भट्टाचार्य, अर्नब। "भारत को समझना: भारतीय अंग्रेजी कथा साहित्य में अध्ययन।" कोलकाता: बुक्स वे , 2010। मुद्रित।

[6] बिस्वास, अर्चना (धर)। "स्वयं और समाज: अंग्रेजी में भारतीय लेखन के साथ हमारा सफर।" कोलकाता : बंगाल प्रोटोटाइप कंपनी, 2013। मुद्रित।

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

[7] ब्लूमेल, के. "युद्ध का शिकार, साम्राज्य का शिकार: इंग्लैंड में मुल्क राज आनंद।" ब्रिटिश भारत के साहित्य में नई रीडिंग, सी. 1780-1947, 9, 301, 2007.

[8] कावसजी, एस. "लेखक से आलोचक: मुल्क राज आनंद के पत्र।" कलकत्ता: राइटर्स वर्कशॉप, 1973.

[9] कावसजी, एस. "मुल्क राज आनंद की एक प्रेमी की स्वीकारोक्ति।" इंटरनेशनल फिक्शन रिव्यू, 1977.

[10] डांगल, अर्जुन. संपादक. "ज़हरीली रोटी: आधुनिक मराठी दलित साहित्य से अनुवाद।" हैदराबाद: ओरिएंट लॉन्गमैन लिमिटेड, 1994.

[11] धवन आर.के. "मुल्क राज आनंद के उपन्यास।" नई दिल्ली, प्रेस्टीज बुक्स, 1992.

[12] संपादक. चतुर्वेदी वी., वर्सो, "औपनिवेशिक भारत के इतिहासलेखन के पहलुओं पर।" सबाल्टर्न स्टडीज और पोस्टकोलोनियल की मैपिंग, 2000.

[13] फोर्स्टर, ई.एम. "अछूत। मुल्क राज आनंद द्वारा।" नई दिल्ली: अर्नोल्ड एसोसिएट्स, 1935, 7 - 10.

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

'सुनील देवधर के रेडियो साहित्य में स्त्री विमर्श'

कु. लता वर्मा,
डॉ. सोनू जेसवानी

सारांश :

साहित्य समाज का दर्पण होता है और रेडियो साहित्य उस दर्पण की वह प्रतिध्वनि है, जिसने साक्षरता और भूगोल की सीमाओं को लांघकर समाज के सुदूर कोनों तक अपनी पहुँच बनाई है। इस सन्दर्भ में आधुनिक रेडियो साहित्य के क्षेत्र से आकाशवाणी के पूर्व सहायक निदेशक डॉ. सुनील देवधर जी ने रेडियो माध्यम की ध्वनि-प्रधान प्रकृति का कुशलतापूर्वक उपयोग करते हुए इसे रेडियो साहित्य के माध्यम से स्त्री के अंतर्मन की सूक्ष्म संवेदनाओं, उनके संघर्ष और अस्मिता के प्रश्नों को स्वर दिया है। देवधर जी के रेडियो नाटकों, रूपकों (Features) और वार्ताओं में स्त्री केवल एक मूक पात्र नहीं है, बल्कि समय के अनुसार वह अपनी नियति स्वयं तय करनेवाली एक सचेत व्यक्तित्व के रूप में उभरती हुयी दिखाई देता है।

सुनील देवधर जी के साहित्य में पारंपरिक पितृसत्तात्मक ढांचे के भीतर नारी के अस्तित्वगत संकट, शिक्षा के प्रति उसकी ललक और आर्थिक स्वावलंबन की आकांक्षाओं का यथार्थवादी चित्रण मिलता है। रेडियो साहित्य के अंतर्गत देवधर जी का दृष्टिकोण केवल सहानुभूतिपूर्ण नहीं, बल्कि परिवर्तनकामी है। उन्होंने रूढ़ियों और कुरीतियों के विरुद्ध नारी पात्रों को मुखर करते हुए समाज में एक नई चेतना का संचार किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि एक नारी का व्यक्तित्व दया की दृष्टि से न देखते हुए उसे समाज में शक्ति और प्रेरणास्रोत के रूप में देखना चाहिए | देवधर जी ने स्त्री के मौन स्वर को साहित्य में स्थान दिया है और उनके लेखन ने तत्कालीन समाज में स्त्री की सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति को जागृत किया है।

बीज शब्द – रेडियो-साहित्य, स्त्री विमर्श, परंपरा-आधुनिकता, अनुकरणीय मुद्दे |

प्रस्तावना :

आधुनिक हिंदी साहित्य के विविध आयामों में 'स्त्री विमर्श' एक अत्यंत सशक्त और अनिवार्य विमर्श के रूप में उभरा है। स्त्री विमर्श स्त्री की स्वतंत्र अस्मिता, उसके संघर्ष, संवेदना और अधिकारों की पहचान का वैचारिक आंदोलन है। रेडियो, जो एक श्रव्य माध्यम (Audio Medium) है, यह शब्दों और

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

ध्वनियों के माध्यम से स्त्री के अंतर्मन की गुत्थियों को सुलझाने और उसे समाज के समक्ष उनकी समस्याओं को लाने में अहम भूमिका निभाता है। इस संदर्भ में डॉ. सुनील देवधर का रेडियो साहित्य विशेष स्थान रखता है। देवधर जी ने न केवल रेडियो की तकनीकी बारीकियों को समझा, बल्कि उन्होंने अपने रेडियो साहित्य नाटकों, रूपकों (Features) और वार्ताओं के माध्यम से स्त्री-जीवन के यथार्थ को एक नया दृष्टिकोण प्रदान किया है। डॉ. सुनील देवधर जी कहते हैं - "साहित्य समाज की विडंबनाओं का समाधान करता है तथा जब कभी राजनीति लड़खड़ाती है तो साहित्य उसे संभाल लेता है |"१

डॉ. सुनिल देवधर कृत "शब्द कलश" रचना का प्रथम संस्करण २००५ को प्रकाशित हुआ । यह आकाशवाणी के कार्यक्रम से सम्बन्धित है, जिसे सबसे पहले "गुलदस्ता' नाम से प्रसारित किया जाता था। जिस तरह सृष्टि में बदलाव का नियम रहता है, ठीक उसी तरह रेडियो कार्यक्रम के क्षेत्र में भी समय के साथ बदलावों को स्वीकारते हुई ६ जुलाई, २००४ को इस कार्यक्रम का नाम बदलकर 'कलश' नाम देकर उसे प्रस्तुत किया जाने लगा। इसमें कवि, कविता, विधा, शब्द, साहित्य का क्षेत्र, संवाद, यात्रा वृत्तांत, समय, विकास, स्त्री, असंतुष्टि, वृक्ष, शांति, रिश्ता, भारतीय परम्परा, विचार, सामाजिक स्थितियाँ, छायावाद, एक अवसर, पत्रकारिता का उद्देश्य, आधुनिक विज्ञान, राष्ट्रीय एकता आदि विषयों का विवरण दिया गया है। इस किताब के विवरण में मुख्यत: भारतीय स्त्री विमर्श को केंद्रित किया है, जिसके कई रूप दिखाई देते हैं। देवधर जी द्वारा प्रस्तुत साहित्य में भिन्न क्षेत्र की नारियां अपने अस्तित्व का बोध करवाती हैं| इनके साहित्य के दृष्टिकोण से भारतीय नारी अपनी सांस्कृतिक परंपरा से जुड़कर अपने जीवन-मूल्यों का परिचय अपने अनुभव के माध्यम से देती है| इससे समय एवं परिस्थिति के अनुसार स्वयं को उस ढांचे में नारी किस प्रकार समाहित करती जाती है, इसका एक सजीव ध्वनि-चित्र देवधर जी के रेडियो साहित्य द्वारा रेखांकित किया गया है| इसके परिणामस्वरूप वर्तमान जीवन के सभी पहलुओं का बोध रखने के कारण स्त्री का व्यक्तित्व और अधिक समर्थ होता जा रहा है, इससे श्रोता अच्छे से अवगत होते हैं |

आज वर्तमान समय में नारी शिक्षित होकर भी स्वयं को पीड़ित ही अनुभव करती है | क्योंकि सदियों से जिन समस्याओं से वह जूझती आ रही है, उसे वह आज भी नए रूप में संघर्ष करती दिखाई देती है | एक स्त्री में इतनी शक्ति एवं साहस होता है कि वह सम्पूर्ण समाज एवं विश्व में परिवर्तन की लहर ला सकती सकती है | इसलिए नारी को पंख देने का दायित्व समाज का होता है | क्योंकि एक स्त्री दो घरों का दीपक होती है और इस ज्ञान के दीपक से सभी ओर प्रकाश फैलाती रहती है, जिससे वह स्वयं के साथ-साथ समाज का भी विकास करती हैं |

'लिखी कागद कोरे' यह काव्य संग्रह २०१३ में प्रकाशित हुआ है | इस संग्रह में रेडियो कार्यक्रमों से सम्बंधित छह पहलुओं- विविध सन्दर्भ, व्यक्ति संदर्भ, फिल्म संदर्भ, कहानी संदर्भ, कविता संदर्भ, स्वास्थ्य संदर्भ आदि का विश्लेषण किया गया है | इसमें प्रथमत: "विविध सन्दर्भ" विवरण के अंतर्गत १३८ विभिन्न लेख प्रस्तुत किये गये हैं, जिनमें देश, औद्योगिक क्रांति, विचार मंथन, समाज, बेटियां,

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

विज्ञान, शिक्षा, स्त्री, साहित्य, आरक्षण, नारी विमर्श आदि विषयों का उल्लेख किया गया है | देवधर जी ने मुख्यत: इसमें एक नारी के जीवन से जुड़े सभी पक्षों को विश्लेषित किया है | क्योंकि स्त्री अपने जीवन के प्रत्येक क्षण में उतार-चढ़ाव का अनुभव करते हुए अपना जीवन व्यतीत करती है | आज का आधुनिक दौर तकनीकी के क्षेत्र में बहुत विकास कर चुका है और नए-नए उपकरण जुड़ते ही जा रहे हैं, जिससे सुविधाओं भरे संसाधन से मानव-जीवन सरल होता जा रहा है | यह संसाधन जीवन को जितना सरल बनाता है, ठीक उसके विपरीत समाज का दृष्टिकोण सिकुड़ता जा रहा है | इसका प्रभाव समाज की महिलाओं और पुरुषों में भेदभाव की विचारधाराओं से स्पष्ट दिखाई देता है | यही धारणा आनेवाली पीढ़ियों के लिए एक चुनौती बनकर उभरती दिखेगी | इसी के सन्दर्भ में बेटियां कहती हैं ...

"हम तेरे आँगन के माणने, तोरण, वन्दनवार द्वार के |
हम ही चहक बाल कलियों की, हम हल्दी कुमकुम का रंग हैं |
हम देहरी की रंगरोलियाँ हैं, हम तेरी प्यारी बिटियाँ हैं |"३

आधुनिक समय में भारतीय समाज के स्त्रियों की स्थितियों में परिवर्तन दिखाई देने लगे हैं, जिससे आर्थिक रूप से संपन्न पारिवारिक विचारधाराओं में यह बदलाव दिखाई देने लगे हैं, परन्तु अब भी आर्थिक रूप से कमजोर परिवार में स्त्रियों को दुय्यम दर्जे का मानते हैं | इससे यह स्पष्ट दिखाई देता है कि आज भी स्त्रियाँ अपने परंपरागत रीति-रिवाजों से युक्त जीवन में अस्तित्व के लिए संघर्ष करती ही आ रही हैं, जिसका अंत असंभव-सा लग रहा है |

देवधर जी द्वारा 'व्यक्ति सन्दर्भ' विवरण में स्त्री के रूप में मीराबाई, सिस्टर निवेदिता, एनी बेसेंट का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है | यह सिर्फ स्त्रियों के नाम मात्र नहीं बल्कि इनके जीवन ने सभी स्त्रियों एवं समाज के समक्ष एक आदर्श प्रतिमा की स्थापना की है | मीराबाई, जिन्होंने समाज के ऐतिहासिक और परंपरागत काले पक्ष को चुनौती देते हुए भक्तिभाव की विचारधाराओं से समाज को एक नये दृष्टिकोण की ओर ले गईं | सिस्टर निवेदिता, एक पाश्चात्य महिला होने के बाद भी उन्होंने भारतीय आस्थाओं को अपनाते हुए, बंगाल के कई विद्वानों के संपर्क में आकर समाज में अपनी निस्वार्थ सेवा प्रदान की | एनी बेसेंट जो एक विदेशी महिला थीं और एक प्रभावी वक्ता के रूप में जानी जाती थीं | वे भारत में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में मालवीय जी के संपर्क में आकर उन्होंने कई व्याख्यान भी दिए | उनके इस कदम से उनके पति से मतभेद होते चले गये | परिणामत: उन्हें अलग होना पड़ा | इसके पश्चात् वे सेक्युलर सोसायटी में शामिल हो गईं | इस तरह सुनील देवधर जी ने रेडियो साहित्य द्वारा नारी के मन को पढ़ा और उनके संघर्ष को आवाज भी देते गए |

'सुविख्यात मनीषी-संवादों के आईने में' नामक रेडियो साक्षात्कार संग्रह २०१६ में प्रकाशित किया गया है, जिसमें देवधर जी ने अलग-अलग क्षेत्र के १२ प्रसिद्ध विद्वानों के साथ संवाद प्रस्तुत किये हैं | इसमें धर्म, अध्यात्म, फिल्म, खगोलशास्त्र, समाजसेवक आदि क्षेत्रों के मनीषियों का समावेश किया

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

गया है | इस विवरण में देवधर जी ने महिला सशक्तीकरण का सन्देश देते हुए मुख्यत: नृत्य क्षेत्र की व्यक्तित्व कथक गुरु मनीषा ताई साठे जी से संवाद साधा है | नन्दकेश्वर रचित 'अभिनय दर्पण' का एक श्लोक है-

"आस्येन आलंबयेत् गीतं हस्तेनार्थ प्रदर्शयते ।
चक्षुर्थ्याम दर्शयेत भावम् पादाभ्याम् तालमाचरेत् ||"४

प्राकृतिक रूप से मानवी जीवन में स्वाभाविक रूप से नृत्य के बीज स्थापित रहते हैं | समय के अनुसार उन बीजों का विकास होता जाता है | इस सन्दर्भ में प्रसिद्ध कथक नृत्यांगना एवं ज्येष्ठ कथक गुरू मनीषा ताई साठे जी ने अपने सम्पूर्ण जीवन को नृत्य के कलाकौशल में व्यतीत किया है | इसके पश्चात् इन्होने पुणे में 'मनीषा नृत्यालय' संस्था की स्थापना भी की | अपने जीवन में इन्होंने मुख्य रूप से कलात्मक प्रयोग, संस्थागत नेतृत्व और सामाजिक बाधाओं को तोड़ते हुए अपने व्यक्तित्व को सशक्त रूप दिया है | इन्होंने अपने नृत्य के माध्यम से आधुनिक समस्याएँ, दहेज प्रथा, कन्या भ्रूणहत्या जैसी गंभीर समस्याओं को व्यक्त किया है | इनकी नृत्य कला ने सामाजिक बाधाओं को तोड़ते हुए स्त्रियों को आवाज देने का महत्वपूर्ण कार्य किया है |

कहते हैं कि "प्रकृति का सबसे सुन्दर रूप नारी है | नारी के रूप में संसार को मधुरतम, उच्चतम और श्रेष्ठतम संस्कारों का वरदान मिला | नारी का त्याग, उसका अमर प्रेम, उसकी निष्काम कर्म-साधना समस्त प्रेरणाओं की अमित प्रभा है |"५ इसी संदर्भ में सुविख्यात सामाजिक कार्यकर्ता सिंधुताई सपकाल जी का उल्लेख आता है, जिन्हें प्यार से 'माई' कहा जाता है | इनका जीवन एक ऐसी स्त्री की कहानी पेश करता है, जिसने निस्वार्थ भाव से हजारों की माँ बनने तक का सफर तय किया |

"जब वो आये तो चेहरे पर रखरखाव था |
मगर वो नहीं देख सके जो मेरे दिल का घाव था ||"६

एक माँ का व्यक्तित्व ऐसा ही होता है, जो अपने दर्द को छुपाकर दूसरों को संभालती है, संवारती है | अत: में सिंधुताई सपकाल कहती हैं कि "जिसका कोई नहीं, उसकी मैं माँ हूँ |"७ इनका सम्पूर्ण जीवन जीवंत और प्रेरणादायी स्त्री का उदहारण है | उन्होंने अपने कठोर संघर्ष, अस्तित्व की लड़ाई और पितृसत्तात्मक समाज द्वारा दी गयी पीढ़ा के प्रति बदले की भावना न रखते हुए निस्वार्थ एवं ममता की भावना से समाज का दृष्टिकोण बदलने की मिसाल पेश की है |

'बिखरी सीपियां' यह लेख संग्रह २०२२ में प्रकाशित हुआ है। इसमें ३१ लेखों का संग्रह समावेश हैं, जिसमें देवधर जी ने हिंदी कविता में माँ, मानसिक सहचारिता, नारी तुम, लेखकीय कर्म, मानव जीवन, शब्दों का अर्थशास्त्र आदि विषयों पर विचार प्रस्तुत किये हैं | मनुष्य के जीवन से जुड़े अनेक विषय, घटनाएं, यथार्थ, कल्पनाएँ बिखरी होती हैं, जिसे लेखक ने 'बिखरी सिंपियां' के सृजनात्मक लेखन के माध्यम से एकत्रित करने की कोशिश की है।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

इसमें प्रथमत "हिन्दी कविता में मां" के अंतर्गत लेख मां जगत जननी की महिमा पर आधारित प्रस्तुत किया गया है, जिसमें एक स्त्री को मां के रूप में उसकी निस्वार्थ सेवा, प्रेम, ममता से युक्त छवि को उकेरा गया है। 'त्रिजटा' राक्षसी सीता के वात्सल्यमयी रूप के प्रति आकर्षित और समर्पित भाव लिए है | इस संदर्भ में 'त्रिजटा' राक्षसी सीता से कहती है, "त्रिजटा सुन बोली कर जोरी, मा तू बिपति संगिनी तैं मोरी"८ अर्थात जीवन जब कभी संघर्ष की परिस्थिति का सामना करना पड़े, तब-तब मुझे अपनी संगिनी ही समझना | इसी के सन्दर्भ में प्रसिद्ध कहावत है– "ईश्वर सशरीर हम सबके साथ रहना चाहता था, पर वो ऐसा कर नहीं पाया इसलिए, उसने माँ बना दी |"९ मधुप पांडेय जी के 'मां' पर कविता के माध्यम से कहते हैं-

"मां। अपने आप में
एक ऐसा नाम है,
जिसे शब्दों में बांधना
सचमुच ही
एक कठिन काम है।
देखिए न | शिशु को सहेजती | संवारती | संभालती
जो थपकियों की थाप है,
उसमें आरोह, अवरोह आलाप है |
किशोर मन पर | नेह लेखनी से लिखा |
काव्य अनुबंध है |
वह स्वयं...गीत है, गज़ल है, छंद है |"१०

हिन्दी कविता माँ ममता के महिमामंडन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह माँ के स्व के संघर्षों और सामाजिक पितृसत्ता द्वारा थोपे गए आदर्शों का विश्लेषण भी करती है | इस तरह से हिंदी कविता स्त्री के अदृश्य दुःख, घरेलू हिंसा को उभारती है, जिसे अक्सर भगवान के रूप में और ममता का दर्जा देकर उसके अस्तित्व को दबाने की कोशिश करता रहता है-

"नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत नग पग तल में
पियूष स्रोत सी बहा करो
जीवन के सुन्दर समतल में|"११

यह ब्रम्हांड स्त्री के अस्तित्व के बिना अधूरा एवं नीरस प्रतीत होता है क्योंकि भारतीय संस्कृति के अनुसार एक स्त्री को जननी का वरदान प्राप्त है | इसी के आधार पर चाणक्य कहते हैं, 'न स्त्री रत्न समं रत्नम्' अर्थात इस सृष्टि में सबसे अनमोल रत्न जो है, वह स्त्री है | क्योंकि एक स्त्री के रत्न के

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

समान दूसरा कोई रत्न नहीं बना है और न कभी बन पायेगा, जो परिस्थिति के अनुसार स्वयं को उसमें ढालता जाए एवं जरूरत पड़ने पर स्वयं के अस्तित्व के लिए आवाज भी उठाए |

'आकाश में घूमते शब्द' यह एक रेडियो रूपकों पर आधारित देवधर जी का साहित्य है, जिसमें भारतीय भूमि पर नारी शक्ति के रूप में 'झाँसी की रानी' शीर्षक युक्त रूपक प्रस्तुत किया गया है | इसमें झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के जन्म से लेकर जीवन के अंतिम क्षणों के संघर्षो का वर्णन किया गया है | इन्होंने केवल सिंहासन ही नहीं संभाला बल्कि सेनाओं का नेतृत्व करने और महिलाओं को भी सेना का प्रशिक्षण देने का अत्यंत अनुकरणीय कार्य किया | इससे उस दौर के समाज का 'समान अवसर' एवं 'नारी सशक्तीकरण' दिखाई देता है | इनका जीवन यह सिद्ध करता है कि एक स्त्री सिर्फ घर नहीं बल्कि समाज और सम्पूर्ण देश की रक्षा के अस्तित्व के लिए युद्ध के मैदान में खुद को कुर्बान कर सकती है |

"जाओ देवी, भारती रति, सम्मोहन तुम हो मधुर ध्यान |
तेरा स्वर अब भी है मुखरित, नहीं शिथिल वीणा की तान |
भरे हृदय अवरुद्ध कंठ, कंपित अधरों पर तेरा नाम |
रहेगा तब तक, चलेगा जब तक, जीवन का यह महायान |"१२

इस तरह से सुनील देवधर जी के रेडियो साहित्य से समाज में यही संदेश जाता है कि रानी लक्ष्मीबाई, मीराबाई, मनीषा ताई साठे, एनी बेसेंट, सिंधुताई सपकाल आदि सशक्त नारियों के जीवन से यही प्रेरणा लेनी चाहिए कि जीवन में परिस्थितियां कितनी भी कठिन क्यों न लगें, उसके बावजूद अपने संघर्ष, अपने अस्तित्व एवं अपने अधिकार के लिए लड़ना ही असली नारीत्व कहलाता है |

निष्कर्ष :

अत: इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सुनील देवधर ने अपने रेडियो साहित्य में स्त्री विमर्श को किताबी विमर्श से निकालकर एक जीवंत संवाद में बदल दिया है, जो आज के वैश्विक और तकनीक-प्रधान युग में भी अत्यंत प्रासंगिक है। इनके साहित्य में स्त्री केवल एक 'पात्र' नहीं है, बल्कि वह एक चेतनासंपन्न व्यक्तित्व है। उनके रेडियो साहित्य में हमें परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व में फंसी स्त्री, शिक्षा के प्रति जागरूक होती नारी और अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत महिला के विविध रूप देखने को मिलते

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

हैं। देवधर जी की विशेषता यह है कि वे स्त्री की पीड़ा को केवल सहानुभूति के स्तर पर नहीं देखते, बल्कि वे उसे एक 'सक्रिय कर्ता' (Active Agent) के रूप में चित्रित करते हैं, जो रूढ़ियों को तोड़ने का साहस रखती है। इससे समाज के समक्ष पारंपरिक स्त्री की विचारधाराओं से आगे बढ़कर सशक्त स्त्री का रूप मुखरित होता है |

अपने रेडियो साहित्य में स्त्री के विभिन्न रूपों का उदहारण देते हुए सुनील देवधर जी यह दर्शाते हैं कि समाज में स्त्री केवल वस्तु नहीं है, बल्कि वह स्वावलंबन और साहस का संगम हैं | इस स्त्री के अस्तित्व के संघर्ष का एकमात्र यही उद्देश्य है कि एक ऐसे समाज का निर्माण करना, जहाँ स्त्री और पुरुषों के मध्य समानता का दृष्टिकोण विकसित हो और स्त्री अपनी प्रतिभा का स्वतंत्र रूप से विकास कर सके |

संदर्भ ग्रंथ सूची

१ https://share.google/i5eBSRuGbWpK1UsrU
२ सुनील देवधर, 'शब्द कलश' (२००५), सप्तक प्रकाशन, छतरपुर मध्यप्रदेश |
३ सुनील देवधर, 'लिखी कागद कोरे' (२०१३), अतुल प्रकाशन, कानपुर, पृ. स. ५४
४ सुनील देवधर, 'संवादों के आईने में' (२०१६), सुभांजलि प्रकाशन, कानपुर, पृ. स. २५
५ वही पृ. स. १२३
६ वही पृ. स. १२४
७ वही पृ. स. १२४
८ सुनील देवधर, 'बिखरी सीपियाँ' (२०२२), आकाश गंगा पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ. स. ९
९ वही पृ. स. ९

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

१० वही पृ. स. १४

११ वही पृ. स. ४६

१२ सुनील देवधर, 'आकाश में घूमते शब्द', राम प्रसाद एण्ड संस, भोपाल, पृ. स. १०६

शोधार्थी
लता वर्मा
शोध निर्देशिका
डॉ. सोनू जेसवानी
राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज नागपुर विश्वविद्यालय, नागपुर |

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

"संवैधानिक आरक्षणाची सद्यस्थिती आणि आव्हाने: खाजगी क्षेत्रातील आरक्षणाची मागणी आणि स्थानिक स्वराज्य संस्थांमधील महिला आरक्षणाचा सामाजिक-राजकीय अन्वयार्थ."

प्रकाश सूर्यभान गजभिये
एम.ए. (राज्यशास्त्र)

डॉ. राष्ट्रपाल गणवीर
प्राध्यापक
महिला महाविद्यालय, नागपूर

गोषवारा (Abstract)

प्रस्तुत शोधनिबंधामध्ये भारतीय संविधानाने दिलेल्या आरक्षण धोरणाची सद्यस्थिती आणि त्यापुढील आव्हानांचा चिकित्सक अभ्यास करण्यात आला आहे. १९९१ नंतरच्या जागतिकीकरण, उदारीकरण आणि खाजगीकरणाच्या (LPG) धोरणामुळे सार्वजनिक क्षेत्रातील रोजगार संधी वेगाने आकसल्या असून, त्याचा थेट परिणाम घटनात्मक आरक्षणाच्या अंमलबजावणीवर झाला आहे. यालाच लेखक 'आरक्षणाची गळती' असे संबोधतात. या पार्श्वभूमीवर, खाजगी क्षेत्रात संवैधानिक आरक्षणाची मागणी का आणि कशी अनिवार्य होत आहे, याचे विश्लेषण या प्रबंधात केले आहे. दुसरीकडे, ७३ व्या आणि ७४ व्या घटनादुरुस्तीने स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये महिलांना दिलेल्या आरक्षणामुळे तळागाळातील लोकशाहीत महिलांचे राजकीय प्रतिनिधित्व वाढले आहे. मात्र, हे राजकीय सक्षमीकरण आणि खाजगीकरणामुळे उद्भवलेले आर्थिक असुरक्षिततेचे संकट यांमधील विरोधाभासाचा सामाजिक-राजकीय अन्वयार्थ लावण्याचा प्रयत्न या संशोधनात केला आहे. केवळ राजकीय पदे मिळून सामाजिक न्याय पूर्ण होत नाही, तर त्यासाठी आर्थिक सत्तेतही (खाजगी क्षेत्रातही) वाटा मिळणे आवश्यक आहे, हा मुख्य निष्कर्ष या प्रबंधातून मांडण्यात आला आहे.

बिजशब्द : संवैधानिक आरक्षण, खाजगीकरण, आरक्षणाची गळती, स्थानिक स्वराज्य संस्था, महिला आरक्षण, सामाजिक-राजकीय अन्वयार्थ, सार्वजनिक क्षेत्र, खाजगी क्षेत्रातील आरक्षण, सक्षमीकरण, सामाजिक न्याय

प्रस्तावना (Introduction)

भारतीय संविधानाचे शिल्पकार डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी 'सामाजिक लोकशाही' प्रस्थापित करण्यासाठी आरक्षणाची तरतूद केली होती. आरक्षण हे केवळ नोकरी मिळवण्याचे साधन नसून, ते सत्तेत आणि प्रशासनात हजारो वर्षांपासून वंचित राहिलेल्या घटकांना 'सहभाग' (Representation) मिळवून देण्याचे एक संवैधानिक साधन आहे. परंतु, गेल्या तीन दशकांत भारताच्या आर्थिक आणि राजकीय पटलावर झालेल्या बदलांमुळे या मूळ संकल्पनेसमोर गंभीर आव्हाने उभी राहिली आहेत.

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

अ) आर्थिक उदारमतवाद आणि आरक्षणाची गळती: १९९१ च्या आर्थिक सुधारणांनंतर भारताने 'मिश्र अर्थव्यवस्थे'कडून 'मुक्त अर्थव्यवस्थे'कडे वाटचाल सुरू केली. सार्वजनिक क्षेत्रातील उपक्रमांचे (PSUs) खाजगीकरण झाल्यामुळे आणि सरकारी नोकऱ्यांचे कंत्राटीकरण (Contractualization) वाढल्यामुळे, संविधानाने दिलेल्या आरक्षणाचा लाभ घेणाऱ्या जागांची संख्या लक्षणीयरीत्या घटली आहे. यालाच **'आरक्षणाची अदृश्य गळती'** असे म्हटले जाते. जेव्हा सरकारी क्षेत्रच आकसते, तेव्हा तिथे असलेल्या आरक्षणाचा लाभही आपोआपच मर्यादित होतो. यामुळेच आज 'खाजगी क्षेत्रात आरक्षणाची गरज' हा विषय राष्ट्रीय चर्चेचा केंद्रबिंदू ठरत आहे.

ब) राजकीय सक्षमीकरण आणि महिला आरक्षण: आर्थिक क्षेत्रात आरक्षणाची गळती होत असतानाच, दुसरीकडे राजकीय क्षेत्रात मात्र आरक्षणाचे एक यशस्वी मॉडेल उभे राहिले आहे. ७३ व्या आणि ७४ व्या घटनादुरुस्तीने स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये (ग्रामपंचायत, नगर परिषद, महानगरपालिका) महिलांना आरक्षण देऊन त्यांना सत्तेच्या मुख्य प्रवाहात आणले. यामुळे ग्रामीण आणि शहरी स्थानिक राजकारणात महिलांचे नेतृत्व उदयाला आले. हा बदल केवळ संख्यात्मक नसून तो गुणात्मकही आहे, कारण यामुळे स्त्रियांच्या निर्णय प्रक्रियेतील सहभागाला संवैधानिक वैधता प्राप्त झाली आहे.

क) संशोधनाची गरज आणि सामाजिक-राजकीय अन्वयार्थ: आजचा सर्वात मोठा पेच हा आहे की, आपण महिलांना आणि उपेक्षित वर्गांना राजकीय आरक्षण देऊन 'ग्रामसभेत' किंवा 'नगरपालिकेत' स्थान तर दिले आहे, पण त्याच वेळी खाजगीकरणामुळे त्यांच्या हातातील 'आर्थिक सक्षमीकरणाची' (नोकरीची) संधी हिरावली जात आहे. जोपर्यंत राजकीय सत्तेला आर्थिक सत्तेची जोड मिळत नाही, तोपर्यंत सामाजिक न्याय पूर्ण होऊ शकत नाही.

या पार्श्वभूमीवर, खाजगी क्षेत्रातील आरक्षणाची मागणी ही केवळ रोजगाराची मागणी नसून ती 'संवैधानिक समतेची' मागणी आहे. प्रस्तुत संशोधनाद्वारे आपण हे पाहणार आहोत की, स्थानिक स्वराज्य संस्थांमधील महिला आरक्षणाने जो सामाजिक बदल घडवला, तसाच बदल खाजगी क्षेत्रात आरक्षण लागू केल्यास घडून येईल का? तसेच, खाजगीकरणाच्या या युगात संविधानाने दिलेली आरक्षणाची हमी कशी टिकवून ठेवता येईल, याचा चिकित्सक अन्वयार्थ लावणे हा या प्रस्तावनेचा मुख्य उद्देश आहे.

संवैधानिक आरक्षणाची सद्यस्थिती आणि गळतीची आव्हाने

भारतीय संविधानातील अनुच्छेद १५(४) आणि १६(४) नुसार सामाजिक व शैक्षणिकदृष्ट्या मागासलेल्या वर्गांना शिक्षण आणि नोकऱ्यांमध्ये आरक्षणाचे संरक्षण दिले आहे. मात्र, गेल्या काही वर्षांत या संरक्षणाला 'खाजगीकरण' आणि 'धोरणात्मक बदल' यांमुळे मोठी गळती लागली आहे. या आव्हानांचे स्वरूप खालील मुद्द्यांच्या आधारे स्पष्ट करता येईल:

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

सार्वजनिक क्षेत्राचा संकोच (Shrinking Public Sector)

१९९१ पूर्वी भारतीय अर्थव्यवस्थेत सार्वजनिक क्षेत्राचा (Public Sector Units - PSUs) मोठा दबदबा होता, जिथे आरक्षणाचे नियम काटेकोरपणे पाळले जात असत. मात्र, निर्गुंतवणुकीकरण (Disinvestment) आणि अनेक सरकारी कंपन्यांचे खाजगीकरण झाल्यामुळे आरक्षणांतर्गत येणाऱ्या जागांची संख्या प्रचंड प्रमाणात घटली आहे. जेव्हा एखादी सरकारी संस्था खाजगी मालकीची होते, तेव्हा तिथे आरक्षणाचे घटनात्मक बंधन संपुष्टात येते, परिणामी पात्र उमेदवारांना त्यांच्या घटनात्मक अधिकारापासून मुकावे लागते.

नोकऱ्यांचे कंत्राटीकरण (Contractualization of Jobs)

सध्या सरकारी विभागांमध्येही 'कायमस्वरूपी' पदांऐवजी 'कंत्राटी' (Contractual) किंवा 'आऊटसोर्सिंग' (Outsourcing) पद्धतीचा अवलंब केला जात आहे. कंत्राटी पद्धतीने भरल्या जाणाऱ्या पदांवर अनेकदा आरक्षणाचे निकष लागू केले जात नाहीत. यामुळे आरक्षणाचे तत्त्व कागदावर राहते, परंतु प्रत्यक्ष अंमलबजावणीत मागासवर्गीय उमेदवारांना संधी नाकारली जाते. यालाच **'आरक्षणाची तांत्रिक गळती'** असे म्हणता येईल.

खाजगीकरणाचे धोरण आणि सामाजिक परिणाम

जेव्हा शिक्षण, आरोग्य आणि दळणवळण यांसारखी मूलभूत क्षेत्रे खाजगी संस्थांच्या ताब्यात जातात, तेव्हा तिथे प्रवेश आणि नोकरी या दोन्ही स्तरांवर आरक्षण धोक्यात येते. खाजगी क्षेत्र हे केवळ 'नफा' आणि 'गुणवत्ता' (Merit) या दोनच निकषांवर चालते, असे भासवले जाते. मात्र, या प्रक्रियेत 'समान संधी' आणि 'सामाजिक ऐतिहासिक पार्श्वभूमी' यांकडे दुर्लक्ष केले जाते, ज्यामुळे सामाजिक विषमता अधिक गडद होत आहे.

सर्वोच्च न्यायालयाचे विविध निकाल आणि आरक्षणाची मर्यादा

वेळोवेळी सर्वोच्च न्यायालयाने आरक्षणावर घातलेली ५० टक्क्यांची मर्यादा आणि पदोन्नतीमधील आरक्षणाबाबतचे संमिश्र निकाल यामुळेही आरक्षणाच्या सद्यस्थितीसमोर कायदेशीर आव्हाने उभी राहिली आहेत. 'क्रीमी लेयर'ची व्याप्ती वाढल्याने खऱ्या गरजूपर्यंत लाभ पोहोचण्यातही तांत्रिक अडचणी येत आहेत.

आर्थिक दुर्बल घटकांसाठीचे आरक्षण (EWS) आणि नवीन समीकरणे

१०३ व्या घटनादुरुस्तीद्वारे लागू करण्यात आलेल्या १०% ईडब्ल्यूएस आरक्षणाने आरक्षणाच्या मूळ 'सामाजिक मागासलेपण' या निकषाला 'आर्थिक' निकषाची जोड दिली आहे. यामुळे आरक्षणाची मूळ संकल्पना बदलली असून, यामुळे उपलब्ध जागांसाठीची स्पर्धा अधिक तीव्र झाली आहे.

आरक्षणाची ही गळती केवळ नोकऱ्या कमी होण्यापुरती मर्यादित नसून, ती उपेक्षित समाजाच्या 'निर्णय प्रक्रियेतील' सहभागाला सुरुंग लावणारी आहे. सार्वजनिक क्षेत्रातील ही गळती रोखण्यासाठी आणि सामाजिक न्याय टिकवण्यासाठी आता 'खाजगी क्षेत्रातील आरक्षणाची' मागणी ही अपरिहार्यता बनली आहे.

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

खाजगी क्षेत्रातील आरक्षणाची मागणी आणि आवश्यकता

भारताच्या बदलत्या आर्थिक संरचनेत सार्वजनिक क्षेत्राचा वाटा कमी होत असताना, रोजगाराच्या संधींचे मुख्य केंद्र आता 'खाजगी क्षेत्र' बनले आहे. अशा स्थितीत, सामाजिक न्यायाचा घटनात्मक उद्देश केवळ सरकारी नोकऱ्यांपुरता मर्यादित ठेवणे म्हणजे आरक्षणाच्या मूळ संकल्पनेला अर्थहीन ठरवण्यासारखे आहे. या मागणीची आवश्यकता खालील मुद्द्यांवरून स्पष्ट होते:

रोजगाराचे बदललेले केंद्र (Shift in Employment Landscape)

भारतातील एकूण रोजगारापैकी ९०% पेक्षा जास्त रोजगार हा असंघटित आणि खाजगी क्षेत्रात आहे. केंद्र आणि राज्य सरकारच्या नोकऱ्यांचे प्रमाण एकूण रोजगाराच्या तुलनेत आता अत्यंत नगण्य (साधारण २% ते ३%) राहिले आहे. जर देशातील बहुतांश संपत्ती आणि संधी खाजगी कंपन्यांच्या हातात असतील, तर तिथे सामाजिक विविधतेचा (Social Diversity) अभाव असणे हे लोकशाहीसाठी घातक आहे.

ऐतिहासिक वंचितांना मुख्य प्रवाहात आणणे

खाजगी क्षेत्रात अनेकदा 'गुणवत्ता' (Merit) हा निकष लावला जातो. परंतु, ही गुणवत्ता केवळ वैयक्तिक कौशल्यावर अवलंबून नसून ती उत्तम शिक्षण, कौटुंबिक पार्श्वभूमी आणि सामाजिक भांडवल (Social Capital) यावर आधारित असते. दलित, आदिवासी आणि इतर मागासवर्गीय समाजातील युवकांकडे गुणवत्ता असूनही, त्यांच्याकडे 'नेटवर्किंग' आणि 'शिफारस' (Referral) करण्याची यंत्रणा नसते. खाजगी क्षेत्रात आरक्षण किंवा 'सकारात्मक कृती' (Affirmative Action) लागू केल्यास या घटकांना हक्काची संधी मिळेल.

कॉर्पोरेट सामाजिक जबाबदारी आणि सामाजिक समता

खाजगी कंपन्यांना सरकारकडून स्वस्त दरात जमीन, वीज, पाणी आणि कर सवलती मिळतात. या सवलती जनतेच्या पैशातून दिल्या जातात. त्यामुळे, या कंपन्यांची ही नैतिक आणि कायदेशीर जबाबदारी आहे की त्यांनी समाजातील सर्व थरांतील लोकांना रोजगारात सामावून घ्यावे. केवळ 'नफा' हेच ध्येय न ठेवता 'सामाजिक समावेशकता' (Social Inclusion) हे ध्येय ठेवणे ही काळाची गरज आहे.

जागतिक उदाहरणे (Global Precedents)

जगात अनेक प्रगत देशांनी खाजगी क्षेत्रात अशा प्रकारची धोरणे राबवली आहेत:

- **अमेरिका:** अमेरिकेत खाजगी कंपन्यांना 'अफरमेटिव्ह ॲक्शन' (Affirmative Action) अंतर्गत आफ्रिकन-अमेरिकन आणि इतर अल्पसंख्याकांना प्राधान्य देणे बंधनकारक नसले तरी, त्याबाबतचे कडक अहवाल शासनाला द्यावे लागतात.

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

- **दक्षिण आफ्रिका:** तिथे 'ब्लॅक इकॉनॉमिक एम्पॉवरमेंट' (BEE) कायद्यांतर्गत खाजगी कंपन्यांमध्ये स्थानिक कृष्णवर्णीयांचा सहभाग अनिवार्य केला आहे. भारतातही याच धर्तीवर खाजगी क्षेत्रात आरक्षणाची किंवा प्रतिनिधीत्वाची मागणी केली जात आहे.

खाजगी क्षेत्रातील आरक्षणापुढील आव्हाने

ही मागणी रास्त असली तरी त्यासमोर काही तांत्रिक आव्हाने आहेत:

- **कार्यक्षमता आणि स्पर्धा:** खाजगी क्षेत्राचा असा युक्तिवाद आहे की, आरक्षणामुळे जागतिक स्पर्धेत त्यांची कार्यक्षमता कमी होईल.
- **कायदेशीर अडथळे:** सध्याच्या घटनात्मक तरतुदीनुसार खाजगी संस्थांवर आरक्षण लादणे हे त्यांच्या 'व्यवसाय करण्याच्या स्वातंत्र्यावर' (Article 19(1)(g)) गदा आणणारे ठरू शकते, असे काहींचे मत आहे.

खाजगी क्षेत्रातील आरक्षणाची मागणी ही केवळ नोकऱ्यांची मागणी नसून ती **'आर्थिक लोकशाही'** प्रस्थापित करण्याची मागणी आहे. जोपर्यंत खाजगी कंपन्यांचे बोर्ड रूम्स आणि ऑफिसेसमध्ये सामाजिक विविधता दिसत नाही, तोपर्यंत भारताचा विकास हा 'सर्वसमावेशक' म्हणता येणार नाही.

स्थानिक स्वराज्य संस्थांमधील महिला आरक्षण: सामाजिक-राजकीय अन्वयार्थ

भारतातील आरक्षणाच्या इतिहासात ७३ वी आणि ७४ वी घटनादुरुस्ती (१९९२-९३) हा एक मैलाचा दगड मानला जातो. या दुरुस्तीने स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये (ग्रामपंचायत, पंचायत समिती, जिल्हा परिषद, नगर पालिका आणि महानगरपालिका) महिलांसाठी ३३% आरक्षण अनिवार्य केले, जे आता महाराष्ट्रसह अनेक राज्यांमध्ये ५०% पर्यंत वाढवण्यात आले आहे. याचे सामाजिक आणि राजकीय परिणाम खालीलप्रमाणे आहेत:

राजकीय अवकाश आणि महिलांचे नेतृत्व (Political Space & Leadership)

पारंपारिक भारतीय समाजात राजकारण हे केवळ पुरुषांचे क्षेत्र मानले जात असे. आरक्षणाने स्त्रियांना 'उंबरठा ओलांडून' निर्णय प्रक्रियेत येण्याची कायदेशीर संधी दिली. आज भारतात लाखो महिला सरपंच, सभापती आणि महापौर म्हणून कार्यरत आहेत. यामुळे सत्तेचे 'स्त्रीकरण' (Feminization of Power) झाले असून, महिलांच्या राजकीय महत्त्वाकांक्षांना नवे धुमारे फुटले आहेत.

विकासाच्या प्राधान्यक्रमात बदल (Shift in Development Priorities)

अनेक संशोधनांतून (उदा. एस्थर डफ्लो यांचा अभ्यास) असे सिद्ध झाले आहे की, जेव्हा महिला सत्तेत येतात, तेव्हा विकासाचे प्राधान्यक्रम बदलतात. महिला लोकप्रतिनिधींनी प्रामुख्याने खालील विषयांवर भर दिला आहे:

- **स्वच्छता आणि पाणीपुरवठा:** गावात पिण्याच्या पाण्याची सोय आणि शौचालयांची निर्मिती.
- **शिक्षण आणि आरोग्य:** अंगणवाड्यांची सुधारणा आणि प्राथमिक आरोग्य केंद्रांची उपलब्धता.

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

- **दारूबंदी:** अनेक महिला सरपंचांनी आपल्या गावात दारूबंदीसाठी पुढाकार घेतला आहे.

सामाजिक परिवर्तन आणि पितृसत्ताक आव्हाने

राजकीय आरक्षणामुळे स्त्रियांच्या सामाजिक दर्जा सुधारण्यास मदत झाली असली तरी, 'सामाजिक अन्वयार्थ' लावताना काही आव्हाने स्पष्टपणे दिसतात:

- **'सरपंच-पती' संकल्पना:** आजही अनेक ठिकाणी निवडून आलेल्या महिलेच्या नावावर तिचा पती किंवा घरातील पुरुष सदस्य कारभार पाहतात. याला 'प्रॉक्सी' (Proxy) राजकारण म्हटले जाते.
- **अल्प सक्षमीकरण:** पद मिळाल्यानंतरही आर्थिक अधिकार किंवा प्रशासकीय ज्ञानाचा अभाव असल्याने महिलांना अनेकदा इतरांवर विसंबून राहावे लागते.

आर्थिक स्वावलंबनाचा अभाव: एक गंभीर पेच

संशोधनाचा हा सर्वात महत्त्वाचा निष्कर्ष आहे की, **महिलांना 'राजकीय आरक्षण' मिळाले आहे, परंतु 'आर्थिक आरक्षण' (नोकऱ्यांमध्ये) खाजगीकरणामुळे आकसले जात आहे.** जोपर्यंत स्त्री आर्थिकदृष्ट्या स्वावलंबी होत नाही, तोपर्यंत तिचे राजकीय पद हे केवळ शोभेचे बाहुले राहण्याची भीती असते. स्थानिक स्वराज्य संस्थांमधील आरक्षण हे सामाजिक परिवर्तनाचे पहिले पाऊल असले तरी, खाजगी क्षेत्रातील रोजगाराच्या संधींशिवाय ते अपूर्ण आहे.

लोकशाहीचे विकेंद्रीकरण आणि 'ग्रासरूट' सक्षमीकरण

महिला आरक्षणामुळे लोकशाही खऱ्या अर्थाने घराघरांत पोहोचली आहे. जेव्हा एक दलित किंवा आदिवासी महिला सरपंच बनते, तेव्हा तो केवळ एका व्यक्तीचा विजय नसून तो एका संपूर्ण वंचित समूहाचा सत्तेतील वाटा असतो. हा 'राजकीय अन्वयार्थ' सामाजिक न्यायाच्या प्रक्रियेला बळकटी देणारा आहे.

स्थानिक स्वराज्य संस्थांमधील महिला आरक्षण हे भारताच्या सामाजिक लोकशाहीचे यश आहे. मात्र, या यशाला जर खाजगी क्षेत्रातील आर्थिक संधींची जोड मिळाली नाही, तर हे सक्षमीकरण केवळ 'प्रतीकात्मक' (Symbolic) राहण्याची शक्यता नाकारता येत नाही.

राजकीय सक्षमीकरण विरुद्ध आर्थिक गळती

भारतातील सद्यस्थितीचा अभ्यास करताना एक विचित्र विरोधाभास दिसून येतो. एका बाजूला आपण लोकशाहीचे विकेंद्रीकरण करून वंचित घटकांना आणि महिलांना 'राजकीय सत्ता' देत आहोत, तर दुसरीकडे जागतिकीकरण आणि खाजगीकरणामुळे त्यांच्या हातातील 'आर्थिक सत्ता' (रोजगार) काढून घेत आहोत. या संघर्षाचे विश्लेषण खालीलप्रमाणे करता येईल:

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

सत्तेचे हस्तांतरण विरुद्ध संधीचा संकोच

- **राजकीय बाजू:** ७३ व्या आणि ७४ व्या घटनादुरुस्तीमुळे स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये महिलांना ५०% आरक्षण मिळाले. यामुळे सत्तेचे 'तळागाळापर्यंत' हस्तांतरण झाले. आज निर्णय प्रक्रियेत स्त्रियांचा शब्द महत्त्वाचा ठरत आहे.
- **आर्थिक बाजू:** त्याच काळात (१९९१ नंतर) सार्वजनिक क्षेत्रातील नोकऱ्यांचे प्रमाण घटले. खाजगीकरणामुळे ज्या क्षेत्रात पूर्वी आरक्षणाचे संरक्षण होते, ती क्षेत्रे आता 'ओपन मार्केट' झाली आहेत.
- **संघर्ष:** राजकीय पद मिळाले तरी, त्या पदाचा वापर करण्यासाठी लागणारी आर्थिक स्वायत्तता (Financial Autonomy) नसेल, तर ते पद केवळ 'नाममात्र' ठरते.

'प्रतिनिधित्व' (Representation) विरुद्ध 'कार्यक्षमता' (Efficiency)

- खाजगी क्षेत्र नेहमीच 'कार्यक्षमता' आणि 'गुणवत्ता' (Merit) यांचा हवाला देऊन आरक्षणाला विरोध करते.
- याउलट, स्थानिक स्वराज्य संस्थांमधील महिला आरक्षणाने हे सिद्ध केले आहे की, संधी मिळाल्यास स्त्रिया आणि उपेक्षित घटक अत्यंत प्रभावीपणे प्रशासन चालवू शकतात.
- जर राजकीय क्षेत्रात आरक्षण यशस्वी होऊ शकते, तर खाजगी क्षेत्रात ते 'अकार्यक्षम' ठरेल हा युक्तिवाद सामाजिक न्यायाच्या विरोधात आहे.

मध्यमवर्गीकरण आणि रोजगाराचे संकट

राजकीय आरक्षणामुळे उपेक्षित समाजातील एक नवीन 'राजकीय मध्यमवर्ग' तयार झाला आहे. मात्र, या वर्गातील पुढच्या पिढीला जेव्हा रोजगाराची गरज भासते, तेव्हा खाजगीकरणामुळे त्यांना आरक्षणाचे कवच मिळत नाही. यामुळे या समाजांत एक प्रकारची 'अस्वस्थता' निर्माण झाली आहे. खाजगी क्षेत्रात आरक्षणाची मागणी ही याच अस्वस्थतेतून निर्माण झालेली 'अस्तित्वाची लढाई' आहे.

महिलांवरील दुहेरी परिणाम

महिलांच्या बाबतीत हा संघर्ष अधिक तीव्र आहे. स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये निवडून आलेल्या महिलांना प्रशासकीय कामांसाठी आणि निवडणुकीसाठी स्वतःच्या पैशांची गरज भासते. जर सरकारी नोकऱ्यांमधील आरक्षण (आर्थिक गळतीमुळे) संपले, तर महिलांना आर्थिक पाठबळासाठी पुन्हा घरातील पुरुषांवर विसंबून राहावे लागेल. यामुळे राजकीय आरक्षण असूनही 'सरपंच-पती' सारख्या प्रथांना बळ मिळते.

निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत संशोधनाअंती असे दिसून येते की, भारतातील आरक्षण धोरण सध्या एका ऐतिहासिक वळणावर उभे आहे. संविधानाने दिलेले सामाजिक न्यायाचे आश्वासन पूर्ण करण्यासाठी केवळ राजकीय आरक्षण पुरेसे नाही.

- **विरोधाभासाचे वास्तव:** स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये महिलांना ५०% आरक्षण देऊन आपण त्यांना राजकीयदृष्ट्या सक्षम केले आहे, परंतु त्याच वेळी सार्वजनिक क्षेत्रातील खाजगीकरणामुळे त्यांच्या हक्काच्या रोजगाराच्या संधी (Economic Opportunity) हिरावल्या जात आहेत.
- **संवैधानिक गळती:** 'आरक्षणाची गळती' ही केवळ नोकऱ्यांची घट नसून ती सामाजिक लोकशाहीचे अस्तित्व धोक्यात आणणारी प्रक्रिया आहे. खाजगी क्षेत्राचा विस्तार होत असताना तिथे आरक्षणाचे कवच नसल्यामुळे दलित, आदिवासी आणि महिलांचे आर्थिक सक्षमीकरण खुंटले आहे.
- **अपूर्ण सक्षमीकरण:** जोपर्यंत राजकीय सत्तेला आर्थिक स्वावलंबनाची जोड मिळत नाही, तोपर्यंत महिलांचे नेतृत्व 'सरपंच-पती' सारख्या पितृसत्ताक दबावाखालीच राहील. खाजगी क्षेत्रात आरक्षणाची मागणी ही केवळ रोजगारासाठी नसून ती मानवी सन्मान आणि समान संधीसाठीची गरज आहे.

शिफारशी (Recommendations)

संशोधनाच्या निष्कर्षांच्या आधारे, आरक्षणाची उपयुक्तता टिकवण्यासाठी खालील शिफारशी सुचवण्यात येत आहेत:

१. खाजगी क्षेत्रात 'विविधता धोरण' (Diversity Policy): शासनाने खाजगी कंपन्यांसाठी केवळ 'नफा' हेच ध्येय न ठेवता, 'सामाजिक विविधता निर्देशांक' (Social Diversity Index) लागू करावा. ज्या कंपन्या आपल्या मनुष्यबळात महिला आणि उपेक्षित घटकांना प्रमाणानुसार स्थान देतील, त्यांना विशेष कर सवलती किंवा सरकारी कंत्राटांमध्ये प्राधान्य द्यावे.

२. कंत्राटी व बाह्यस्रोत (Outsourcing) कामात आरक्षण: आज अनेक सरकारी कामे खाजगी कंत्राटदारांमार्फत केली जातात. अशा कंत्राटी कामांमध्येही आरक्षणाचे नियम पाळणे कायदेशीररित्या अनिवार्य करावे, जेणेकरून 'आरक्षणाची तांत्रिक गळती' थांबवता येईल.

३. महिला लोकप्रतिनिधींसाठी 'आर्थिक सक्षमीकरण निधी': स्थानिक स्वराज्य संस्थांमधील महिलांना केवळ पद देऊन न थांबता, त्यांना स्वतंत्रपणे निर्णय घेण्यासाठी 'विशेष मानधन' किंवा 'व्यवसाय प्रशिक्षण' द्यावे. यामुळे त्या आर्थिकदृष्ट्या स्वावलंबी होऊन कोणाच्याही दबावाशिवाय कार्य करू शकतील.

४. कौशल्य विकास आणि कॉर्पोरेट सांगड: आरक्षित प्रवर्गातील तरुण आणि महिलांच्या कौशल्याचा विकास करून त्यांना खाजगी क्षेत्राच्या गरजांनुसार तयार करण्यासाठी 'पब्लिक-प्रायव्हेट पार्टनरशिप' (PPP) मॉडेल अंतर्गत प्रशिक्षण केंद्रे उभारावीत.

५. घटनात्मक दुरुस्तीची गरज: बदलत्या आर्थिक पर्यावरणात आरक्षणाची व्याप्ती केवळ 'सार्वजनिक' क्षेत्रापुरती मर्यादित न ठेवता, ती 'खाजगी' क्षेत्रापर्यंत वाढवण्यासाठी संविधानात आवश्यक त्या दुरुस्त्या किंवा विशेष कायदे करण्याबाबत राष्ट्रीय स्तरावर चर्चा व्हावी.

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

संदर्भ सूची

१. आंबेडकर, बी. आर. (१९४७/२०१९): स्टेट्स अँड मायनॉरिटीज (States and Minorities), गौतम बुक सेंटर, दिल्ली.
२. गुरू, गोपाळ (२००५): रिझर्व्हेशन अँड कास्ट पॉलिटिक्स इन इंडिया, सेज पब्लिकेशन्स.
३. थरात, सुखदेव (२००९): ब्लॉक्ड वेज: डिस्क्रिमिनेशन अगेन्स्ट अनटचेबल्स इन मॉडर्न इंडिया, सेज पब्लिकेशन्स.
४. पळशीकर, सुहास (२०१४): भारतीय लोकशाही: जडणघडण आणि आव्हाने, डायमंड पब्लिकेशन्स, पुणे.
५. ओवेन, एम. एम. (२०११): द पॉलिटिक्स ऑफ रिझर्व्हेशन इन इंडिया, ऑक्सफर्ड युनिव्हर्सिटी प्रेस.
६. भारत सरकार (१९९२): ७३ वी आणि ७४ वी घटनादुरुस्ती कायदा (The Constitution 73rd and 74th Amendment Acts), कायदा मंत्रालय, नवी दिल्ली.
७. महाराष्ट्र शासन: पंचायत राज आणि महिला आरक्षण अंमलबजावणी अहवाल, ग्रामविकास विभाग.
८. नॅशनल सॅम्पल सर्व्हे ऑफिस (NSSO): पिरियॉडिक लेबर फोर्स सर्व्हे (PLFS) रिपोर्ट २०२०-२३ (रोजगार आणि खाजगीकरणाचे परिणाम).
९. नीती आयोग (NITI Aayog): ट्रान्सफॉर्मिंग इंडिया: स्ट्रॅटेजी फॉर न्यू इंडिया @७५.
१०. डफ्लो, एस्थर (२०१२): "Women Empowerment and Economic Development", Journal of Economic Literature.
११. देशपांडे, अश्विनी (२०११): "Affirmative Action in India", Oxford India Short Introductions.
१२. थरात, सुखदेव आणि न्यूमन, कॅथरीन (२००७): "In the Name of Globalization: Meritocracy, Productivity and the Hidden Language of Caste", Economic and Political Weekly (EPW).
1. www.epw.in
2. www.prsindia.org
3. www.sci.gov.in

ELIXIR

NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

पारिस्थितिकी परिवर्तन और जैव विविधता पर उसका प्रभाव

डॉ नीलम हेमंत वीरानी

पारिस्थितिकी परिवर्तन वर्तमान समय की एक गंभीर वैश्विक समस्या है, जिसका सीधा और गहरा प्रभाव जैव विविधता पर पड़ रहा है। मानव-जनित गतिविधियाँ—जैसे वनों की कटाई, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, जलवायु परिवर्तन और प्रदूषण—प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र को असंतुलित कर रही हैं। परिणामस्वरूप प्रजातियों का विलुप्तीकरण, आवासों का क्षरण, खाद्य-श्रृंखला का असंतुलन और आनुवंशिक विविधता में कमी जैसे मुद्दे इस समस्या को और गंभीर बनाते हैं जिसका नकारात्मक प्रभाव मानव जीवन, कृषि और अर्थव्यवस्था को भी प्रभावित करता है। अतः यह आवश्यक है कि पारिस्थितिकी परिवर्तन को नियंत्रित करने हेतु प्रभावी कदम उठाए जाएँ। संरक्षण, सतत विकास, प्रदूषण नियंत्रण, वृक्षारोपण तथा जन-जागरूकता के माध्यम से इस समस्या को कम किया जा सकता है। अतः यह आवश्यक है कि पारिस्थितिकी परिवर्तन और जैव विविधता के बीच के संबंध को गहराई से समझा जाए। इस शोध का उद्देश्य पारिस्थितिकी परिवर्तन के कारणों का विश्लेषण करना, जैव विविधता पर उसके प्रभावों का अध्ययन करना तथा इस समस्या के समाधान हेतु प्रभावी उपाय सुझाना है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह विषय न केवल वैज्ञानिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि मानव जीवन के सतत विकास और भविष्य की सुरक्षा के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। इस प्रकार,यह शोध-लेख पारिस्थितिकी परिवर्तन के प्रमुख कारणों, उससे उत्पन्न मुद्दों, जैव विविधतापर पड़ने वाले प्रभावों तथा इन समस्याओं के निवारण हेतु संभावित उपायों का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

संकेत चिन्ह:-

पारिस्थितिकी, जैव विविधता, औद्योगिक परियोजनाएँ, मानव-वन्यजीव, जीवों का विस्थापन, प्रजनन इनब्रीडिंग, अनुवांशिक विविधता, प्रजातियाँ l

पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem) जीवित और निर्जीव घटकों का एक जटिल, परस्पर-निर्भर तंत्र है, जो पृथ्वी पर जीवन को संतुलन प्रदान करता है। जैव विविधता—जिसमें पौधे, पशु, सूक्ष्मजीव और उनके आनुवंशिक रूप शामिल हैं—इसी तंत्र की आधारशिला है। हाल के दशकों में तीव्र विकास, जनसंख्या वृद्धि और प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन ने पारिस्थितिकी में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। इन परिवर्तनों का सबसे गंभीर दुष्परिणाम जैव विविधता में तीव्र गिरावट के रूप में सामने आया है, जो मानव जीवन और पृथ्वी की स्थिरता—दोनों के लिए खतरा है।

जैव विविधता हानि में विभिन्न प्रजातियों के विश्वव्यापी विलुप्त होने के साथ-साथ, स्थानीय खंडों में भी प्रजातियों के नुकसान का सामना करना पड़ता है। इससे जैविक विविधता को नुकसान होता है।

IUCN के अनुसार, मुख्य प्रत्यक्ष खतरे (और इस प्रकार जैव विविधता के नुकसान के कारण) ग्यारह श्रेणियों में आते हैं: आवासीय और वाणिज्यिक विकास; खेती की गतिविधियाँ; ऊर्जा उत्पादन और खनन ; परिवहन और सेवा गलियारे; जैविक संसाधन उपयोग; मानव घुसपैठ और गतिविधियां जो प्राकृतिक व्यवहारों को प्रदर्शित करने से निवास स्थान और प्रजातियों को बदलती हैं, नष्ट करती हैं, परेशान करती हैं; प्राकृतिक प्रणाली संशो1धन; आक्रामक और समस्याग्रस्त प्रजातियां, रोगजनक और जीन; प्रदूषण; विनाशकारी भूवैज्ञानिक घटनाएं, जलवायु परिवर्तन। एडवर्ड ओ. विल्सन ने जैव विविधता के नुकसान के

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

मुख्य कारणों के लिए HIPPO के संक्षिप्त नाम का सुझाव दिया, जो H निवास स्थान विनाश, I आक्रामक प्रजातियों, P प्रदूषण, Pमानव अति- जनसंख्या और O वर्हार्वेस्टिंग के लिए खड़ा है।

पारिस्थितिकी परिवर्तन के प्रमुख कारण (Key Drivers):-

1) वनों की कटाई और भूमि-उपयोग परिवर्तन :-

वनों की कटाई और भूमि-उपयोग में परिवर्तन पारिस्थितिकी परिवर्तन के सबसे प्रमुख कारणों में से एक है। बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कृषि विस्तार, आवास निर्माण, खनन, औद्योगिक परियोजनाएँ और सड़क-निर्माण तीव्र गति से हो रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप विशाल वन क्षेत्र नष्ट हो रहे हैं। वन किसी भी पारिस्थितिकी तंत्र के लिए रीढ़ की हड्डी के समान होते हैं, क्योंकि वे जैव विविधता को आश्रय, भोजन और संरक्षण प्रदान करते हैं। जब वनों का विनाश होता है, तो वहाँ निवास करने वाली अनेक प्रजातियाँ या तो विस्थापित हो जाती हैं या विलुप्ति की ओर बढ़ जाती हैं। भूमि-उपयोग परिवर्तन से प्राकृतिक आवास खंडित हो जाते हैं, जिससे जीवों की आवाजाही, प्रजनन और भोजन-प्राप्ति बाधित होती है। इसके अतिरिक्त, वनों की कटाई से मृदा अपरदन बढ़ता है, जल चक्र प्रभावित होता है और स्थानीय जलवायु में परिवर्तन होता है। यह स्थिति दीर्घकाल में पारिस्थितिक असंतुलन को जन्म देती है इसलिए हमें अधिक से अधिक वन लगाने चाहिए क्योंकि वन केवल पेड़ों का समूह नहीं, बल्कि जीवन को सहारा देने वाली एक जीवित प्रणाली हैं।

2) जलवायु परिवर्तन :-

जलवायु परिवर्तन केवल भविष्य की नहीं, बल्कि वर्तमान की सबसे बड़ी पारिस्थितिक चुनौती है।

जलवायु परिवर्तन पारिस्थितिकी परिवर्तन का एक व्यापक और वैश्विक कारण है, जिसका प्रभाव लगभग सभी पारिस्थितिक तंत्रों पर पड़ रहा है। औद्योगिक गतिविधियों और जीवाश्म ईंधनों के अत्यधिक उपयोग से वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा बढ़ रही है, जिससे वैश्विक तापमान में वृद्धि हो रही है। तापमान में यह वृद्धि h प्रजातियों के जीवन-चक्र, प्रजनन-प्रणाली और आवासीय सीमाओं को प्रभावित करती है। वर्षा-पैटर्न में अनियमितता के कारण कहीं सूखा पड़ता है तो कहीं बाढ़ आती है, जिससे पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ता है। चक्रवात, हीटवेव और ग्लेशियरों का पिघलना जैसी चरम मौसम घटनाएँ जैव विविधता के लिए गंभीर खतरा बन चुकी हैं। कई प्रजातियाँ इतने तीव्र परिवर्तन के अनुसार स्वयं को अनुकूलित नहीं कर पातीं और धीरे-धीरे समाप्त हो जाती हैं। जलवायु परिवर्तन का प्रभाव केवल प्राकृतिक तंत्र तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मानव समाज और उसकी आजीविका को भी प्रभावित करता है।

3) प्रदूषण :-

प्रदूषण आधुनिक विकास का एक गंभीर दुष्परिणाम है, जो पारिस्थितिकी और जैव विविधता दोनों के लिए अत्यंत हानिकारक सिद्ध हो रहा है। दूसरे शब्दों में कहना चाहे तो प्रदूषण वह मौन हत्यारा है, जो धीरे-धीरे प्रकृति की जीवन-शक्ति को समाप्त कर देता है। औद्योगिक अपशिष्ट, घरेलू कचरा, प्लास्टिक, कीटनाशक और रासायनिक उर्वरक वायु, जल और मृदा को प्रदूषित कर रहे हैं। जल प्रदूषण के कारण नदियों, झीलों और समुद्रों में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है, जिससे जलीय जीवों का जीवन संकट में पड़ जाता है। प्लास्टिक प्रदूषण समुद्री जीवों के लिए विशेष रूप से घातक है, क्योंकि वे इसे भोजन समझकर निगल लेते हैं। वायु प्रदूषण से पौधों की प्रकाश-संश्लेषण क्षमता घटती है और मानव स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है। मृदा प्रदूषण

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

से भूमि की उर्वरता कम होती है, जिसका सीधा असर कृषि और खाद्य-सुरक्षा पर पड़ता है। इस प्रकार प्रदूषण पारिस्थितिकी तंत्र की स्वाभाविक कार्यप्रणाली को बाधित करता है।

4) अति-शोषण (Overexploitation) :-

प्राकृतिक संसाधनों का अति-शोषण पारिस्थितिकी परिवर्तन का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण है। अवैध शिकार, अत्यधिक मछली-पकड़, वनों से लकड़ी और औषधीय पौधों का अनियंत्रित दोहन अनेक प्रजातियों की संख्या को तेजी से घटा रहा है। जब किसी संसाधन का उपयोग उसकी पुनःउत्पादन क्षमता से अधिक किया जाता है, तो वह संसाधन धीरे-धीरे समाप्त होने लगता है। अति-शोषण के कारण कई जीव प्रजातियाँ संकटग्रस्त हो चुकी हैं। समुद्री पारिस्थितिकी में अत्यधिक मछली-पकड़ से खाद्य-श्रृंखला असंतुलित हो रही है। वनों में अत्यधिक कटाई से न केवल जैव विविधता घटती है, बल्कि स्थानीय समुदायों की आजीविका भी प्रभावित होती है। किसी ने सच ही कहा है जब उपभोग लालच में बदल जाता है, तब विनाश अनिवार्य हो जाता है।

5)आक्रामक विदेशी प्रजातियाँ (Invasive Alien Species)

आक्रामक विदेशी प्रजातियाँ पारिस्थितिकी तंत्र के लिए एक गंभीर और अक्सर उपेक्षित खतरा हैं। ये प्रजातियाँ प्राकृतिक या मानवीय कारणों से एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में पहुँच जाती हैं और वहाँ की स्थानीय प्रजातियों के संसाधनों पर कब्जा कर लेती हैं। चूँकि इनका उस नए पर्यावरण में कोई प्राकृतिक शत्रु नहीं होता, इसलिए इनकी संख्या तेजी से बढ़ती है। परिणामस्वरूप स्थानीय प्रजातियाँ भोजन, स्थान और प्रजनन के अवसरों से वंचित हो जाती हैं। इससे जैव विविधता में गिरावट आती है और पारिस्थितिकी संतुलन बिगड़ जाता है। कई बार ये विदेशी प्रजातियाँ स्थानीय कृषि और जल-संसाधनों को भी नुकसान पहुँचाती हैं। यहां यह कहा जा सकता है कि विदेशी प्रजातियाँ मूक आक्रमणकारी हैं, जो बिना शोर किए जैव विविधता को क्षति पहुँचाती हैं। आक्रामक प्रजातियों का नियंत्रण कठिन और खर्चीला होता है, इसलिए यह समस्या दीर्घकालिक प्रभाव उत्पन्न करती है।

- पारिस्थितिकी परिवर्तन से उत्पन्न समस्याएँ :-

1. प्रजातियों का विलुप्तीकरण (Species Extinction) :-

एक प्रजाति का अंत, प्रकृति के एक पूरे अध्याय का अंत होता है। पारिस्थितिकी परिवर्तन का सबसे भयावह परिणाम विभिन्न जीव एवं वनस्पति प्रजातियों का विलुप्त होना है। जब वनों की कटाई, प्रदूषण या जलवायु परिवर्तन के कारण किसी प्रजाति का प्राकृतिक आवास नष्ट हो जाता है, तो वह प्रजाति नए वातावरण में स्वयं को ढाल नहीं पाती। दुर्लभ और स्थानिक प्रजातियाँ इस संकट से सबसे अधिक प्रभावित होती हैं। उदाहरण के लिए, कई वन्य प्राणी केवल विशेष भौगोलिक क्षेत्रों तक सीमित होते हैं, जहाँ परिवर्तन होते ही उनका अस्तित्व खतरे में पड़ जाता है। एक प्रजाति का लुप्त होना पूरी खाद्य-श्रृंखला को प्रभावित करता है। इससे पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता कमजोर हो जाती है l एक प्रजाति का अंत, प्रकृति के एक पूरे अध्याय का अंत होता है।''

प्रभाव :-

एक प्रजाति का विलुप्त होना कई अन्य प्रजातियों के अस्तित्व को भी संकट में डाल देता है, क्योंकि सभी जीव परस्पर निर्भर होते हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

2. आवासों का क्षरण और विखंडन (Habitat Loss and Fragmentation) :-

आवासों का क्षरण और उनका विखंडन पारिस्थितिकी असंतुलन का प्रमुख कारण है।जब आवास टूटते हैं, तब जीवन की निरंतरता भी टूटने लगती है। सड़क निर्माण, बांध परियोजनाएँ, खनन और शहरी विस्तार प्राकृतिक क्षेत्रों को जब छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँट देते हैं। इससे वन्य जीवों की स्वाभाविक आवाजाही बाधित होती है। उदाहरणस्वरूप, जंगलों के बीच सड़कों के निर्माण से कई जीव वाहन दुर्घटनाओं का शिकार हो जाते हैं। प्रजनन क्षेत्र नष्ट होने से जीवों की संख्या घटती जाती है। मानव-वन्यजीव संघर्ष भी बढ़ता है।

प्रभाव :-

जब आवास खंडित हो जाते हैं, तो जीवों की आवाजाही बाधित होती है और उनकी जनसंख्या धीरे-धीरे घटने लगती है।

3. आनुवंशिक विविधता में कमी (Loss of Genetic Diversity) :-

विविधता ही प्रकृति की सबसे बड़ी शक्ति है। किसी प्रजाति की संख्या घटने के साथ उसकी आनुवंशिक विविधता भी सीमित हो जाती है। सीमित जनसंख्या के कारण इनब्रीडिंग बढ़ती है, जिससे नई पीढ़ी कमजोर होती है। उदाहरण के रूप में, छोटे वन्य समूहों में रोग तेजी से फैलते हैं। आनुवंशिक विविधता की कमी से प्रजातियाँ जलवायु परिवर्तन या नई बीमारियों का सामना नहीं कर पातीं। इससे उनका दीर्घकालिक अस्तित्व संकट में पड़ जाता है।

प्रभाव :-

कम आनुवंशिक विविधता वाली प्रजातियाँ भविष्य के पर्यावरणीय परिवर्तनों का सामना नहीं कर पातीं।

4. खाद्य-श्रृंखला और खाद्य-जाल का असंतुलन (Food Chain Disruption) :-

प्रत्येक जीव किसी न किसी रूप में खाद्य-श्रृंखला से जुड़ा होता है। प्रकृति की श्रृंखला में एक कड़ी भी कमजोर हुई, तो पूरा तंत्र हिल जाता है। जब किसी स्तर की प्रजाति नष्ट होती है, तो पूरी श्रृंखला प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए, शिकारी जीवों की कमी से शाकाहारी जीवों की संख्या अनियंत्रित रूप से बढ़ जाती है, जिससे वनस्पति नष्ट होती है। कीट नियंत्रण बिगड़ने से कृषि को नुकसान होता है। यह असंतुलन पारिस्थितिकी को अस्थिर कर देता है।

प्रभाव :-

खाद्य-श्रृंखला का असंतुलन पारिस्थितिक तंत्र को अस्थिर कर देता है और मानव खाद्य-सुरक्षा को भी खतरे में डालता है।

5. पारिस्थितिक सेवाओं में गिरावट (Decline in Ecosystem Services) :-

पारिस्थितिकी तंत्र मानव को निःशुल्क सेवाएँ प्रदान करता है अर्थात प्रकृति की सेवाएँ मुफ्त हैं, पर उनका विकल्प नहीं।

जैसे स्वच्छ जल, परागण और उपजाऊ मिट्टी। पारिस्थितिकी परिवर्तन से ये सेवाएँ कमजोर हो रही हैं। उदाहरणस्वरूप, परागण करने वाले कीटों की कमी से फसल उत्पादन घट रहा है। मृदा क्षरण से भूमि की उर्वरता कम होती है। इससे मानव जीवन की गुणवत्ता प्रभावित होती है।

प्रभाव

इन सेवाओं की कमी से कृषि-उत्पादन घटता है, जल संकट बढ़ता है और जीवन-गुणवत्ता प्रभावित होती है।

6. जलीय पारिस्थितिकी पर संकट (Aquatic Ecosystem Stress) :-

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

नदियों, झीलों और समुद्रों में प्रदूषण और तापमान वृद्धि जलीय जीवन के लिए गंभीर खतरा है। प्रवाल भित्तियों का क्षरण समुद्री जैव विविधता को नुकसान पहुँचाता है। उदाहरण के लिए, तापमान बढ़ने से प्रवाल श्वेतता (Coral Bleaching) की समस्या बढ़ रही है। मछलियों की संख्या घटने से तटीय समुदायों की आजीविका प्रभावित होती है।

इसलिए तो कहा जाता है जल में जीवन है, और जीवन के बिना जल भी अर्थहीन है।

प्रभाव :-

मत्स्य-पालन, तटीय समुदायों की आजीविका और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र बुरी तरह प्रभावित होते हैं।

7. मानव-समाज पर सामाजिक-आर्थिक प्रभाव :-

पारिस्थितिकी परिवर्तन का प्रभाव सीधे मानव समाज पर पड़ता है। क्योंकि जब प्रकृति संकट में होती है, तब मानव भी सुरक्षित नहीं रहता। आदिवासी और ग्रामीण समुदाय, जो प्रकृति पर निर्भर होते हैं, सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। प्राकृतिक आपदाओं की तीव्रता बढ़ने से जान-माल की हानि होती है। स्वास्थ्य समस्याएँ भी बढ़ती हैं। इससे गरीबी और पलायन में वृद्धि होती है।

प्रभाव :-

गरीबी, पलायन और सामाजिक असमानता बढ़ती है, जिससे सतत विकास के लक्ष्य प्रभावित होते हैं।

8. सांस्कृतिक और नैतिक संकट :-

कई संस्कृतियाँ प्रकृति से गहराई से जुड़ी होती हैं। जैव विविधता के ह्रास से पारंपरिक ज्ञान और प्रकृति-आधारित जीवन-शैली कमजोर होती है। उदाहरणस्वरूप, औषधीय पौधों से जुड़ा पारंपरिक ज्ञान लुप्त हो रहा है। इससे पर्यावरणीय नैतिकता में गिरावट आती है। सच ही है,

प्रकृति से दूरी, संस्कृति की जड़ों को कमजोर कर देती है।"

प्रभाव :-

मानव-प्रकृति संबंध केवल उपयोगितावादी बन जाता है, जिससे संरक्षण की भावना कमजोर पड़ती है।

उपरोक्त सभी मुद्दे यह स्पष्ट करते हैं कि पारिस्थितिकी परिवर्तन एक बहुआयामी संकट है। इसका प्रभाव केवल पर्यावरण तक सीमित नहीं, बल्कि मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष पर पड़ता है। अतः समन्वित, दीर्घकालिक और संवेदनशील समाधान अपनाना अनिवार्य है।

पारिस्थितिकी परिवर्तन का जैव विविधता पर प्रभाव (Impacts)

4.1 स्थलीय जैव विविधता पर प्रभाव

वनों के नष्ट होने से स्तनधारी, पक्षी और कीट प्रजातियाँ प्रभावित होती हैं। परागण करने वाले कीटों की कमी से कृषि-उत्पादन भी घटता है।

4.2 जलीय जैव विविधता पर प्रभाव

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

नदियों, झीलों और महासागरों में प्रदूषण व तापमान वृद्धि से मछलियाँ, प्रवाल (Corals) और सूक्ष्मजीव प्रभावित होते हैं। प्रवाल-भित्तियों का क्षरण समुद्री जैव विविधता के लिए गंभीर खतरा है।

4.3 मानव जीवन पर प्रभाव

जैव विविधता की हानि से खाद्य-सुरक्षा, आजीविका (विशेषकर आदिवासी/मत्स्य समुदाय), स्वास्थ्य और आपदा-प्रतिरोधक क्षमता कमजोर होती है।

4.4 आर्थिक प्रभाव

पर्यटन, मत्स्य-उद्योग और कृषि पर नकारात्मक असर पड़ता है, जिससे स्थानीय व राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाएँ प्रभावित होती हैं।

- समस्या के निवारण हेतु उपाय (Mitigation & Solutions)"

1) संरक्षण और पुनर्स्थापन (Conservation & Restoration) :-

प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्रों के संरक्षण और क्षतिग्रस्त क्षेत्रों के पुनर्स्थापन से जैव विविधता की रक्षा संभव है।

राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभयारण्यों और जैवमंडल आरक्षित क्षेत्रों का विस्तार प्रजातियों को सुरक्षित आवास प्रदान करता है।

Nature can heal itself, if we give it the space and time. संरक्षण दीर्घकालिक और वैज्ञानिक योजना पर आधारित होना चाहिए। इससे मानव और प्रकृति के बीच सह-अस्तित्व को बढ़ावा मिलता है।

पुनर्स्थापन (Restoration) के अंतर्गत वनों की पुनर्रोपण, आर्द्रभूमियों का पुनर्जीवन और नदी-तटों का संरक्षण शामिल है। इससे विलुप्तप्राय प्रजातियों की संख्या में पुनः वृद्धि देखी जा सकती है।

उदाहरण के लिए, क्षतिग्रस्त मैंग्रोव वनों का पुनर्स्थापन तटीय क्षेत्रों को चक्रवातों से बचाता है।

संरक्षण से पारिस्थितिक सेवाएँ—जैसे जल-शोधन और कार्बन-अवशोषण—मजबूत होती हैं।

यह जैविक संतुलन को पुनः स्थापित करने में सहायक है।

2 सतत विकास और संसाधन-प्रबंधन (Sustainable Development & Resource Management) :-

सतत विकास का उद्देश्य वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के संसाधनों को सुरक्षित रखना है।

सतत कृषि पद्धतियाँ—जैसे जैविक खेती और फसल-चक्र—मृदा और जल की गुणवत्ता बनाए रखती हैं।

सतत वानिकी में नियंत्रित कटाई और पुनर्रोपण पर बल दिया जाता है। मत्स्य-पालन में कोटा प्रणाली से मछली संसाधनों का अति-शोषण रोका जा सकता है। प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग पर्यावरणीय दबाव को कम करता है।

उदाहरणतः, जल-संरक्षण तकनीकों से भूजल स्तर में सुधार होता है।

यह आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बनाता है। क्योंकि Sustainability is not a choice, it is a responsibility.

सतत प्रबंधन से ग्रामीण आजीविकाएँ भी सुदृढ़ होती हैं।

यह दृष्टिकोण दीर्घकालिक पारिस्थितिक स्थिरता सुनिश्चित करता है।

3)जलवायु परिवर्तन का शमन (Climate Change Mitigation) :-

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

जलवायु परिवर्तन जैव विविधता के लिए सबसे बड़े खतरों में से एक है। क्योकि The climate crisis is also a biodiversity crisis.

नवीकरणीय ऊर्जा—जैसे सौर और पवन—का उपयोग कार्बन उत्सर्जन को घटाता है।

ऊर्जा-दक्ष तकनीकें जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता कम करती हैं।

वृक्षारोपण और वन-संरक्षण कार्बन-सिंक को मजबूत बनाते हैं।

शहरी क्षेत्रों में हरित अवसंरचना तापमान को नियंत्रित करती है।

उदाहरण के लिए, सौर ऊर्जा से चलने वाली सिंचाई प्रणालियाँ उत्सर्जन घटाती हैं। शमन उपाय जैव विविधता को जलवायु जोखिमों से बचाते है l ९अंतर-क्षेत्रीय सहयोग से प्रभावी शमन संभव है।

यह उपाय पारिस्थितिक और मानवीय सुरक्षा दोनों के लिए आवश्यक हैं।

4) प्रदूषण नियंत्रण (Pollution Control):-

प्रदूषण जैव विविधता के क्षरण का प्रमुख कारण है।

प्लास्टिक और विषैले रसायनों के उपयोग में कमी से पारिस्थितिक तंत्र सुरक्षित रहते हैं। अपशिष्ट-प्रबंधन प्रणालियाँ—जैसे पुनर्चक्रण—प्रदूषण भार घटाती हैं।

स्वच्छ प्रौद्योगिकी उद्योगों को पर्यावरण-अनुकूल बनाती है।

जल-शोधन संयंत्र जलीय जीवन की रक्षा करते हैं।

उदाहरणतः, एकल-उपयोग प्लास्टिक पर प्रतिबंध से समुद्री जीवों को लाभ होता है।

प्रदूषण नियंत्रण से मानव स्वास्थ्य भी सुधरता है।

कड़े मानक और निगरानी आवश्यक हैं।

यह उपाय पारिस्थितिक पुनर्जीवन को गति देते हैं।

5)नीति, कानून और सामुदायिक भागीदारी (Policy, Law & Community Participation):-

मजबूत नीतियाँ और कानून जैव विविधता संरक्षण की रीढ़ हैं। क्योकि Conservation succeeds when communities lead. संरक्षण कानूनों का सख्त पालन अवैध शिकार और कटाई को रोकता है।

स्थानीय समुदायों की भागीदारी संरक्षण को व्यवहारिक बनाती है।

आदिवासी ज्ञान पारिस्थितिक प्रबंधन में अत्यंत उपयोगी है।

सह-प्रबंधन मॉडल से संरक्षण और आजीविका दोनों सुदृढ़ होते हैं।

उदाहरणतः, सामुदायिक वन-प्रबंधन से वन आवरण बढ़ा है।

नीतिगत समन्वय से संसाधन संघर्ष कम होते हैं।

पारदर्शिता और जवाबदेही आवश्यक है।

यह दृष्टिकोण सामाजिक न्याय को भी बढ़ावा देता है।

6)शिक्षा और जागरूकता (Education & Awareness) :-

Education is the most powerful tool for conservation.पर्यावरण शिक्षा संरक्षण की नींव है।

विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में पर्यावरण अध्ययन जागरूक नागरिक बनाता है।

जन-जागरूकता अभियान व्यवहार परिवर्तन को प्रेरित करते हैं।

ELIXIR
NATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
ISSN 2277-3428 Vol. 9/No. 9

मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म सूचना प्रसार में सहायक हैं।
स्थानीय स्तर पर प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रभावी सिद्ध होते हैं।
उदाहरणतः, जल-संरक्षण पर अभियान से पानी की खपत घटती है।
जागरूकता से उपभोक्ता पर्यावरण-अनुकूल विकल्प चुनते हैं।
युवा पीढ़ी की भागीदारी निर्णायक है।
यह उपाय दीर्घकालिक संरक्षण संस्कृति विकसित करते हैं।

निष्कर्ष (Conclusion):-

उपरोक्त सभी मुद्दे और उप-मुद्दे यह स्पष्ट करते हैं कि पारिस्थितिकी परिवर्तन बहुआयामी संकट है। जैव विविधता पर इसका प्रभाव केवल प्राकृतिक नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी गहरा है। यदि वर्तमान प्रवृत्तियाँ जारी रहीं, तो इसके दुष्परिणाम मानव सभ्यता के लिए गंभीर होंगे। इन मुद्दों की गंभीरता को समझते हुए समन्वित और दीर्घकालिक समाधान अपनाना अनिवार्य है। संरक्षण, सतत विकास, प्रभावी नीतियाँ और सामुदायिक सहभागिता—इन चार स्तंभों पर आधारित रणनीति ही इस संकट का समाधान है। जैव विविधता का संरक्षण केवल पर्यावरणीय आवश्यकता नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व की शर्त है। अतः

पारिस्थितिकी का संकट केवल प्रकृति का संकट नहीं, बल्कि मानव सभ्यता के अस्तित्व की चेतावनी है।
जैव विविधता की रक्षा करना आज विकल्प नहीं, बल्कि भविष्य को सुरक्षित रखने की अनिवार्य शर्त है।

संदर्भ (References):-

1) UNEP (2022). Global Environment Outlook.
2) IPBES (2019). Global Assessment Report on Biodiversity and Ecosystem Services.
3) IUCN (2021). Red List of Threatened Species.
4) Odum, E. P. (2017). Fundamentals of Ecology. Cengage Learning.
5) Millennium Ecosystem Assessment (2005). 6) Ecosystems and Human Well-being.
भारतीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय (MoEFCC). भारत की जैव विविधता रिपोर्ट।

डी.डी नगर विद्यालय एवं जूनियर कॉलेज,
महल, नागपुर.
ईमेल - neelamhemantvirani123@gmail.com

INSTRUCTION TO AUTHORS

- **Submission of article**
  We are currently publishing original research works, review papers, short communications only, in science, Humanities and Commerce, authors may submit the articles to drvarshavaidya1972@gmail.com or vijaycharde@rediffmail.com or directly to the editor in both soft copy and hard copy.

- **File type**
  Authors should submit the articles only in MS-word 2003 or 2007 format, no other format will be acceptable. If case of equations it should be converted by using MS Office equation editor and pasted as image at proper place. All equations should be grouped or may be prepared using equation editor software.

- **File size**
  Article should not exceed more than 10 pages.

- **Language**
  Language of the articles should be only in English in case science discipline and English, Marathi and Hindi in case of Humanities and Commerce.

- **Font type**
  English
  Articles should be typed in 1.25 spacing with the following font pattern
  Font type : Times New Roman
  Size :
  Title : 14 points and Bold
  Subtitles : 12 points and Bold
  Content of article : 12 points

- **Marathi/Hindi**
  Font type : Krutidev 055
  Size :
  Title : 20 points and Bold
  Subtitles : 14 points & Bold
  Content of article : 14 points

- **Submission order**
  The following order should be strictly followed while submitting the article
  Front page : Title of article, authors' names, authors' institutional or college address and email Id.
  Authors' names should be written as Vijay N. Charde, Varsha V. Vaidya and Girish S. Katkar, Authors name should be followed by abstract of about 200-300 words exactly conveying the summary of the paper.

- **Keywords (at least 5 words).**
  Titles : Titles should be in 'Capitalize Each Word' form.

- **References**
  All references should be arranged in the order as they appear in the text.
  References should at the end of the paper as per following format.
  Charde V.N., Author 2, and Author 3 (2011). Article title, Name of Journal, Vol. No. (Issue No.), pp 12-15.
  Books: U. Krjekar and V.J. Dhote, (2011), "Wise to be a fool", Selected Satires of R.P. Saxena - Translated by Dr. Kiran Jhamb, Edition, Publishers Name, 55-60. Web pages : Write complete web page address.

- **Reference Citation**
  Reference No. should be given at appropriate place where it is referred and mentioned as serial no in the order as they appear in the text e.g. (1) or if references are more than one (1,2).

- **Tables, Images and graphs**
  Tables should prepared in MS word format. Do not insert table in image format. Tables should be placed at the place where it is referred. Title of the table should be bold and in sentence format. Images should be pasted at the end of the paper if images are big but try to maintain the appropriate size or if images are small than paste the images at the place where they are referred. The quality of images should be superior, Graph should be prepared in MS office format and placed at place where it appeared.

ISSN - 2277 - 3428

ELIXIR

Peer Reviewed
National Journal of
Multidisciplinary
Research

March-26